

महेश चन्द्र 'सरल'

नील कमल प्रकाशन,
७२, हज़रत गंज, लखनऊ।

प्रकाशक—
त्रिलोकी नाथ सेठ,
नील कमल प्रकाशन
७२, हज़रत गंज, लखनऊ।




प्रथमावृत्ति १९५४
मूल्य ३॥)

मुद्रक—
गोपीनाथ सेठ
नवीन प्रेस, दि

आ

लो

क

की

स्मृ

ति

को

'मरुभूमि' में न केवल कथा-वस्तु का विस्तार किया गया है अपितु उसमें एक तर्क, एक विचार और एक प्रवाह उपस्थित करने का प्रयत्न किया गया है। लेखक का अपना एक दृष्टिकोण है, जिसके सहारे मनोवैज्ञानिक ढंग से समाज के कुछ चित्र प्रस्तुत किये गए हैं। चरित्र, राष्ट्र और समाज की रीढ़ है, लेखक की इसमें पूर्ण आस्था है। इसके दिग्दर्शन में उसे कहाँ तक सफलता मिली है, इसे पाठकों पर छोड़ा जा रहा है।

'मरुभूमि' के सारे पात्र काल्पनिक हैं किन्तु यह सही है कि वे आज के समाज में अपनी कहानी लेकर स्वतः ही सम्मुख आ जाते हैं।

श्री श्रीकृष्ण अग्निहोत्री से प्रूफ़ देखने में सहायता मिली है, इसलिए उनका आभार—

# मरुभूमि



उस दिन सवेरे से ही बादल छाए थे, जभी वर्षा होने लगे। सुमति ने खिड़की खोलकर एक बार दूर तक देखा। एक प्रकार का परेशान करने वाला गहरा अँधकार जैसे चारो ओर से बढ़ता आ रहा था। वह भयभीत हो उठी। ठीक ऐसा ही अँधकार एक घने आवरण को लपेटे उसके जीवन के चारों ओर सर्प की कुण्डली की भाँति आकर बैठ गया है। जिस प्रकार ये पहाड़-से काले बादल सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रों को अपने में समेट लेते हैं और प्रकाश की एक किरण के लिए मनुष्य व्याकुल हो उठता है, ठीक वैसा ही सुमति के जीवन का प्रकाश पहले मन्द हुआ, फिर टिमटिमाता हुआ जैसे सदा के लिए बुझ गया और वह दुर्गम-पथ पर ठोकरें खाने के लिए छोड़ दी गई।

उसने खिड़की मजबूती से बन्द कर दी, फिर कमरे की बत्ती जलाकर अँगीठी के पास आ बैठी। कोयले की आग के सामने जैसे उसने एक आराम की साँस ली, पर एक ओर से निकलते हुए धुँए ने उसे निश्चेष्ट

कर दिया। वह भी भीतर-ही-भीतर सुलग रही थी। धुआँ उठ रहा था, पर ठण्डी आह बनकर। बाहर-भीतर सर्वत्र एक घनीभूत पीड़ा उसे व्यथित कर रही थी, जिसके दर्द से वह कराह तो सकती थी, किन्तु उसका उपचार नहीं कर सकती थी और करना भी चाहती तो शायद यह उसके बस के बाहर की बात थी।

घड़ी ने तीन का घण्टा बजाया। कमरे की नीरवता में फिर उसकी टिक-टिक सुमति को जैसे अपने कानों के ठीक पास होती जान पड़ी। उसने घड़ी की ओर उन्मन होकर देखा। वर्षों से यह घड़ी एक परिधि के भीतर रात-दिन घण्टे बजाती रहती है, जो सेकेण्ड, मिनट और घण्टे बनकर मनुष्य के जीवन को अपने साथ लिए चलते हैं। मनुष्य का विशाल जीवन एक घड़ी के आश्रित है और···। अचानक उसका ध्यान टूट गया। कोयले की एक चिनगारी चटख कर उसके ऊपर आ गिरी थी। सोचने लगी वह—यह सब क्या है, जिसे बाँधकर वह आज जैसे रुँधकर रह जाना चाहती है? 'कुछ-नहीं, केवल एक गति-समय की दौड़' उसने मन-ही-मन कहा, फिर उठकर घड़ी की चाल रोक दी।

अँगीठी में कोयले लाल होकर चमक रहे थे। सुमति को लगा कि वे उसे निराश्रित पाकर हँस रहे हैं। ये जड़-पदार्थ भी मनुष्य का परिहास कर सकते हैं; यह उसकी समझ में आज ही आया। कल तक घड़ी की टिक-टिक और जलते कोयले कुछ नहीं कहते थे, जैसे उसके साथी बनकर रहते आये थे, किन्तु आज जब विश्वास का पत्र आ गया है कि···कि वह उससे सदैव के लिए सम्बन्ध-विच्छेद कर रहा है, तो उसके ये साथी भी जैसे विश्वास की भाँति उसका घोर तिरस्कार और तीव्र-उपेक्षा करने लगे हैं। उसे स्मरण हो आया—एक कवि ने अपनी कविता में बड़ी करुणा के साथ यह व्यक्त किया था कि दुख के समय में मनुष्य की छाया भी उसका साथ न देकर उल्टे उसका निरादर करने लगती है।

उसकी आँखों में आँसू छलक आए। अभी दो घण्टे पूर्व जब पोस्टमैन विश्वास का पत्र दे गया था, तो वह उसे पढ़ने के बाद जी-भरकर रोई

थी, किन्तु अपनी निराश्रिता के स्थान पर अपने नारीत्व के मर्मस्थल पर आघात किए जाने से। विश्वास ने निर्दयता के साथ सब-कुछ पत्थर के शब्दों में लिखा था, जिनसे मर्माहत और त्रस्त होकर सुमति ने अपने दुर्भाग्य पर आँसू तो बहाए ही थे, साथ ही निराशा के अतल गर्त में डूबती-उतराती हुई ऊँच-नीच भी सोच गई थी। उसके सारे कटाक्ष विष-भरे बाणों से भी अधिक सांघातिक थे, और सब के अन्त में लक्ष्य था हर्ष की ओर। वही हर्ष जिसने अपना सर्वस्व उसे अर्पण कर दिया था और जो आज भी मानसिक अशान्ति के साथ-साथ अपना कर्तव्य भी निभा रहा है।

सुमति एक बार फिर उस सबको पढ़ लेना चाहती है। कितने निर्दय हाथों और क्रूर हृदय से वह पत्र लिखा गया होगा, इसकी कल्पना उसे सहज ही हो आई। वह उठकर गई और मेज़ की दराज़ से पत्र निकाल लाई। पहले जब उसने उसे पढ़ा था और जिसे पढ़कर वह भावातिरेक से अशान्त हो उठी थी, उस समय उसकी लड़की बिनी जाग रही थी और जिसने उसे रोता पाकर स्वयं भी रोना प्रारम्भ कर दिया था। विश्वास से उसकी बिनी ही अकेली जीवित सन्तान थी। उसे सुमति बड़ी कठिनाई से अपने को प्रकृतिस्थ करने के बाद सँभाल सकी और भय दिखाकर कहीं सुला सकी। अब वह अकेली है। बिनी न तो उसके आँसू ही देख सकती है और न उसके विचारों के उतार-चढ़ाव से मुख पर बनती-बिगड़ती व्यथा की लकीरें।

और पत्र इस प्रकार था—सुमति, एक अरसे से मैं तुम्हें एक लम्बा पत्र लिखना चाहता था, पर न जाने क्यों रुक जाता रहा? कुछ फ़ुरसत भी कम ही मिल पाती है। तुम्हें शायद पता होगा मैंने एक होटल खोल लिया है। उसका मालिक-मैनेजर सब मैं ही हूँ। अच्छा चल रहा है और न भी चलता तो भी मुझे कम-से-कम रहने को ठिकाना तो चाहिए ही। अकेले के लिए वहाँ काफ़ी जगह रहती है। परिवार का बन्धन तुमने जोड़ना शायद चाहा ही नहीं। क्यों, अपने हृदय पर हाथ रखकर देखना और अपनी आत्मा के साथ विश्वासघात मत करना। मैं कहीं पर भी तुम्हारे भीतर

ढूँढ़े मिलता हूँ ? वह हर्ष···हाँ वही मिर्जापुर वाला, जो तुम्हारे···जाने दो। उसे अब लिखने से लाभ ही क्या है ? वह आया था मुझे समझाने और सो भी तुम्हारी ओर से। अपनी सफाई देता रहा। एकदम निर्दोष बन गया, बिलकुल बेगुनाह।

बिन्नी तुम्हें ज्यादा परेशान तो नहीं करती ? मुझे तो वह बेचारी जानती भी न होगी। हर्ष उसकी कई बातें बताता रहा था। बीच-बीच में बड़े उत्साह से कह उठता था—बिनी आपकी बड़ी समझदार लड़की है। बड़ी तेज है और मैं सोचने लगा कि बिनी क्या सचमुच मेरी लड़की है ? खैर, यह तुम जानो।

तुम्हारी पढ़ाई कैसी चल रही है ? खाने-पीने की तंगी तो शायद नहीं रहती होगी ? हर्ष का पत्र आया था कि मैंने इधर तुम्हें रुपया नहीं भेजा है। मुझ से ज़्यादा वह तुम्हारे लिए व्यग्र रहता है। मुझे विश्वास है कि उसने खर्चे के लिए रुपए भेज दिए होंगे और यह तुम्हारा सौभाग्य है कि दो व्यक्ति तुम्हारे लिए चिन्तित रहते हैं।

एक बात जानती हो सुमति ? ओस की बूँदें, जो देखने में मोती-सी श्वेत और मनोमुग्धकारी लगती हैं, मनुष्य की प्यास नहीं बुझा सकी हैं। आज हर्ष वही ओस की बूँद है। वह तुम्हारे लिए सब-कुछ कर सकता है, पर जो कुछ मैं तुम्हें दे सकता हूँ, वह तुम उससे नहीं पा सकतीं सुमति, कभी नहीं। उस बार जब मैंने चोरी से तुम दोनों का फ़ोटो, जो एक साथ खींचा गया था और जिसे पति-पत्नी के रूप में खींचकर फोटोग्राफर ने नम्रता से झुककर 'थैंक्स' कहा होगा, देख लिया था, तो तुम कितनी लज्जित हो गई थीं, याद है न ? उस दिन तुम फिर बेहद परेशान-सी रहीं। मेरे सामने आना भी नहीं चाहा। बातें करने और मेरी ओर देखने की कौन कहे ? पर मैंने सब-कुछ जानकर भी तुमसे कुछ नहीं कहा। इसलिए कि तुम्हें दुख होता उससे। और मैं तुम्हें दुखी नहीं करना चाहता था।

पर आज सब-कुछ स्पष्ट कर देना चाहता था, हालाँकि कर नहीं रहा हूँ। सुमति, जीवन का मार्ग-ऊबड़-खाबड़, पगडण्डियों और दुर्गम स्थानों

के बीच से निकला है। उस कहानी को तुम्हें सुनाना नहीं चाहता। बड़ी कड़वी, कुनैन से भी ज्यादा बदज़ायका है वह। तुम कहोगी कि हर्ष का ज़िक्र मैं बार-बार क्यों लाता हूँ ? पर मेरी अपनी मजबूरी वहीं पर आ टिकती है, जहाँ पर तुम्हारी दुर्बलता। हर्ष ने मुझे मेरा कर्तव्य दिखाया है, या यों समझो कि मुझे तुम्हारी ओर से निश्चिन्त रहने का संदेशा भेजा है। बात साधारण है, पर सुनने के बाद धैर्य मत खो देना। मैं अब तुम्हें—ठीक से पढ़ लेना, हर्ष के लिए........।

विनी को मेरी ओर से प्यार कर लेना—कभी का—विश्वास।

सुमति ने पत्र को दो बार फिर पढ़ा। दुर्भाग्य उसके ऊपर कितना क्रूर अट्टहास कर रहा था। उसने जलते हुए कोयलों की ओर देखा, जो अभी तक वैसे ही उसकी ओर हँस रहे थे। 'मेरी मौत के साथी' उसने कुछ उतावलेपन से कहा, फिर पत्र के टुकड़े-टुकड़े कर आग में रख दिए। पहले धुआँ उठा और सफ़ेद काग़ज़ काला होकर सिमटने लगा, फिर लपटों के बीच जल गया। सब कुछ समाप्त हो गया। विश्वास का अंतिम पत्र जलाते समय उसे तनिक भी हिचकिचाहट नहीं हुई। मानो वह केवल एक रद्दी टुकड़ा-मात्र था, जिसका उसके जीवन से कोई भी सम्बन्ध नहीं था—कोई लगाव नहीं था।

बाहर तेज हवा चलने लगी थी, जो पेड़ों को झकझोरे दे रही थी। हल्की-हल्की बूँदें भी पड़ने लगीं थीं। अकस्मात ही उसे कँपकपी सी आ गई और वह तेज आग के पास बैठी रहकर भी जैसे सिहर उठी। पहले सोचा चाय के लिए पानी रख दे, किन्तु मन की निराशा ने साथ नहीं दिया। अकेले पेट के लिए ही....नहीं, वह अकेली कहाँ है ? विनी जो है। उसकी प्यारी विनी, जो उसके कारण ही अपने पिता का स्नेह खो बैठी है। बेचारी का भविष्य न जाने क्या होगा ?

वह उठी। एक बार साहस कर फिर खिड़की खोलकर जो देखा तो हवा के साथ बूँदे उसके मुख पर आ पड़ीं। बालों की लटें और अंचल उड़ने लगा। फिर भी वह वैसी ही निश्चल गति से खड़ी रही, मानो इसी

क्षण से वह दृढ़ता लाने का अभ्यास करने लगी हो। वह इस प्रकार वहाँ कब तक खड़ी रही, इसका पता उसे नहीं चला। जब बिनी रोती हुई आई और उससे लिपट गई, तब उसे अपनी स्थिति का ज्ञान हो सका। वह भीग चुकी थी। बिनी को अपनी गोद में उठाकर उसने खिड़की फिर बन्द कर दी और उसे लेकर चारपाई पर जा लेटी। ऊपर से कम्बल डाल लिया। भीगी धोती बदलने का उसका मन नहीं हुआ। बिनी को अपनी सम्पूर्ण-शक्ति लगाकर उसने अपने शरीर से चिपका लिया।

## २

हर्ष मिर्ज़ापुर से बनारस जाना चाहता था। सुमति से बिना मिले दो महीने हो गए थे। इस बीच वह एक बार लखनऊ आया था और विश्वास से मिला था। सुमति को लेकर ही उस दिन उन दोनों के बीच बातें होती रही थीं जिसका परिणाम यह हुआ था कि विश्वास ने सुमति से वैवाहिक सम्बन्ध-विच्छेद करने का पत्र उसे लिख दिया था; पर हर्ष को इसका पता तब भी न चला, जब वह उस बरसते पानी में भीगता हुआ सुमति के यहाँ पहुँचा था।

बाहर बरामदे में पैर रखने के बाद उसने कमरे के दरवाजे से लगकर अन्दर की आहट ली, फिर सब कुछ एकदम शान्त और निस्पन्द-सा पाकर धीरे से थपकी दी। सुमति सचेत हो गई। कम्बल से सर को बाहर निकालते हुए उसने दरवाजे की ओर देखा। ऐसे आँधी पानी में भी कोई आ सकता है, वह यह नहीं सोच सकी। विश्वास अपना अन्तिम पत्र भेज चुका था। इस जीवन में अब उसके आने की आशा उसे नहीं थी। हर्ष अवश्य आ

सकता है, किन्तु वह सदैव आने के पूर्व पत्र डाल देता है। समय कम होने पर वह तार भी भेज देता है।

वह ऊँच-नीच सोचती जा रही थी। सब जानते हैं कि वह इस घर में केवल बिनी के साथ रहती है। तब...वह जैसे भयातुर होकर काँप उठी, जिससे एक बार तो चारपाई तक हिल गई। वह अपनी दुर्बलता और हीन विचारों पर विजय प्राप्त करने का साहस एकत्रित करने लगी। उसी समय हर्ष ने फिर एक साथ कई बार दरवाजा खटखटाया।

सुमति उठकर बैठ गई। उसे विश्वास हो गया कि जो कोई भी बाहर खड़ा दरवाजा खटखटा रहा है, उससे बिना मिले नहीं जायगा। और तब बाध्य होकर उसने धीरे से पूछ लिया—'कौन ?' और फिर साँस रोककर उत्तर सुनने की प्रतीक्षा करने लगी।

'मैं हूँ, हर्ष।' हर्ष ने प्रश्न के ठीक बाद उत्तर दे दिया।

और समय होता तो सुमति हर्ष के नाम से दौड़ पड़ती और दरवाजा खोलकर हँसती हुई उसका स्वागत करती, किन्तु इस समय उसके नाम ने भी जैसे एक विकर्षण उत्पन्न कर दिया था। बड़ी कठिनाई से वह दरवाजा खोलने जा सकी। अभी-अभी जो मर्म-व्यथा उसे घेरे थी, वह हर्ष के आ जाने से दूर नहीं हो सकी। जिस पत्र को कुछ देर पहले उसने आग में जला दिया है, वह उसे लेकर ही लिखा गया था। विश्वास भली-भाँति जानता है कि सुमति के जीवन में कहीं पर भी ऐसा कुछ नहीं है, जो हर्ष से छिपा हो। इसीलिए उसने सब-कुछ स्पष्ट कर देना अभीष्ट समझकर उस कहानी की समाप्ति कर दी थी। जो कुछ उसे ग्राह्य नहीं है, उसके बन्धन में जकड़े रहना भी तो मनुष्य का स्वभाव नहीं है।

पर हर्ष...हर्ष ठीक इसके विपरीत सोचा करता है। उसके लिए सुमति पीड़िता, उपेक्षिता और निराश्रिता है जो अपने पति के जीवित होते हुए भी गृहिणी का सम्मान नहीं पा सकी है और जो कदाचित् आकाश में बिखरे हुए उन असंख्य नक्षत्रों में से एक है जो अपने साथी का सम्बल खोकर एक दिन टिमटिमाता हुआ पृथ्वी पर आ गिरता है—बुझा हुआ

और ममता-विहीन, जिसके लिए किसी की आँख से आँसू के दो बूँद भी नहीं गिरते और इस सबका उत्तरदायी वह विश्वास को ठहराता है, केवल विश्वास को, जो उसकी दृष्टि में उच्छृंखल है। उसने जान-बूझकर, सब-कुछ समझते हुए सुमति से विवाह किया था, शायद इसीलिए कि उसे अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाने के लिए छोड़ दे।

सुमति और हर्ष—दोनों के बीच केवल एक बन्द दरवाज़ा है। सुमति विषाद की मूर्ति बनी एक ओर धीरे से चटखनी खोल रही थी और दूसरी ओर बाहर तेज हवा और वर्षा से आक्रान्त हर्ष सुमति को देखने के लिए आतुर, अधीर और बेचैन हो रहा था।

दरवाज़ा खोलकर सुमति पीछे हट आई, फिर बुझे हुए स्वर में निरुत्साहित-सी बोली—'अरे, हर्ष तुम...? ऐसे आँधी-पानी में...? आओ, भीग गए हो।'

हर्ष सुमति को एक-टक कुछ क्षण देखता रहा। बड़ी दुबली बीमार-सी लगी वह उसे। दरवाज़ा खुलने से तेज हवा के झोंके कमरे में घुसकर उत्पात मचाने लगे थे। यहाँ तक कि सुमति की साड़ी उड़ने लगी और खुले बाल उड़कर मुहँ पर आ गए।

हर्ष ने बिना दरवाज़ा बन्द करते हुए कहा—'तूफ़ान आया है। कई पेड़ रास्ते में गिरे पड़े हैं।'

सुमति ने न चाहते हुए भी मुस्कराकर कह दिया—'तुम्हीं अपने साथ इस तूफ़ान को लाए हो। प्रकृति पर भी वश है तुम्हारा।'

'हाँ सुमति', वातावरण की प्रखरता और ठण्ड से काँपता हुआ हर्ष बोला—'पर इसे जन्म तुम्हीं ने दिया है। बाहर-भीतर सर्वत्र एक हाहाकार—एक भीषण द्वन्द्व चल रहा है, जिसने हमें-तुम्हें ही क्या, विश्वास से लेकर सारे समाज को जैसे अपने में लपेट लिया है और हम सब रुई के हल्के-हल्के फाहों और काग़ज़ के टुकड़ों और सूखे पत्तों की भाँति उसके साथ उड़ते चल रहे हैं। जहाँ कहीं अन्त होगा वहीं जाकर रुकेंगे। तब हममें से कोई विशाल सागर में तैरता हुआ दिखाई पड़ेगा, कोई पहाड़ से जा

टकराएगा और कोई ऊँचे शिला-खण्ड से गिरता हुआ प्राणी-सा निरवलम्ब और निस्सहाय अपने अन्त की भयातुर कल्पना से चीखता-चिल्लाता रहेगा।'

सुमति सब-कुछ समझकर भी अनजान-सी बनकर उसका मुख देखने लगी।

हर्ष ने अपना भीगा और ठण्डा हाथ बढ़ाकर उसके कन्धे पर रख दिया, फिर घड़ी की ओर देखकर बोला—'चाय वाय नहीं मिलेगी कुछ? उस सब पर क्या सोचने लगीं? ठण्ड लग रही है। कपड़े दो बदलने के लिए। यथार्थ में विश्वास करो सुमति, जो कठोर सत्य है। कल्पना मनुष्य को घुला देती है, उसे घुट-घुटकर मार डालती है।' फिर इधर-उधर दृष्टि दौड़ाकर पूछा—'अरे हाँ, बिनी कहाँ है? उसे तो भूल ही गया था।'

सुमति ने बैठे मन से उत्तर दिया—'बिनी सो रही है। चाय तैयार कर रही हूँ अभी। और देखो, दूसरे कमरे में कपड़े हैं, जो चाहना निकालकर पहन लेना।'

हर्ष दूसरे कमरे में जाने के पूर्व कुछ देर के लिए अँगीठी के पास जा बैठा। सुमति चाय के लिए पानी लेने चली गई थी। अँगीठी में दहकते हुए कोयलों के ऊपर कहीं-कहीं जले हुए काग़ज़ पड़े थे जो कोयलों की आँच से लाल हो गए थे और शेष हवा के सहारे उड़कर सारे कमरे में बिखर गए थे। हर्ष उनकी ओर देखने लगा और तब तक देखता रहा, जब तक सुमति पानी लेकर नहीं लौट आई। कैटिली को अँगीठी पर रखती हुई बोली वह—'अरे, अभी वैसे ही बैठे हो, कपड़े नहीं बदले?'

हर्ष निगूढ़ भाव से बोला—'इन कोयलों को देखो। काग़ज़ के टुकड़ों को इन्होंने जलाकर कैसा रूप दे दिया है? अब ये अस्तित्वहीन हैं, क्यों न सुमति? पर काग़ज़ में मनुष्य से भी बढ़कर भाव-प्रवणता होती है, यह मैं जानता हूँ। क्षण में प्रलय का-सा परिवर्तन लाने की शक्ति इन काग़ज़ के टुकड़ों में है, जिसमें अंकित शब्द जीवित और साकार होकर सम्मुख खड़े हो जाते हैं।'

सुमति निरर्थक भाव से कैटिली ठीक करती रही, बोली नहीं। पर कोयलों की आँच उसके मुख के निचले भाग पर पड़ रही थी जिससे होठों से लेकर कपोलों का नीचा भाग और गरदन से लेकर वक्ष का ऊपरी खुला भाग लाल होकर चमकने लगा था। हर्ष उस सबकी ओर निर्निमेष दृष्टि से देखने का प्रयत्न करता हुआ फिर पूछ उठा—'इन काग़ज़ के टुकड़ों को तुमने क्यों जला दिया सुमति ? क्या था इनमें ?'

सुमति के सामने एक मजबूरी की दीवार जैसे क्षण-भर में खड़ी हो गई। वह हर्ष को कैसे बता सके कि जिस कागज के टुकड़ों को उसने जलाया है, उनमें उसका भविष्य निहित था, जो काल से भी क्रूर और असह्य था और जिसका कारण केवल हर्ष था, वही हर्ष जो उसके सम्मुख बैठा उससे ही यह सब पूछ रहा है। पर वह उस सबको बता नहीं पाएगी। विश्वास तो उसे छोड़ ही चुका है, अब केवल हर्ष—। वह मुँह छिपाकर उठकर जाने का प्रयत्न करने लगी।

हर्ष ने उसे रोक लिया। अपनी ओर खींचकर जो उसके मुख को निहारा तो लगा कि सुमति रो रही है। उसने जैसे अंगार छू जाने के सदृश सुमति को छोड़ दिया। सुमति की आँखों में आँसू—हर्ष स्थिति को समझना चाहता था। वह उसके प्रश्नों पर मौन क्यों है ? गम्भीर होकर उसने पूछा—'क्यों सुमति, ये आँसू···आखिर बताना तो होगा ही। विश्वास ने कुछ लिखा है ?'

सुमति ने धोती के छोर से आँखें साफ़ करते हुए कहा—'सभी कहते और लिखते हैं हर्ष, किसी को रोक ही कौन सका है ? कभी-कभी ऐसा लगने लगता है कि अपने-आपसे भी चिढ़ हो जाती है। यह आँसू कोई विषाद के नहीं हैं, केवल आत्म-प्रतारणा से निकल आए हैं। मैं ही क्या इन्हें कोई भी रोक नहीं सकता। बातें बहुत कुछ कहनी-सुननी हैं हम लोगों को। अभी तो रहोगे न, एक-दो दिन। न चाहते हुए भी तुम्हें बताना पड़ेगा। अच्छा, अब कपड़े बदल लो। चाय का पानी खौलने लगा है।'

हर्ष विस्मित हो सुमति को नीचे से ऊपर तक देख गया। पल-भर में

उसमें इतना परिवर्तन कैसे सम्भव हो सका, इस पर उसे सहसा विश्वास नहीं आ रहा था। सुमति अब अकेले रहते-रहते परिस्थिति पर काबू पाने की अभ्यासी हो गई है।

वह उठकर दूसरे कमरे में चला गया और कपड़े बदलकर फिर अँगीठी के पास आ बैठा। सुमति चाय बनाने का पूरा सामान ला चुकी थी। बोली—'बिनी को और जगा लूँ।'

हर्ष चाय का डब्बा हाथ में उठाकर अनावश्यक ही उसे देखने लगा।

सुमति जब बिनी को जगाकर लाई तो वह हर्ष को देखती रही। उसे पहचानकर सुमति की गोद से उतरकर हर्ष की गोद में आ बैठी। वह उसे प्यार और स्नेह से दुलराने लगा।

सुमति बोली—'भूलती नहीं तुम्हें बिनी? हाँ, साबूदाना के पापड़ सवेरे के भुने रक्खे हैं। खाओगे न?'

हर्ष ने सर हिलाकर स्वीकृति दे दी।

फिर चाय पीते-पीते हर्ष ने अपना विश्वास से मिलने जाना तथा पत्र-व्यवहार करना ब्यौरेवार बताया, जिसे सुनकर सुमति केवल इतना कह सकी—'वह सब ही क्या मुझे उससे भी आगे क्या होगा, वह भी मालूम हो गया है।'

हर्ष इस दुःख और निराशाभरी वार्ता को नहीं चलाना चाहता था, पर न जाने क्यों उसे वही प्रसंग उठाना पड़ा? जो सब प्रकार से अप्रिय और अग्राह्य है, वही स्वीकार करना पड़ता है। मनुष्य विधि के हाथ का एक खिलौना-मात्र है, जिसे जिधर घुमा दिया जायगा, उधर ही वह घूमकर जैसे एक यन्त्र की भाँति चालित हो जायगा। अपना निजत्व, अपनी मान-प्रतिष्ठा और मर्यादा सब मानो अस्तित्वहीन और निस्सार हैं।

बाहर अब मूसलाधार वर्षा होने लगी थी और बीच-बीच में बादलों की गड़गड़ाहट के साथ बिजली कौंध उठती थी। सुमति हर्ष के लिए चारपाई बिछाती हुई बोली—'थके होगे, आराम करो। मैं खाना बनाने का प्रबन्ध करती हूँ। शाम होने को आ गई है। लगता है आज ही सारी

बरसात होकर रहेगी।'

हर्ष को सर्दी लग रही थी। वह भी ओढ़-लपेटकर बैठना चाहता था। सुमति के कहने के बाद आनाकानी किए बिना चारपाई पर अपने शरीर को चारों ओर से ढककर वह तकिए के सहारे बैठ गया और बिनी को पास ही बिठा लिया। सुमति बाहर-भीतर आ-जाकर रसोई का प्रबन्ध करने लगी।

## ३

हर्ष जब मिर्जापुर से चला था तो सोचता था कि दूसरे दिन तक वापस लौट भी आएगा किन्तु सुमति के यहाँ आकर उसे रुक जाना पड़ा। अपने रुक जाने का कारण स्पष्ट न करते हुए उसने अपने कार्यालय को तार से सूचना दे दी कि वह विलम्ब से लौटेगा। सम्पादकीय टिप्पणियाँ वह अलग डाक से भेज रहा है जिससे पत्र निकलने में देर न हो। हर्ष एक साप्ताहिक पत्र का सम्पादक है। रात-दिन एक कर वह किसी प्रकार अपना पत्र चला रहा है। इसी में वह सन्तुष्ट है। केवल एक सी गति पर केन्द्रित जीवन उसे प्रिय है जिसके बाहर यदि वह किसी को स्मरण कर लेता है, तो वह एक सुमति ही है। शेष सारा विश्व उसके पत्र में समाया रहता है। प्रेस-इन्टरव्यू, सम्पादकीय टिप्पणियाँ, व्यंग्य-नोट्स के अतिरिक्त कभी-कभी लेखों, कहानियों और कविताओं के अभाव में उसे अपनी रचनाएँ लिखकर देनी पड़ती हैं। यह उसका साप्ताहिक-पत्र ही जैसे उसका स्वाभिमान है, जिस दिन यह बन्द हो जायगा, उसी दिन मानो उसका भी जीवन समाप्त हो जायगा।

और हर्ष अपने इस साप्ताहिक-पत्र 'दर्पण' की प्रतियाँ नियमित रूप से सुमति को भेजता रहता था।

दो दिन बाद जब वर्षा का वेग रुका और पेड़ों की पत्तियाँ भारी होकर झुक गईं, तब हर्ष ने वापस जाने की तैयारी की। सुमति ने इन दिनों में हर्ष से सभी प्रकार की बातें कीं, किन्तु कहीं पर भी यह स्पष्ट नहीं होने दिया कि विश्वास ने उससे सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया है। न जाने क्यों वह इस रहस्य को गोपनीय ही रखना चाहती थी। हर्ष से बढ़कर उसके निकट इस संसार में दूसरा कोई है—विश्वास भी नहीं रहा था—जो उसका पति है। कई बार उसने चाहा कि वह हर्ष के बार-बार पूछने पर विश्वास के पत्र की घटना सुना दे, किन्तु वह ऐसा कुछ नहीं कर सकी। यह ठीक था कि हर्ष ने ही उसे बल देकर जीवन से संघर्ष करने के लिए खड़ा किया है। आज से नहीं पिछले पाँच वर्षों से, जब से उसकी भाग्य रेखा विश्वास के साथ जोड़ी गई है, वह निरन्तर एक मानसिक द्वन्द्व के बीच रहती आई है।···पर इन सारी बातों के सोचने के लिए बहुत समय है उसके पास। इस समय तो हर्ष जा रहा है, फिर जाने कब आए? उससे दो बातें ठीक से कर लेनी चाहिए उसे।

हर्ष बिनी को गोद में लिए था और सुमति कुरसी पर बैठी रूमाल सी रही थी। कमरे की खुली खिड़की से आकाश में रुँधे हुए बादल स्पष्ट दिखाई पड़ रहे थे। हर्ष मुँह में पान भरे पहले खिड़की से बाहर देखता रहा, फिर सुमति के पास आकर बोला—'एक बात मैं अभी से कहे रखता हूँ सुमति, आगे चलकर भूल मत जाना। बिनी को मैं अपने साथ रखना चाहता हूँ। कुछ बड़ी और हो लें, तब किसी दिन आकर ले जाऊँगा। विश्वास से इसके लिए पूछ लेना।'

सुमति ने अपने कार्य में व्यस्त रहते हुए उत्तर दिया—'इसमें किसी से पूछने की जरूरत नहीं पड़ेगी। पर अपने बच्चे होंगे उनके रहते बिनी की आवश्यकता को मैं नहीं समझ सकी।'

हर्ष जोर से हँसने का प्रयत्न करता हुआ बोला—'मेरे बच्चे···? अरे

पहले यह पूछो कि इस जिन्दगी में विवाह भी होगा? बिनी बड़ी अच्छी लड़की है, सुना सुमति! जो कहता हूँ उस पर विश्वास करो। मैं इसे अपनी 'लाइन' में डालना चाहता हूँ—'जर्नलिस्ट' बनाऊँगा।'

'बिनी को तुम जो चाहना बनाना,' सुमति ने दाँत से डोरा काटते हुए कहा—'पर ब्याह क्यों नहीं होगा, यह तो सुनूँ जरा।'

'इस 'क्यों' का उत्तर मैं देना चाहकर भी नहीं दे सकूँगा।' हर्ष बिनी के कपोलों को प्यार से थपथपाते हुए कहने लगा—'तुम जानती हो सुमति, मैंने पत्रकार का जीवन बिताने का निश्चय इसीलिए किया है कि मेरा 'दर्पण' मेरे लिए ही नहीं, सबके लिए दर्पण बन सके। तुमने उसके इसी अंक में प्रकाशित कहानी 'मरुभूमि' को शायद नहीं पढ़ा है। उसे मैंने ही लिखा है पर छद्मवेशी नाम से। पढ़कर अपनी राय लिखना। तुम्हारे 'क्यों' का उत्तर भी उसी में मिलेगा। मेरा निश्चित मत है सुमति कि जब जीवन में रसोद्रेक न हो सके और गति-शून्यता चारों ओर से घुटकर नैराश्य बिखेर दे, तो मनुष्य को वैवाहिक-सुख की कल्पना केवल मृग-मरीचिका-मात्र समझ पड़ेगी। उसे तब गृहस्थी का ताना-बाना नहीं बुनना चाहिए। किसी का जीवन सर्वनाश करने का छल यदि वह करता है, तो उससे बड़ा दूसरा अपराध वह और नहीं कर सकता। यह सब स्वस्थ-मन और आह्लाद-भरे हृदय की आवश्यकता है, जब रोम-रोम से यौवन की अरुणाई प्रकट होकर अपनी अतृप्ति के लिए उद्दाम रूप धारण कर ले। पर जहाँ दीप ही बुझा है वहाँ धुएँ को देखकर यह आशा कभी न करे कि राख के भीतर चिनगारी भी हो सकती है।'

सुमति कुरसी छोड़ उठकर खड़ी हो गई। रूमाल पर हर्ष का नाम कोने पर उसने रंगीन रेशमी डोरे से निकाल दिया था, उसे हर्ष की ओर बढ़ाते हुए उसने इस प्रकार उसकी ओर देखा मानो यह सब जो उसने अभी कहा है, केवल एक भुलावा-मात्र है—शब्दों की अभिव्यञ्जना। जिसमें तथ्य और सचाई कहीं पर भी नहीं है। कवि, लेखक और पत्रकार जिन भाव-प्रवण और हृदयग्राही रचनाओं से पाठक को स्तम्भित और चकित कर देता है, वे

सब कितनी निर्मूल और भावना-हीन बन जाती हैं, जब गहराई में बैठकर उनका मंथन किया जाता है—थोथी और एकदम निस्सार और निष्प्राण। आज हर्ष अपने पक्ष में भले ही कुछ कह ले पर उसमें कितना स्थायित्व है, यह समय आने पर ज्ञात हो सकेगा। एक दिन था हर्ष से उसका विवाह होने वाला था, फिर दूसरा दिन वह भी आया जब विश्वास उसे ब्याह ले गया और अब वे दिन हैं जब वह विवाहिता होकर परित्यक्ता है। विश्वास कहता है कि उसे हर्ष के लिए उसने मुक्त कर दिया है और हर्ष आजीवन अविवाहित रहना चाहता है। दो व्यक्ति हैं जो धरातल पर कहीं-न-कहीं अपना पैर जमाए हैं, पर वही एक ऐसी है, जिसके पैर नहीं टिक पाते। शून्य में जैसे वह उड़ी जा रही है और नीचे अथाह सागर में गिर पड़ने का भय उसे खाए जा रहा है।

उसने फिर अपनी दृष्टि बिनी पर फैलाते हुए कहा—'अब तो लिखने के साथ-साथ कहने भी बहुत-कुछ लगे हो—पर सब कुछ उलझा-सा। लाओ 'मरुभूमि' अभी तुम्हारे सामने ही पढ़े लेती हूँ। मेरे पास वैसे समझने की शक्ति नहीं रहेगी। अभी तुम्हारा सहारा है।'

हर्ष ने घड़ी की ओर देखा। गाड़ी का समय निकट था। बोला—'इस समय नहीं सुमति मेरे पीछे पढ़ना। गाड़ी का भी समय हो रहा है। जाना मुझे जरूरी है। हाँ, बिना बोले आजकल प्रगति नहीं। पर सोचता हूँ अब कि तुमसे क्यों वही व्यवहार कर बैठा? मुझे ग़लत मत समझना सुमति, बिनी की क़सम है। और देखो, पढ़ाई न रुके। विश्वास से मैं कहता जाऊँगा कि तुम्हें सारी सुविधाएँ देता रहे और फिर मैं तो हूँ ही।' कहकर उसने बिनी को कई बार स्नेह से चूमकर सुमति की गोद में दे दिया।

सुमति की नारी ने उसे एक ललकार फिर दी—विश्वास जब तुझे छोड़ चुका है और वह भी हर्ष के कारण तो यह सब उसे बता देने में क्या आपत्ति है? वह विश्वास से मिलेगा, तेरी ओर से पैरवी करेगा और तुझे रुपया भेजने के लिए कहेगा। विश्वास इस सबसे क्या अपना मत बदल देगा? नहीं, वह तो इसमें रस लेगा। जब मन चाहेगा तुझे व्यथित करने के लिए

व्यंग्य-बाणों से भरा पत्र भेज देगा। वह हँसेगा और तू कुढ़ेगी, मूर्ख नारी, हर्ष जा रहा है। सब-कुछ स्पष्ट कर दे। कह दे कि अब तू ही उसका सब-कुछ है इसलिए कि तेरे कारण—तेरे लिए ही उसका परित्याग हुआ है। और····।

हर्ष ने अपना चमड़े का बैग हाथ में उठा लिया था और अब वह दरवाजा पार कर रहा था। सुमति ने कहना चाहा—विश्वास से तुम न मिलना हर्ष, उन्होंने मुझे···। पर वह ओंठ चलाकर रह गई। शब्द गले से बाहर नहीं निकले और हर्ष उसे एक बार मन भरकर देख लेने के बाद मुँह फेर कर चला गया। सुमति की आँखों से आँसू टप-टपकर गिरने लगे। सामने बिजली के तार पर दो पक्षी बैठे थे, उनमें से एक उड़ गया। दूसरा अपने पंख फड़-फड़ाकर रह गया, जैसे किसी ने बाँध लिया हो। बेचारा पक्षी—अकेला और बिछुड़ा हुआ।



विश्वास ने शरणार्थी बस्ती में अपना होटल खोल रखा था। नई बनी सरकारी इमारत उसे शरणार्थी तेजासिंह के नाम से मिल गई थी। रुपया उसने केवल अपना लगाया था और यह तय हुआ कि सारा खर्च निकाल कर जो रुपया बचे उसे दोनों बराबर-बराबर बाँट लें। इमारत साफ-सुथरी और सीमेन्ट की थी। ऊपर हवादार कमरे थे जिनमें से एक में विश्वास स्वयं रहता था। उसी में उसने अपना मैनेजर का दफ़्तर खोल रखा था और दूसरे सामने वाले कमरे में तेजासिंह ने अपना अधिकार जमा रखा था। उसके परिवार में एक लड़की और थी—पूरी जवान लड़की—जिसे

वह अपनी बेटी कहता था। उसका नाम हरबंस था। तेजासिंह और हरबंस दोनों को उर्दू के उपन्यास और कहानियाँ पढ़ने का बेहद शौक था। हर महीने उन्हें जो कुछ अपने हिस्से का मिलता था, उसमें उनकी गुज़र मजे से हो जाती थी और हरबंस के फ़ैशन के कपड़ों के अतिरिक्त कई उर्दू की मासिक पत्रिकाएँ और दो-एक उपन्यास जरूर खरीदे जाते। कभी-कभी ऐसा भी होता कि तेजासिंह हरबंस के साथ विश्वास के कमरे में आ बैठता और अपने पंजाब की घटनाएँ सुनाया करता। विश्वास ने इधर सिगरेट पीना शुरू कर दिया था। तेजासिंह सिगरेट से नफ़रत करता था, पर विश्वास के धन के सामने वह इस अच्छे सौदे के लिए केवल सिगरेट को लेकर झगड़ा नहीं करना चाहता था। वह रंगमंच के एक अभिनेता के रूप में नाटकीय ढंग से ऐसी घटनाओं का ही वर्णन करता जो उससे सम्बन्धित होतीं और जिनकी पुष्टि वह बीच-बीच में हरबंस से कराता जाता।

और इस होटल का नाम रखा गया था मदन होटल। विश्वास या तेजासिंह किसी से कहीं पर भी इस नाम का सामंजस्य नहीं था, पर न जाने क्यों विश्वास ने बिना किसी से सलाह किए अपनी मर्ज़ी से 'मदन' नाम का उपयोग कर डाला। मदन होटल उस सारी बस्ती में अकेला आधुनिक ढंग का होटल था जहाँ उस शहर के लोग भी आ जाते थे। हरबंस उस होटल के लिए एक आकर्षण अवश्य थी, किन्तु उसे किसी ने होटल में आने वालों के साथ किसी भी प्रकार का सम्पर्क स्थापित करते नहीं देखा था। वह दिन में बस्ती में अपनी परिचित स्त्रियों में बैठी रहती। तेजासिंह उसका विवाह करेगा या नहीं, इस पर विश्वास ने विचारा अवश्य, पर तेजासिंह से पूछा नहीं कभी। हाँ वह यह जरूर सोचा करता कि उसके यहाँ इतनी बड़ी लड़की घर में बिठाए रखना महान् अपराध है—सामाजिक और नैतिक अपराध, जिसके कारण लड़की का पिता अपना सर उठाकर नहीं चल सकता।

उस दिन विश्वास खाली बैठा था। हिसाब कर चुकने के बाद आराम-

कुर्सी पर पैर फैलाकर बैठने और सिगरेट के लम्बे-लम्बे कश खींचने की उसकी आदत बन गई थी। वहाँ से वह सामने सड़क और दूसरी ओर तेजासिंह के कमरे की ओर बारी-बारी से देखा करता। और तब जाने-अनजाने उसकी दृष्टि हरबंस पर पड़ जाती। कभी वह उसे गाते हुए पाता, कभी उपन्यास पढ़ते हुए और कभी शृंगार करते हुए। हरबंस परदा नहीं करती थी। उसे वह 'मैनेजर साहब' कहकर पुकारती और एक-दो बार उसने यह भी जानने का प्रयत्न किया कि वह क्या अकेला ही है? यदि हाँ, तो विवाह क्यों नहीं किया और क्या करने का इरादा भी नहीं है? और यदि नहीं, तो घरवाली कहाँ है, उसे साथ क्यों नहीं रखता? विश्वास ने इस सबका उत्तर उसे नहीं दिया। विषय परिवर्तित कर उसे और बातों में लगा दिया था।

तेजासिंह सवेरे की गाड़ी से कानपुर चला गया था। कमरे में हरबंस अकेली थी। विश्वास ने सिगरेट का धुआँ उड़ाते हुए उसके कमरे की ओर देखा। खिड़की में पड़े रंगीन परदे को ऊपर डाले हरबंस एक मासिक पत्रिका पढ़ रही थी और आराम से निश्चिन्त होकर उसका पढ़ने में तल्लीन होने का जो भाव था, वह विश्वास को ठीक वैसा लगा जैसा कि सिनेमा की अभिनेत्रियों का दिखाया जाता है, या आजकल के आर्टिस्ट मासिक पत्रिकाओं के भड़कीले और उत्तेजक आवरण-पृष्ठ बनाते हैं। हरबंस की ओर निरन्तर देखते-देखते वह सुमति से उसकी तुलना करने लगा। सुमति उसकी विवाहिता पत्नी, उसे एक दबी, संकुचित और पीड़ा और नैराश्य से भरी स्त्री लगी, जब कि हरबंस, स्वस्थ, चंचल और गतिवान थी, जो स्वच्छन्द पक्षी की भाँति मस्त और बेफिकर थी। फिर उसे हर्ष का ध्यान आ गया। वह न जाने उस मरी-मरी-सी लड़की के लिए क्यों दीवाना है? कहीं पर भी तो आकर्षण नहीं है उसमें? अंग-प्रत्यंग सब···कुछ नहीं—जैसे एक जीवित शव। उसने ठीक किया जो ऐसी स्त्री से अपना पीछा छुड़ा लिया। हर्ष उसे लेकर रहे। हरबंस की मादक मोहकता को वह भला कहाँ पा सकती है? और यह सब विचारते-विचारते वह उत्तेजित हो उठा।

हरबंस से रसीली बातें करने के लिए उसका मन छटपटाने लगा।

उसने एशट्रे को मेज पर एक स्थान से दूसरे स्थान पर दो-तीन बार ज़ोर से रखा, पर उसकी खटपट हरबंस का ध्यान पत्रिका से नहीं हटा सकी। विश्वास ने इसके बाद अपनी मेज़ खींचकर इधर-उधर की, उससे भी हरबंस ने मुड़कर उसकी ओर नहीं देखा। विश्वास ने तब एकदम अपनी मेज़ के सारे रजिस्टर और लोहे का स्केल पृथ्वी पर गिरा दिया। इससे उत्पन्न शब्द से हरबंस की मुद्रा बदली और उसने सर उठाकर विश्वास की ओर देखा।

विश्वास एकदम निर्जीव और मौन-सा बनकर कुरसी पर पड़ रहा। उसका सारा शरीर शिथिल और ढीला-सा लगने लगा। उसने अपना हाथ एक ओर गिरा दिया, जिसमें अँगुलियों के बीच में दबी अधजली सिगरेट थी। हरबंस पत्रिका एक ओर फेंककर उठकर दौड़ आई। विश्वास यहाँ तक तो अपने प्रदर्शन में सफल हो गया, पर जब हरबंस उसके सामने आ गई और उसे एकटक निहारने लगी तो उससे रहा नहीं गया और वह मुस्कराकर अपनी आँखें खोलकर उठ बैठा।

हरबंस उसका यह खेल, जो उसने केवल उसे अपने पास बुलाने के लिए ही रचा था, पल-भर में समझ गई, फिर हँसकर रजिस्टर मेज़ पर रखती हुई बोली—'आप भी खूब हैं मैनेजर साहब ? मुझे यहाँ तक बुलाने के लिए आपने बड़ा दिमाग लगाया। कहिए क्या जरूरत आ पड़ी मेरी ?'

'जरूरत, जरूरत कोई खास नहीं', विश्वास सिगरेट का धुआँ छोड़ता बोला—'मैंने सोचा कि, अरे आप बैठिए न ? कि आपको एक जरूरी बात जब याद आ गई है तो बता दूँ। और वह यह कि आप हिन्दी पढ़ना सीख लीजिए। अब तो रहना आपको यू० पी० में ही है, जहाँ सरकार ने इसे राज्य-भाषा मान लिया है। आप चाहें तो मैं आपको पढ़ा सकता हूँ। खाली समय रहता ही है। हिन्दी में कई बड़े सुन्दर उपन्यास निकले हैं और पत्रिकाओं की तो गिनती ही नहीं। आपकी उर्दू में वे ही मोहब्बत और प्यार के उपन्यास हैं—रूमानी, जिनसे···आप समझीं न

मेरा मतलब ? मैं तो एक प्रेस खोलकर कहानियों की पत्रिका निकालने वाला था, पर रुपया होटल में लग गया। वैसे मैं स्वयं उपन्यास और कहानियाँ लिख सकता हूँ।'

हरबंस सामने की कुरसी पर बैठ गई थी। जब से होटल खुला है, आज पहली बार वह विश्वास के सामने एकान्त में बातें करने बैठी है। वह कोई आकर्षक युवक नहीं है। चालीस वर्ष लगभग पार कर चुका है। सर के बाल सफ़ेद होने लगे हैं और नित्य अपने हाथों शेविंग करने से मुख की जिल्द कड़ी और काली हो गई है। पान वह नहीं खाता। कपड़े अप-टु-डेट रखता है।

'तब तो आप मैनेजर साहब खूब हैं ?' उसने कुछ शोखी-भरे लहजे में उसे रिझाते हुए कहा। 'मैं हिन्दी जरूर सीखूँगी और आपकी चीजें मुझे यकीन है, जरूर पसन्द आएँगी।'

विश्वास हरबंस के सौन्दर्य को आज बहुत निकट से जी-भरकर निहार रहा था। भरे-भरे कपोल, मांसल देह, आकर्षक मुखाकृति और मुस्कराते हुए होंठ—सुमति से सम्बन्ध-विच्छेद कर लेने के बाद वह आज तृषित चातक की भाँति छटपटाने लगा। छः महीने के लगभग बीत चुके हैं, जब वह सुमति के यहाँ मेहमान बनकर दो दिन रहा था। उसके बाद होटल खोलने के लिए दौड़-धूप करने में लग जाना पड़ा। वह उस दिन उद्विग्न और परेशान बैठा था, जब हर्ष ने आकर सुमति की ओर से वकालत करनी आरम्भ की थी। खीझ कर उसने उसी समय पत्र भेजकर अपना फैसला लिख दिया था। वह एक ओर से कम-से-कम निश्चिन्त हो गया था—गलत या सही—यह विचारना उसे नहीं था। पर आज जब हरबंस उसे मिली है, तो वह बिना किसी पूर्व भूमिका के अपनी अतृप्ति, जाग्रत सेक्स-भावना को कैसे शान्त करे ?

और तभी उसे जैसे सहारा मिल गया। सड़क पर एक बड़ा-सा जुलूस बैण्ड के साथ जा रहा था। स्वाभाविक रीति से हरबंस के साथ उसने भी उधर देखा। सिनेमा का लम्बा-चौड़ा प्रचार था। 'बेबस' नई फिल्म आई

थी। विश्वास ने जब उधर से मुँह फेरकर हरबंस से उसके लिए कहना चाहा, तभी उसने भी उधर देखा। हरबंस ने दृष्टि नीची कर ली, पर विश्वास कुशल खिलाड़ी की भाँति कह उठा—'आपको किताबों के साथ-साथ फिल्म देखना भी तो पसन्द होगा ? एक तरह से यह उनका जीता-जागता रूप है। मुझे तो फिल्म देखने का बड़ा शौक है।'

हरबंस सब-कुछ समझ रही थी। वह जान गई थी कि आज इसी क्षण से विश्वास उसे एक सुन्दर चिड़िया जानकर पकड़ने के लिए दाने डाल रहा है। फिर एक दिन उसे पिंजड़े में बन्द कर लेगा, और वह फड़-फड़ाती हुई उसमें से निकल भागने की हजार युक्तियाँ सोचकर भी नहीं भाग सकेगी।

विश्वास उसे मौन पाकर तत्काल कह उठा—'बम्बई नहीं गईं आप कभी हरबंस जी, वहीं इन फिल्मों का जन्म होता है। मैं तो चाहता था कि पढ़-लिखकर फिल्मी कहानियाँ लिखा करूँ। मेरे एक दोस्त ने, जो आजकल फिल्मी गीतकार हैं, मुझे बुलाया भी, पर मैं घरेलू मामलों में फँसकर जा नहीं सका। अभी आप नहीं जानतीं, यह गृहस्थी—मेरा मतलब है बीबी-बच्चे एक मुसीबत हो जाती है जब आदमी घर से बाहर कहीं दूर जाना चाहता है।'

हरबंस जिस बात को जानना चाहती थी और विश्वास जिसे अब तक गोपनीय रखे था, वह उसकी लापरवाही से अनजाने ही प्रकट हो गई। उसी बात को पकड़कर वह बोल उठी—'यह भी खूब रहा विश्वास बाबू। छिपाना चाहते थे, पर छिपा नहीं सके। बोलिए, आपने बीबी-बच्चों को क्यों छोड़ रखा है ? बताइए वे सब कहाँ हैं।'

विश्वास का मुख उसकी इस कमजोरी से उदास हो गया। शरीर की सारी स्फूर्ति जैसे चली गई। फिर भी अपने को संयत कर उसने कह दिया—'आप गलत समझ रही हैं हरबंस जी। मेरा तो कहना यह है कि परिवार में पड़कर मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता। मैं, आप जानती हैं, बीबी-बच्चों में पड़ा रहता तो आज कहीं दफ्तर में कलम घिसता होता और मोटी-मोटी

फाइलों में सर टकराता फिरता। इस प्रकार एक फर्स्ट-क्लास होटल का मालिक नहीं होता। हाँ, तो छोड़ो उस सब को। मैं चाहता हूँ कि हम दोनों आज 'बेबस' देखने चलें। अभी मैटिनी शो मिल सकेगा। पर अब देर नहीं है। सवा तीन हो रहा है।'

हरबंस बोली—'आपका कहना तो मैं नहीं टालूँगी, पर आपको सब-कुछ बताना पड़ेगा, जो-कुछ अभी आप छिपा रहे हैं। वादा कीजिए, तो मैं तैयार होकर अभी आई।'

विश्वास को सब-कुछ बता देने का वादा करने के लिए बाध्य होना पड़ा।

## ५

'बेबस' फ़िल्म के नाम में जितना आकर्षण था, उसकी कहानी उतनी ही साधारण निकली। संगीत भी मनोरंजक नहीं था। हरबंस अपनी अरुचि प्रकट करती हुई बोली—'यहाँ आने से तो अच्छा था मैं जिस कहानी को पढ़ रही थी, उसे पूरा कर डालती।'

विश्वास वास्तव में फ़िल्म देखने के बहाने उसके साथ आमोद में कुछ घण्टे बिताना चाहता था। सिनेमा हाल में बैठकर परस्पर बातें करने से अन्य दर्शकों का ध्यान उनकी ओर आकर्षित होने की आशंका थी, जिससे विश्वास बचना चाहता था। हरबंस की रुचि का समर्थन करता हुआ वह बोला—'तो फिर यहाँ से चला जाय न? हम लोग थोड़ा घूम लें चलकर।'

हरबंस तैयार हो गई। दोनों हाल से बाहर निकल आए।

विश्वास को हज़रत गंज की ओर मुड़ते हुए देखकर हरबंस बोली—'वहाँ तो इस समय बड़ी भीड़ होगी। मैं उस सबसे बचना चाहती हूँ। रिवर बैंक रोड पर चलिए—खामोश जगह है। चाहें तो गोमती में नाव पर सैर करेंगे।'

विश्वास को प्रस्ताव पसन्द आया। इससे बढ़कर दूसरा अवसर और कौन आ सकेगा? उसके पाँव तेज़ी से पड़ने लगे और उसका रोम-रोम जैसे किसी का आलिंगन कर लेने के लिए छटपटाने लगा। यह उसके पुरुष की दुर्बलता थी जो बेचैनी प्रकट कर रही थी और जो कल्पना द्वारा हरबंस को अपने भुजपाश में जकड़े वासना की साँस उसके मुख पर छोड़ रही थी।

हरबंस मार्ग में चारों ओर निहारती हुई सम्भलकर चल रही थी, जैसे उसे कोई शीघ्रता नहीं थी। विश्वास को तेज़ क़दम चलते पाकर उसने कहा—'धीरे चलिए मैनेजर साहब, ऐसी भी क्या जल्दी है?'

विश्वास ने और कुछ न सोच पाकर कह दिया—'इसीलिए कि सिनेमा के समाप्त होने के समय तक हमें लौट चलना है। मैं किसी से कुछ कहकर भी नहीं आया हूँ। कहीं मेरी जरूरत आ पड़ी तो लोग ढूँढ़ते फिरेंगे।'

हरबंस ने कुछ क़दम बढ़ा दिए।

रिवर बैंक रोड शान्त और नीरव-सा फैला था। दोनों ओर खड़े ऊँचे-ऊँचे सघन वृक्षों से छनकर कहीं-कहीं सूर्य की किरणें आ पड़तीं थीं। बीच-बीच में कभी कोई मोटर, रिक्शा या ताँगा पास से निकल जाता था। हरबंस पत्थर की बनी कुरसी के निकट खड़ी होकर गोमती की ओर देखने लगी। विश्वास उस समय रेज़ीडेंसी की ओर देखने लगा था, जिसका वैभव आज खण्डहर की आत्मा की भाँति सिसक रहा था। हरबंस से पूछा उसने, 'रेज़ीडेंसी देखोगी हरबंस?'

'मैं उस ओर मुँह भी नहीं करना चाहती।' उसने लहरों पर दृष्टि जमाते हुए कहा, जिन पर किरणें थिरक रही थीं। 'इसलिए कि उसे देखकर बिना कुछ कहे रहा नहीं जायगा और तब यह इतिहास के पृष्ठों पर

आँसू बहाने के समान होगा।'

विश्वास हरबंस को ध्यान से देखने लगा। वह भी अपने कुछ विचार रखती होगी, यह वह नहीं सोच पाया था। उसे वह एकदम साधारण नारी समझता था, जो फैशन में रहने के साथ-साथ किताबों की रंगीनियों में अपनी जिन्दगी बिताती है। जिसका कोई उद्देश्य नहीं, जिसके सामने जीवन की कोई महत्ता नहीं और जो चरित्र-बल को भी हास्यास्पद समझती है। इसी सहारे वह इतना साहस कर सका था कि हरबंस की ओर बढ़कर उससे अपना सम्पर्क और गाढ़ा कर ले और अपनी अतृप्ति को, जिसे वह सुमति से शायद इस जीवन में कभी भी तृप्त न कर पाता, उससे पूर्ण कर ले। रूमानी दुनिया की रंगीन तितली, जिसने फूल के सिवा काँटा जाना ही नहीं, आज अपने पंखों के साथ अपनी सारी सुन्दरता को क्या मसलने से बचा सकेगी? विश्वास के भीतर वासना का तूफान उठा है और कामुकता का भूत अपने लम्बे डग भरता हुआ उसकी ओर बढ़ता चला आ रहा है, जो पलभर में हरबंस को नाव में ही उठाकर पटक देगा और तब वह उसकी कुरूपता के पैने नाखून अपने शरीर में चुभते हुए पाकर दर्द से चीखेगी और चिल्लाती रहेगी। ऊपर हल्के बादलों के टुकड़ों से आच्छादित आकाश होगा, जिस पर सर्वत्र सूर्य का प्रकाश होगा और नीचे नदी की इठलाती हुई लहरें, जो आज से नहीं अपने जन्म से यही सब देखती आई हैं। उनकी चंचलता में वह सब देखकर शिथिलता नहीं आएगी। उल्टे नाव को बिना पतवार के बढ़ती पाकर वे अपनी शोखी से तेज़ थपेड़ों के बीच बहाती ले जायँगी।

'अरे! वह देखिए नाव वाला पुकार रहा है और आप हैं जो जवाब भी नहीं देते?' हरबंस ने विश्वास को सजग करते हुए कहा—'क्या अभी कहानी बनने लगी है? एक घन्टे बातें कर ली जाँय।'

विश्वास कुछ झेंपता-सा केवल उसकी ओर देखकर मुस्करा उठा, फिर ऊँची सड़क से भागता हुआ नीचे किनारे तक नाव वाले के पास पहुँच गया। फिर सौदा पटने में देर नहीं लगी। हरबंस को उसने संकेत से बुला लिया

और मल्लाह को किनारे पर छोड़कर दोनों नाव में बैठकर लहरों की छाती पर निर्दयता से चलने लगे। विश्वास नाव खेना जानता था। हरबंस को सामने बिठाकर वह पतवार चलाने लगा। जिधर बहाव था नाव उसी दिशा की ओर जा रही थी।

विश्वास के माथे पर पसीने की बूँदें झलक आई थीं। शारीरिक श्रम करने का अभ्यास नहीं था। हरबंस बोली—'आप तो थक गए जान पड़ते हैं। हाथ रोक लीजिए।'

विश्वास ने मानो और तेज़ी से पतवार चलाते हुए कहा—'नहीं हरबंस, आज मैं रुकूँगा नहीं। जब हृदय की धड़कन तीव्र गति से चल रही है, तो उससे शरीर पीछे नहीं रहेगा। हाथ-पैर ही नहीं, मेरा अंग-प्रत्यंग और प्रत्येक अवयव इसी प्रकार उस धड़कन का साथ देता रहेगा जो तुम्हारे कारण, हाँ हरबंस केवल तुम्हारे कारण···समझीं न? आज रुकने के लिए मत कहना। कई साल पहले जब सुमति आई ही थी, मैं उसे लेकर गोमती की इन्हीं लहरों पर खेला था। आज वह सब ज्यों-का-त्यों याद हो आया है। यही समय था, ऐसे ही बादल थे और उन पर ऐसा ही सूर्य चमक रहा था। आज वह—तुम नहीं जानतीं उसे। देखो, और आगे आ जाओ हरबंस। हम छतरमंजिल की रंगीन छाया के ऊपर से गुज़रे हैं। वहाँ की रातें मशहूर हैं। अब 'मंकीब्रिज' आ रहा है। पर वहाँ से और आगे हम चलेंगे और चलते रहेंगे, जब तक कि चाँद इन लहरों पर नहीं झिलमिलाने लगेगा। कल्पना करो हरबंस—जीवन में उपन्यास और कहानियाँ पढ़कर समय काटना ही सब कुछ नहीं है। तुम युवती हो—तुम्हारा यौवन निखर चुका है। तुमने सोचा है कभी यह क्यों है? प्रकृति ने सौन्दर्य क्यों दिया है? और प्रेम, जिसके बिना···।'

हरबंस एकटक उसका मुख निहारती रह गई थी। विश्वास आज यह सब क्या कह रहा है? अभी तक उसने इस प्रकार कभी नहीं किया! यह अभिनय है, उसकी परीक्षा है या सत्य है कि वह उसे····। वह जैसे सिहर उठी। उसने सब-कुछ समझ लिया। यहाँ नाव पर वे दोनों सवार हैं और

वह उसे आगे बढ़ाता जा रहा है। अभी उन्हें वापस भी लौटना है, पर वह उसका रूप चाँदनी रात में निरखना चाहता है। उसके यौवन को आज वह···पर वह तो उसे नहीं चाहती। यह होता है और उसके साथ भी हो सकता है कि वह नशे में अपने-आपको गवाँ बैठे, पर विश्वास, जिसके पीछे न जाने कौन-कौन से रहस्य छिपे हैं और जो दुनिया को देख-समझ चुका है, उसके साथ भी प्रस्ताव रखना चाहता है। यह स्वाभाविक होते हुए भी एकांगी है जिसे वह अस्वीकार कर देगी। उसे वह बाध्य नहीं कर सकता। और यह सुमति···!

वह मुस्कराकर बोली—'और मैनेजर साहब, सुमति कौन है? पहले मुझे सुन लेने दें। आज आपको बताना होगा। मेरे ख़याल से आपकी पत्नी है। आप कुछ छिपाइएगा मत।'

विश्वास ने जोर-जोर से साँस लेते हुए कहा—'मेरी दूसरी पत्नी है। एक बच्चे की माँ है, पर वह बच्चा मेरा है, इसमें मुझे सन्देह है। मैं ठीक बता रहा हूँ हरबंस। पहली पत्नी की मृत्यु के बाद मेरा यह दूसरा विवाह था। सुमति ने मुझे धोखा दिया। औरतों का चरित्र इतना दुरूह होता है कि वे स्वयं उसे न समझकर कभी-कभी उसी में फँस जाती हैं। तो वह सुमति हर्ष से लगाव रखती है और इतना कि विवाह के बाद भी उससे अलग नहीं होना चाहती। मैंने अन्त में उससे पीछा छुड़ा लिया—सदा के लिए; या यों समझो कि उसे स्वतन्त्र कर दिया। वह बनारस में रहती है। मिर्जापुर का रहने वाला हर्ष है। क्यों हरबंस, ठीक किया मैंने? ऐसी औरत को लेकर भला मैं क्या करता, जो मेरी होकर नहीं रहना चाहती?'

हरबंस को यह सब बड़ा अप्रिय लगा। एक घृणा और अरुचि की सहज और स्वाभाविक भावना उसके मन में बैठ गई किन्तु इतना वह स्वयं नहीं समझ सकी कि उसका यह घृणा मिश्रित रोष विश्वास के प्रति है अथवा सुमति के। दोनों के चरित्र उसके सामने हैं। एक के विषय में विश्वास ने बताया है और दूसरा स्वयं स्पष्ट है—दर्पण की भाँति, जो उसे यहाँ ले आकर उसको भी अपनी ही भाँति कामोत्तेजक बनाकर सौन्दर्य, प्रेम और

यौवन की आड़ में उसे पथभ्रष्ट करना चाहता है। हरबंस अपनी वेश-भूषा से चाहे जैसी रमणी लगे पर अभी तक उसने अपने को कलंकित होने से बचाए रक्खा है। उसका यह व्रत किसी समय भंग हो सकता है, इसका भय उसे अवश्य रहता है, किन्तु वैसी स्थिति में पड़ने पर भी वह उचित-अनुचित को विचारने की सजगता रख सकेगी, इसका उसे पूरा विश्वास है।

विश्वास उसका उत्तर न पाकर नाव के एक किनारे से बीच में आ गया और सामने वाले तख्ते पर बैठ कर ठीक हरबंस के मुख पर अपनी मस्ती में झूमती आँखों को जमाकर कहने लगा—'इस भावुकता की शिकार मत बनो हरबंस, नहीं तो सब-कुछ खो बैठोगी। किसी को भी प्रसन्न नहीं कर सकोगी और सुमति-सी गति होगी तुम्हारी। वह सब एक नारी के लिए—उसके चरित्र की पवित्रता के लिए एक बड़ा कलंक है। तुम···।'

हरबंस ने उसे अधूरे वाक्य के बाद अपनी ओर ऐसे घूरते पाया जैसे वह इसी क्षण, इसी नाव पर, इस खुले वातावरण में ही उससे कसकर लिपट जायगा और फिर आगे···आगे इस प्रकाश में भी अँधकार छा जायगा। वह सब उसकी मृत्यु से भी बढ़कर होगा। उसने अपनी रक्षा का और उपाय न सोचकर कहा—'मैं नदी में कूद पड़ूँगी विश्वास बाबू और तैरकर निकल जाऊँगी, पर आपको फिर पुलिस के हवाले कर दूँगी। मैं सबको बता दूँगी कि अपनी स्त्री को पतिता कहकर निकाल देने वाला व्यक्ति मदन होटल का मैनेजर अविवाहिता लड़कियों का सर्वनाश करता फिरता है। आपको तब जेल न भी जाना पड़े किन्तु ग्लानि से दबकर शायद आत्म-हत्या कर लेनी पड़ेगी। और दिन का यह प्रकाश, यह शोर-गुल, पुल से आने-जाने वाले मनुष्य, वे पास आने वाली नावें, आपको यह सब कुछ दिखाई नहीं पड़ता क्या? आप किसे देख रहे हैं?'

विश्वास हताश-सा कुछ क्षण के लिए रुक गया फिर बोला—'तो मुझसे विवाह कर लो। मुझे विश्वास है कि तुम सुमति की भाँति किसी दूसरे से प्रेम नहीं करती हो। मैं तेजासिंह से बात कर लूँगा। आखिर बिना विवाह किए भी तो तुम नहीं रह सकोगी?'

हरबंस ने कहा—'इस पर मुझे सोचना पड़ेगा। चलिए नाव वापस कीजिए, नहीं तो मैं शोर मचाऊँगी।'

विश्वास की वासना की आँधी पल-भर में उड़ गई। उसने चारों ओर देखा-उन्मुक्त-आकाश, नदी की कल-कल लहरें, मंकीब्रिज, किनारे के घाट जिन पर नहाते हुए पुरुष, आगे-पीछे कई नावें, जन-रव, सब कुछ वह अपना बल लगाकर पतवार को बहाव के विरुद्ध चलाने लगा।

हरबंस ने कटाक्ष करते हुए कहा—'क्या इसी प्रकार जिन्दगी की नाव भी चलाते रहेंगे विश्वास बाबू? क्या हो गया था आपको?'

विश्वास उसी गति से नाव खेता रहा।

## ६

हर्ष ने मिर्जापुर वापस पहुँचकर सबसे पहले जो काम किया वह यह था कि सुमति को एक लम्बा पत्र लिखा, जिसमें उसने यह व्यक्त करना चाहा था कि अकेली वही नहीं उपेक्षिता है, उसकी जैसी अनेक युवतियाँ अपने जीवन का सर्वनाश भोग रही हैं। ऐसी ही एक अन्य स्त्री उसे इलाहाबाद में मिली थी। अपने जिस मित्र के यहाँ वह ठहरा था, उसी के यहाँ उसने शरण ली है। उसका यह मित्र रेडियो आर्टिस्ट है। संगीत पर उसका अधिकार है और वैसे भी शहर में उसकी प्रतिष्ठा है। उस युवती को वह संगीत की शिक्षा देकर स्वावलम्बी बना देना चाहता है। चाय पीते समय बातों में उससे कहानी सुनने को मिल गई। पर वह जीवन से निराश और हतोत्साहित नहीं है। संघर्ष में उसे विश्वास है और एक दिन वह प्रतिशोध भी लेगी। वह बड़े दृढ़ विचारों की नारी है जिसे सहसा डिगा

देना साधारण काम नहीं है और यह सब इसलिए और भी है कि उसे राज-नीति में दिलचस्पी है। उसके विचारों में गतिशीलता के साथ ही क्रान्ति की जो भावना निहित है, वह एक दिन निश्चय ही उसके उद्देश्य की पूर्ति करेगी। अपने जन्मगत संस्कारों को उसने एक-एक कर बदल दिया है और आज जो कोई उसके सम्पर्क में आता है, उसकी ओर प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता।

उस युवती का नाम है सुमित्रा।

और सुमित्रा असाधारण प्रतिभा से सम्पन्न होते हुए भी एक साधारण नारी के समान है। औसत क़द, आडम्बरहीन पहनावा और कृत्रिमता से दूर उसके शरीर की रचना में न जाने कैसी अलौकिकता है, जो स्वाभाविक होते हुए भी अत्यन्त हृदयग्राही है। वह मौखिक संगीत के साथ-साथ सितार भी सीख रही है। हर्ष दो दिन वहाँ ठहरा। इस बीच उसे 'दर्पण' के देर से प्रकाशित होने की चिन्ता अवश्य लगी रही—किन्तु सुमित्रा का आग्रह भी इतना स्नेहसिंचित था कि वह रुक गया। इलाहाबाद से एक तार और भेज दिया उसने और पहली डाक से ही ट्रेन में लिखी गई एक लघु-कथा, जिसमें उसने अपना सीधा नाम दे दिया था।

दूसरे दिन इलाहाबाद रेडियो स्टेशन से उसके मित्र प्रसन्न का संगीत का प्रोग्राम था। वह अपने साथ रेडियो स्टेशन सुमित्रा को भी ले जाया करता था, जिस कारण उसे भी सब लोग जानने लगे थे। प्रसन्न ने इस बीच एक-दो बार कविता-पाठ और दो-तीन बार स्टूडियो से प्रसारित होने वाले संगीत-रूपकों में उसे सम्मिलित करा दिया था। आज वह हर्ष को भी साथ ले गया था। प्रोग्राम समाप्त होने के बाद वे तीनों साथ घर लौटकर खाना खाने बैठे। उसी रात हर्ष मिर्जापुर वापस जाने वाला था। सुमित्रा ने पूछा—'हर्ष बाबू अब कब आना होगा?'

'जब आपका नाम और आपका गाया हुआ गीत रेडियो पर सुन लूँगा।' हर्ष ने थाली की ओर से मुँह उठाकर उसकी ओर देखा।

'पर उसमें अभी बहुत समय लगेगा, क्यों प्रसन्न भैया?' सुमित्रा ने

प्रसन्न के मुख की ओर देखकर उसका समर्थन चाहा। फिर हर्ष से बोली—'और यह 'आप' किसलिए ? मैं क्या आपके इतने आदर के योग्य हूँ ?'

प्रसन्न कुछ कह सके कि इसके पूर्व ही हर्ष उत्तर दे बैठा—'मेरा विचार है कि हम दोनों में उम्र का कोई खास फ़रक नहीं है, पर आदर के लिए उसी का सहारा तो नहीं लिया जाता केवल ? मैं आपकी प्रतिभा का क़ायल हूँ। हो सके तो कभी-कभी एकाध लेख 'दर्पण' के लिए भेजा करना।'

इस बार सुमित्रा के पहले प्रसन्न ने कहा—'मैं 'आप' और 'तुम' की मर्यादा का उल्लंघन करने को नहीं कहता, पर मेरे विचार से जहाँ अपनापा स्थापित हो गया है, वहाँ 'आप' शिष्टाचार न बनकर एक कौतूहल का रूप ले लेता है। सुमित्रा को 'आप' सम्बोधन करना ठीक न होगा, हर्ष।'

हर्ष ने मुस्कराकर सुमित्रा की ओर देखा, जो पहले से ही हँसने का प्रयत्न कर रही थी। कहा उसने—'तुमने सुमित्रा प्रसन्न को भी अपने वश में कर रखा है। मेरी समझ में कुछ दिनों बाद तुम उन्हें सिखाने लगोगी।'

घड़ी ने साढ़े नौ का घंटा बजाया। दस बजे के बाद गाड़ी जाती थी। प्रसन्न ने तत्काल उत्तर देते हुए कहा—'कुछ दिनों बाद क्या होगा हर्ष, कौन कह सकता है ? इस समय की बात करो। मैं बताता हूँ उसे। गाड़ी का समय हो रहा है। जल्दी से तैयार हो जाओ। छूट जाने पर कल तक फिर रुकना पड़ेगा।'

हर्ष पानी पीकर खड़ा हो गया।

उसके पीछे सुमित्रा भी खड़ी हो गई और बाथ रूम में चली गई। वहीं से एक गिलास में पानी लाकर हर्ष के हाथ धुला दिए, फिर कहा—'भैया ने जो-कुछ कहा है, वही करना होगा इस समय। लोग अपने मेहमानों को जाने से रोकते हैं, पर हम अपने मेहमान को स्वयं चले जाने को कहते हैं। अच्छा, आप कपड़े बदलिए तब तक मैं पान लाती हूँ और अभी बात-की-बात में होलडाल और अटैची सम्भाले देती हूँ।'

हर्ष के पास अब बातें करने को और कुछ नहीं था; केवल सुमित्रा जहाँ

थी, वहाँ जाकर उसकी कार्यपटुता देखता रहा। जब वह यत्न से एक-एक वस्तु अटैची में रख रही थी, तो हर्ष जैसे आत्म-विस्मृत-सा हो उठा था। ऐसे ही वह उसे अपने काम में लगी देखता रहे, बस। कम-से-कम इस समय तो वह यही चाहता है। सुमित्रा-जैसी कुशल स्त्री पाकर जो व्यक्ति अपना सौभाग्य न मान सका, वह हतभागी नहीं तो क्या है? अपने कपड़े बदलना भूलकर वह इस जटिल पहेली से उलझ गया, जिनमें सुमित्रा और सुमति जैसी नारियाँ परित्यक्ता होकर अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाने के लिए छोड़ दी गई हैं और यह भी एक संयोग की बात है कि वह दोनों से परिचित है और वे दोनों ही उसके हृदय में अपना स्थान बना चुकी हैं।

अपने कमरे से प्रसन्न ने आवाज़ दी उसे, तब वह सचेत हुआ। सुमित्रा भी सामान ठीक करते-करते उसकी ओर देख लेती थी। जब वह अटैची बन्द कर चुकी और होलडाल सँभालने लगी तो एकदम पूछ बैठी—'क्यों, इस प्रकार मुझे ही देखते रहोगे, या कपड़े भी बदलोगे? भइया जो आ गए तो ऐसे ही ताँगे पर सवार करा आएँगे। जल्दी करो न!'

हर्ष की जैसे चोरी पकड़ ली गई थी, पर मज़े की बात यह थी कि जिसकी चोरी वह कर रहा था वह स्वेच्छा से अपना माल गँवा रही थी।

हर्ष सम्भलकर अपने कपड़े बदलता हुआ बोला—'क्या कहा सुमित्रा, तुम्हें देख रहा हूँ? वाह खूब! मुझ से कहती हो, पर तुम क्यों इधर देखने लगती थीं? अपना काम किए जाओ। ऐसा करोगी, तो मेरी गाड़ी जरूर छूटेगी।'

सुमित्रा उत्तर देने ही वाली थी कि प्रसन्न आ गया, बोला—'अभी जाने का मन नहीं होता है, क्यों सम्पादक जी? यहीं अपना कार्यालय खोल लो न?'

हर्ष को घर से धक्का मारकर निकाला जा रहा था, पर उसने बुरा नहीं माना। प्रसन्न से उसका ऐसा ही सम्बन्ध है। वह जो कुछ करेगा, उसके हित के लिए ही। कहा उसने—'तैयार हो गया हूँ, बस बाहर निकलने की बात है।'

'तो चलो मेरे साथ, नौकर ताँगा ले आया है।' प्रसन्न ने उसका हाथ अपने हाथ में लेकर कहा। नौकर सामान उठाकर ताँगा में रख आया।

हर्ष सुमित्रा के हाथ से पान लेकर उससे नमस्ते कर ताँगे में जा बैठा। जब ताँगा चल पड़ा तो उसने प्रसन्न से कहा—'देखो तुमने मुझे तो निकाल दिया, पर सुमित्रा को भी ऐसे ही न निकाल देना कहीं। यदि वैसा दिन आ जाय तो मुझे तार दे देना।'

प्रसन्न ने कहा—'ऐसा दिन यदि आने को होता, तो मैं इतना लांछित होकर भी उसे पवित्रता के बन्धन के सहारे घर में क्या रखता? तुम चिन्ता न करो, मुझे अपना कर्तव्य स्मरण रहेगा।'

ताँगा आगे बढ़ गया था। प्रसन्न के शब्द हर्ष के कानों में पड़े अथवा नहीं, यह वही जान सका, किन्तु वह बार-बार उस रात्रि में भी पीछे मुड़-मुड़ कर देखता रहा, इस आशा में कि शायद उसे भी सुमित्रा देख रही होगी।

स्टेशन पहुँचने पर उसे गाड़ी तैयार मिली। वह शीघ्रता से टिकट लेकर एक छोटे किन्तु अँधेरे डिब्बे में जा बैठा। इस समय उसका मन न जाने कैसा हो रहा था? सुमति के यहाँ से चलते समय उसे कभीभी इस प्रकार की उदासी और सूनेपन का अनुभव नहीं हुआ था। उसे लग रहा था कि वह अपना सब कुछ खो चुका है और जो उसने खो दिया है वह उससे सदैव के लिए छूट गया है। सुमित्रा को वह जैसे-जैसे भुलाना चाहता था, वैसे-वैसे ही वह स्मरण हो आती थी। वह समझ नहीं पा रहा था कि उसकी ओर वह क्यों आकृष्ट हो गया है? और यदि आकृष्ट हो गया है, जो स्वाभाविक भी है, तो वह उससे दूर होने पर इतनी बेचैनी और बेकली क्यों अनुभव कर रहा है? संसार में आकर्षण-विकर्षण दो ऐसे केन्द्र-बिन्दु हैं जहाँ से मानव-जीवन का नया पृष्ठ खुलता है। आकर्षण में जो मूक-निमन्त्रण है वही विकर्षण होने पर दुःख का रूप ले लेता है और···।

गाड़ी को हलका धक्का लगा। हर्ष शरीर को लापरवाही से सीट पर डाले था, उसका सर खिड़की से जा टकराया, पर वह चोट लगने से न तो

झुँझलाया और न हाथ उठाकर सर तक ही ले गया। वह जैसे संज्ञा-शून्य हो जाना चाहता है।

फिर खिड़की खुली और कई मुसाफिर भीतर घुस आए। एक ने उससे उठकर बैठने के लिए भी कहा, पर वह उठा नहीं, लेटा ही रहा। गाड़ी फिर चल दी। स्टेशन का कोलाहल और बिजली का प्रकाश सब पीछे छूट गया। चारों ओर निर्जन और सुनसान—केवल गाड़ी चलने का शोर सुनाई पड़ रहा था।

हर्ष आँखें मूँदे पड़ा था। उसे सुमित्रा की जीवन-कहानी स्मरण हो आई। वह उसी सबको दोहराने लगा। सुमित्रा का विवाह आज से तीन वर्ष पूर्व हुआ था। उस समय वह हाई स्कूल में पढ़ रही थी। उसने सब-कुछ इन्कार किया, पर अपने घर वालों की इच्छा के सामने उसे झुकना ही पड़ा। वह विवाह की बलिवेदी पर चढ़ा दी गई। अपने पति-गृह जाकर उसने देखा कि सब-कुछ अस्त-व्यस्त-सा है। जिसे वह अपना घर मानकर आई है, वह उसे स्वीकार नहीं कर रहा है। उसके पति को अपनी मजबूरियों से फ़ुरसत नहीं है। उससे दो बातें करने और उसके सुख-दुख के विषय में भी जानने की उसे चिन्ता नहीं है। इसी प्रकार दो महीने बीत गए और फिर ढाई वर्ष। इतने समय के बीच में किसी दिन भी सुमित्रा को वैवाहिक सुख जानने का अवसर उसके पति ने नहीं दिया और एक दिन बाहर जाने के बहाने उसे निराश्रित छोड़कर वह चला गया। केवल एक पत्र वह उसके लिए छोड़ गया, जिसको सुनाती हुई वह रो पड़ी थी। वास्तव में उसका पति···था। उसने पत्र में अपनी इस दुर्बलता को स्वीकारकर उससे बार-बार क्षमा-याचना की थी। सुमित्रा ने आँखें पसारकर इस कठोर और निर्मम विश्व की ओर देखा, जहाँ उसके यौवन का सुख-भोग करने वाले तो सभी थे, पर हार्दिक सहानुभूति दिखाने वाला कोई न था। वह फिर अपनी दुरवस्था पर आँसू बहाती हुई घर से चल दी। अपने घर वालों को पत्र लिख दिया कि वह जिस स्थिति में है, उससे यही ठीक समझती है कि अपने जीवन का अन्त कर दे। घर आकर फिर इस कपटी संसार में वह नहीं

रहना चाहती।

गाड़ी अगले स्टेशन पर आकर रुक गई थी। पैसेंजर गाड़ी थी। हर स्टेशन पर उसे रुकना था। मुसाफ़िरों के चढ़ने-उतरने और शोर-गुल से उसका ध्यान टूट गया। जब गाड़ी फिर तेज गति से भागने लगी, तब हर्ष सुमित्रा की कहानी पर फिर से विचारने लगा। उसे किस प्रकार प्रसन्न मिला और कैसे वह उसे अपना भाई मान सकी, यह बड़ी मार्मिक घटना थी। हर्ष को वह सब ज्यों-की-त्यों याद है। शायद वह उसे कभी नहीं भूल सकेगा। प्रसन्न उसका अकेला मित्र है। उसे वह खूब जानता है। उसके चरित्र को उसने कसौटी पर कसकर भी सोने की भाँति खरा पाया है। वह इस पवित्र सम्बन्ध को आजीवन निभाएगा और सुमित्रा···? यौन-सुख से वंचित रहकर भी वह प्रसन्न की छाया से अलग नहीं होगी। उसने मानो उसे नवीन जीवन दिया है, जो दिव्य और अलौकिक है और जिसकी रक्षा वह प्राण रहते हर समय करेगी।

पर उसका क्या होगा? हर्ष सोचता रहा। कहाँ तक सोचेगा वह? बड़ी लम्बी मंजिल है जिसका आदि-अन्त उसे कुछ भी पता नहीं है और ऐसे ही वह ठण्डी हवा के झोंके खाता कब सो गया, इसका उसे पता नहीं चल सका।

## ७

सुमति को पत्र भेजकर हर्ष ने जैसे मुक्ति की साँस ली थी। 'दर्पण' का अंक तो जैसे-तैसे निकल गया था, पर वह उसकी दृष्टि में ही बहुत अना-कर्षक रहा। मशीन में खराबी आ जाने से छपाई भी साफ़ नहीं हो सकी

थी। प्रूफ की अशुद्धियों के साथ-साथ जो भी सामग्री उसमें दी गई थी, वह भी रोचक नहीं थी। पहले उसने सोचा कि सुमित्रा को एक प्रति अलग से उसके नाम भेज दे, फिर न जाने क्यों नहीं भेजी? उसकी फ्रीलिस्ट में अन्य सहयोगियों, लेखकों व विज्ञापनदाताओं के अतिरिक्त प्रसन्न व सुमति का नाम स्थायी रूप से था।

उस दिन फिर हर्ष 'दर्पण' के लिए रोचक सामग्री इकट्ठी करने में लगा रहा। खाना खाने की छुट्टी भी मुश्किल से मिल सकी।

दूसरे दिन उसे सुमति का पत्र मिला। यह उसके भेजे गए पत्र का उत्तर नहीं था। उसके मिलने के पूर्व ही सुमति ने भी पत्र लिख दिया था। हर्ष उसे पढ़ने बैठ गया। सुमति ने बहुत संक्षेप में विश्वास के पत्र का प्रसंग न देते हुए उससे सम्मति चाही थी कि अब उसे क्या करना चाहिए? किन्तु वह लिखते समय यह भूल गई कि जिस स्थिति का पत्र वह हर्ष को भेजकर उसका प्रदर्शन चाहती है, वह विश्वास के पत्र द्वारा ही उत्पन्न हुई है। अन्यथा उसे लिखने की ऐसी कोई नवीन बात उसके पास नहीं थी, क्योंकि विश्वास उसके पूर्व नियमित रूप से उसे मनीआर्डर भेजता रहा था। जिस बात को उसने छिपाना चाहा था, वह सीधे नहीं किन्तु दूसरे रूप से व्यक्त तो हो ही चुकी थी। हर्ष एक पत्रकार है। अपनी पैनी सूझ-बूझ के सहारे ही वह 'दर्पण' का सम्पादन कर रहा है। राजनीति से लेकर सामाजिक, धार्मिक तथा पारिवारिक सभी विषयों में उसको हस्तक्षेप करना पड़ता है। सभी पर वह अपनी राय रखता है जिसके आधार पर उसे 'दर्पण' में अपनी टिप्पणी देनी पड़ती है। सुमति को जिस मार्ग का अवलम्बन लेना है, यह भी वह जानता है, पर उसे आज आए पत्र ने एक मानसिक उलझन में डाल दिया। अभी चार दिन पूर्व वह उससे मिलकर आया है, तब उसने इस प्रकार की कोई भी बात नहीं उठाई थी। निश्चय ही कोई नवीन बात हुई है। वह यह भी जानता था कि विश्वास किसी भी समय उससे जो एक डोरा कहीं पर जुड़ा हुआ है, तोड़ सकता है। और हो सकता है कि कुछ ऐसा ही किया हो उसने जिसे सुमति स्पष्ट रूप से उसे नहीं

बताना चाहती है। वह बड़ी भावुक और स्वाभिमानी युवती है। विश्वास के अन्याय के सामने संघर्ष कर रही है, पर झुककर क्षमा नहीं माँग सकी।

'दर्पण' की एक टिप्पणी लिखते समय उसे सुमति का पत्र मिला था। उस समय वह पुरुषों के नैतिक पतन की चर्चा करते हुए एक घटना का उल्लेख कर रहा था, जो पिछले सप्ताह मिर्जापुर में घटित हुई थी। एक व्यक्ति ने अपने पड़ोस के घर में घुसकर एक कुमारी युवती को बलपूर्वक पथ-भ्रष्ट करना चाहा था, जिसका उत्तर अपनी रक्षा करते हुए उस बाला ने अपूर्व साहस और शौर्य से दिया था। अपनी काम-पिपासा शान्त करने के स्थान पर उसे जीवन-संकट से घिर जाना पड़ा और वह मरणासन्न अवस्था में अस्पताल पहुँचाया गया, जहाँ उसे आजन्म निर्लज्ज होकर जीवन बिताने के लिए बचा तो लिया गया, किन्तु वह फिर चलने-फिरने के भी अयोग्य घोषित कर दिया गया। सारे नगर में इस घटना की चर्चा थी और जो उस कलंकित और लांछित व्यक्ति को देखने जाता था, उस पर घृणा से जैसे थूक देता था और फिर उस युवती के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करता था।

हर्ष ने इस घटना को अपने पत्र में प्रमुख स्थान देकर प्रकाशित किया था और इस अंक का अग्र-लेख भी वह 'हमारा चरित्र' शीर्षक से देना चाहता था। अपनी टिप्पणी में पुरुष समाज पर व्यंग करते हुए उसने लिखा था''''और आज का पुरुष केवल सेक्स-अपील की भावना से प्रभावित है। उसे यह भ्रम हो गया है कि नारी भी हर समय वासना की शिकार बन सकती है। पुरुष और नारी का सम्मिलन एक सन्धि-स्थल है, जहाँ दोनों परस्पर आकर्षण में बँधकर अपने जीवन का चरम आनन्द उपभोग करते हैं। यह सत्य है कि 'सेक्स-अपील' पुरुष और नारी की स्वाभाविक भूख है जिसकी पूर्ति होनी आवश्यक है पर यह निर्मूल धारणा है कि प्रत्येक स्त्री पुरुष सहवास के लिए उसका संकेत चाहती रहती है।'''मिर्जापुर की यह घटना पतन की एक नारकीय कहानी है जिसने पुरुष जाति को सदा के लिए कलंकित कर दिया है। कानून इस मामले का जो चाहे

फैसला करे, पर समाज पर इसका जो प्रभाव पड़ा है, वह हमारे चरित्र की नैतिकता को एक खुला चैलेंज तो है ही, साथ ही हमारे मुँह पर मारा गया एक तमाचा है।

टिप्पणी समाप्त करने के बाद वह अग्र-लेख लिखने लगा। सुमति के पत्र के उत्तर में उसने सोचा कि इस युवती का विस्तृत वर्णन कर उसे भी संयम से रहने और प्रत्येक विपरीत स्थिति का डटकर मुकाबला करने के लिए लिखेगा। सुमित्रा के विषय में वह पहले पत्र में लिख ही चुका है। वह भी हतोत्साहित होने वाली युवती नहीं है। इस पत्र में वह उसके विषय में बहुत-कुछ लिखेगा। उसके निजी जीवन और मन पर उसका जो प्रभाव पड़ा है, वह उसे भी व्यक्त कर देगा। वास्तव में इन लोगों के चरित्र अनुकरणीय हैं। एक वह मदान्ध था, जो एक तरुणी का कौमार्य भंग करने के लिए अपनी बुद्धि, विवेक और ज्ञान सभी-कुछ खो बैठा और दूसरी उसकी तुलना में सुमित्रा है, जिसे विवाहिता होते हुए भी नारीत्व को पूर्ण और सफल बनाने का अवसर नहीं प्राप्त हुआ। फिर भी वह उस आग और तूफ़ान के प्रबल-वेग को दबाए है। वह उसे कहीं से भी बाहर निकलने या उभरने नहीं देती। एक ही वस्तु के ये दो रूप हैं, एक नयनाभिराम और चित्ताकर्षक और दूसरा कलुषित और कुरुचिपूर्ण।

लेख समाप्त कर लेने के बाद उसे कम्पोजीटर को देकर वह डाक से प्राप्त हुए संवादों तथा अन्य सामग्री को देखने लगा। 'दर्पण' का सारा कार्य उसे अकेले ही करना पड़ता था। कुल मिलाकर कहीं एक हजार प्रतियाँ वह निकाल पाता था। सम्पादक, लेखक, प्रूफ़रीडर, डिस्पेचर, क्लर्क, सब-कुछ वही था। कभी-कभी इसीलिए आवश्यक कार्य भी पिछड़ जाता था। उसे एक सहयोगी की आवश्यकता थी, जो उसका हाथ बटाता। तब वह पत्र के ग्राहक भी बढ़ा सकता था। उसका ध्यान सुमित्रा की ओर फिर गया। वह यदि उसके साथ कन्धा भिड़ाकर कार्य कर सके तो 'दर्पण' चमक उठे। पर वह उससे कहे तो कैसे ? प्रसन्न ने उसकी रुचि जिधर देखी है, उधर ही उसे लगा दिया है और सुमति—वह पढ़ रही है। अपना भविष्य उसे

स्वयं निर्माण करना है। शिक्षिता होकर वह विश्वास के सहारे नहीं रह सकती। विनी को भी उसे सुयोग्य बनाना है। 'दर्पण' की आज जो स्थिति है, वह संतोषजनक नहीं है। कहीं वह बन्द हो गया, तो क्या होगा? उसे सब-कुछ सोच-समझकर कदम उठाना चाहिए।

उस दिन-भर वह फिर सर नहीं उठा सका। उसकी अनुपस्थिति में जितना कार्य इकट्ठा हो गया था, वह उसे ही निपटाता रहा। शाम के छः बजने को आ गए। उसने कलम रोककर सर उठाया और कुरसी की पीठ पर बल देकर पूरे पैर फैलाकर आराम की एक साँस ली। उसकी कमर में दिन-भर झुके बैठे रहने से दर्द होने लगा था।

कुरसी छोड़कर वह उठ खड़ा हुआ। सोचा कि कमर सीधी कर लें। रात में उसे प्रूफ़ देखना है। मेज़ पर बिखरे कागज़ों को वह समेट ही रहा था कि एक नवयुवक कमरे में आकर उससे नमस्ते कर बोला—'मैं 'दर्पण' के सम्पादक से मिलना चाहता हूँ।'

'कहिए, क्या आज्ञा है?' हर्ष ने नमस्ते का उत्तर देते हुए पूछा।

उसने अपनी जेब से एक लिफ़ाफ़ा निकाला और उसकी ओर बढ़ाता हुआ बोला—'यह मेरी लिखी एक कहानी है। आप इसे 'दर्पण' में प्रकाशित कर दीजिए।'

हर्ष ने लिफ़ाफ़ा हाथ में ले लिया फिर पूछा—'क्या मैं आपका परिचय जान सकता हूँ? आप यहीं के रहने वाले हैं क्या?'

'जी,' उस युवक ने धीरे से उत्तर दिया। 'मैं यहीं रहता हूँ। परिचय के रूप में आप मुझे ही पहचान लीजिए, बस—और क्षमा चाहूँगा। कहानी का उत्तर आप मुझे कब तक दे सकेंगे?'

हर्ष ने एक क्षण कुछ सोचा, फिर सर से पैर तक उसे देखते हुए बोला, 'जैसी आपकी मरज़ी। दो दिन बाद आ जाइएगा।'

वह युवक चला गया। हर्ष कागज़ यथास्थान लगाकर कहानी पढ़ने के लोभ को संवरण न कर, मन न होते हुए भी कहानी पढ़ने बैठ गया। दस मिनट तक वह एकाग्रभाव से कहानी पढ़ता रहा और उसे समाप्त करने

के बाद उसकी मनोदशा कुछ ऐसी हो गई कि वह जैसे रो पड़ने के लिए तड़प उठा। उस समय उसके मुख पर जो लकीरें बनकर धीरे-धीरे मिटती जा रही थीं, उन्हें कोई देख पाता तो उसके निकट आकर पूछता—'क्यों कैसा जी है तुम्हारा हर्ष ? क्या परेशानी है ? कुछ खो गया है या···?' बहुत-सी बातें ऐसी ही और पूछी जा सकती थीं।

हर्ष ने कहानी पर संपादकीय कलम से लाल अक्षरों में कुछ लिखने की अपेक्षा उसे फिर से उसी लिफ़ाफ़े में रखकर मेज की दराज में बन्द कर दिया। इस कहानी में, जो उसे एक अपरिचित युवक आकर दे गया है, जैसे उसके जीवन की घटना का साम्य है। मानो एक साथ एक-सी दो घटनाएँ दो स्थानों में घटित हुई हैं, जिनमें से एक का प्रमुख पात्र वह स्वयं है और दूसरी का घनश्याम, इस कहानी का नायक। इस कहानी के पढ़ने के साथ-साथ उसे जो अपनी कहानी स्मरण होती गई है, उससे सुमति का निकटतम सम्बन्ध है। वह उसे एक क्षण भी भूल नहीं पाता है। पर भुलाने के लिए मजबूर है, इसलिए कि सुमति पर अब उसका किसी प्रकार का नैतिक अधिकार नहीं है। अब जो उससे सम्बन्ध का डोरा जुड़ा है वह केवल सहृदयता के नाते ही।

और सुमति की कहानी संक्षेप में इस प्रकार है—वह अपने वृद्ध माता-पिता की अकेली सन्तान थी। पिता उसके नौकरी से अवकाश प्राप्त कर चुके थे। उसके विवाह की समस्या ही उन्हें हल करनी शेष थी। उन्हीं दिनों हर्ष उनके पड़ोस में आकर रहने लगा था। सुमति के यहाँ उसका आना-जाना होने लगा। दोनों एक जाति के थे। जो थोड़ा-बहुत ऊँच-नीच का भाव था, उसे भुलाकर हर्ष का सुमति से विवाह भी हो सकता था। उसके माता-पिता राजी थे। सुमति हर्ष से मिलती रहती और दोनों ने एक साथ फोटो भी खिंचा लिया था। हर्ष कालेज में पढ़ने आया था और सुमति नवीं कक्षा में पढ़ रही थी। इसलिए कभी-कभी हर्ष सुमति को पढ़ाने भी बैठ जाता और जब हर्ष लम्बी छुट्टियों में घर आता तो सुमति उसे पत्र भेजा करती। दोनों के बीच सस्ते प्यार की बातें न होकर निर्मल-प्रेम और

पवित्र-स्नेह की मर्यादा निभाने की शपथ बार-बार खाई जाती रही।

मनुष्य जन्म से भावनाशील है ? यही उसका स्वभाव बन जाता है, और जब उसकी भावना का मूल्य नहीं आँका जाता तो वह अपनी आकांक्षाओं को, जिनके सहारे वह जीता है, मरा हुआ पाता है। तब शिथिल और मरणासन्न-सा इस विस्तृत-जगत् की ओर वह देखता तो है, पर ज्योतिहीन नेत्रों से।

हर्ष के पिता को यह सम्बन्ध पसन्द नहीं आया। उन्होंने, जब हर्ष घर छुट्टियों में आया था, उसकी अलमारी चोरी से खोल ली। उसमें सुमति के पत्रों के साथ हर्ष के साथ पति-पत्नी रूप में खींचा गया उसका फोटो भी मिला। उसी समय बाहर से घूमकर अचानक हर्ष भी आ गया। अपने पिता के इस कार्य की वह सराहना नहीं कर सका। दोनों के बीच गहरा विवाद उठ खड़ा हुआ और पिता के कहने पर वह उनकी सारी सम्पत्ति के उत्तराधिकारी बनने का मोह त्यागकर सदा के लिए घर से सम्बन्ध-विच्छेद कर मिर्जापुर अपने एक मित्र के यहाँ आ गया। यहीं से उसका स्वावलम्बी जीवन प्रारम्भ हुआ। पढ़ना उसने छोड़ दिया और पत्रकार बन गया। फिर कुछ दिनों बाद उसे खबर मिली कि सुमति का विवाह विश्वास से ठीक हो गया है। उसने हृदय पर पत्थर रख लिया। वह सुमति के विवाह में सम्मिलित हुआ और आँखों के सामने उसने विश्वास के साथ उसे मण्डप में बैठे और फिर भाँवर घूमते देखा और फिर अपना सहारा देकर वह उसे लेजाकर मोटर में विश्वास के साथ जानेके लिए उसके बराबर में बिठा आया। विश्वास ने उसकी ओर अर्थपूर्ण दृष्टि से सन्देहात्मक ढंग से देखा था। वह दृष्टि और उसकी आँखों में तैरने वाले वे अपवित्र विचार-जैसे लाल डोरे उसे आज भी नहीं भूलते हैं। उसकी होने वाली सुमति पराई हो गई थी।

आज उस युवक की कहानी के साथ-साथ उसकी अपनी कहानी, जो अनायास ही उसके मानस-पटल पर उतर आई, उसे एक मर्म-व्यथा से अभिभूत कर जाने के लिए पर्याप्त है। हर्ष उस समय अतीत के उस

अविस्मरणीय अध्याय को खुला छोड़कर और दूसरी ओर नहीं जा सका। उस कहानी को वह 'दर्पण' में अवश्य प्रकाशित करे, उसका मन उससे बार-बार अनुरोध करने लगा।

## ८

वर्षा इधर कई दिनों से नहीं हुई थी। क्वार आ लगा था। रात में हल्की-हल्की ठण्ड पड़ने लगी थी और दिन में वैसी ही तेज़ धूप होती थी।

सुमति का जीवन-क्रम इधर अस्त-व्यस्त सा चल रहा था। चारों ओर से आ जाने वाली अनेक प्रकार की बाधाएँ और अप्रत्याशित रूप से आ घिरने वाली विपदाओं की आशंका पग-पग पर लगी रहती थी। विश्वास से मिलने जाने का न तो उसका मन ही होता था और न उसकी आत्मा ही उसे वैसा करने के लिए प्रेरित कर सकी थी। हर्ष से सहायता की याचना करना उसकी 'नारी' को स्वीकार नहीं था। माता-पिता उसके पिछले वर्ष काल के मेहमान बन चुके थे। ऐसी स्थिति में वह अपने पैरों पर खड़ी भी हो तो कैसे? वह बिनी की ओर देखती और इस प्रश्न का उत्तर पाने की चेष्टा करती। पर वह अबोध बालिका भला मार्ग-निर्देशन की सामर्थ्य कहाँ रख सकती थी? वह उत्तर में उससे कसकर लिपट जाती। पर सुमति को जीवित रहना है। वह उस निराशापूर्ण वृत्त को तोड़ देना चाहती है जो उसके चारों ओर आ घिरा है। उसे किसी का सहारा नहीं चाहिए। अपने दुर्भाग्य को वह स्वयं बदल देगी।

उस दिन खाने से फ़ुरसत पाकर वह बिनी के कपड़ों में साबुन लगाने बैठ गई थी। कुछ कपड़े धोकर धूप में सूखने के लिए डाल आई थी और

कुछ में साबुन लगाना रह गया था। उसी समय अनायास ही उसे सुमित्रा की याद आ गई। सुमित्रा से उसका परिचय पत्र द्वारा हर्ष ने करा दिया था। हर्ष के उस पत्र को उसने कई बार पढ़ा था। उसे तब यह समझते देर नहीं लगी थी कि हर्ष सुमित्रा की ओर आकर्षित हो गया है। पत्र में परिचय के बाद से उसकी प्रशंसा ही की गई थी और उसे (सुमति को) भी उसी प्रकार साहस और धैर्य से जीवन-पथ पर चलने को कहा गया था। सुमति पर इस पत्र का क्या प्रभाव पड़ा, इसे तो वही जान सकी, पर तीन-चार दिन बाद जब सुमित्रा ने उसी के नाम से एक पत्र भेज दिया तो वह उसकी प्राप्ति से किंचित्-मात्र भी अप्रतिभ न होकर जैसे उसी की प्रतीक्षा करती जान पड़ी। सुमित्रा ने अपने संक्षिप्त किन्तु मार्मिक पत्र में भावुकता के प्रवाह के साथ अनुभूति और नारी-हृदय की वास्तविक पीड़ा का वर्णन किया था। उसने लिखा था कि यह एक संयोग की बात है कि वे दोनों पुरुष समाज की क्रूरता की शिकार बन गई हैं, किन्तु साथ ही यह भी कम आश्चर्य नहीं है कि उन दोनों को समान रूप से उसी पुरुष-समाज के दो व्यक्तियों का संरक्षण प्राप्त है। आगे उसने प्रसन्न और हर्ष के सम्बन्ध में दो-दो वाक्य उनकी प्रशंसा में लिखे थे और अन्त में लिखा था कि वह उससे मिलना चाहती है। बिन्नी को देखने के लिए उसकी उत्कट अभिलाषा है और एक बार लखनऊ जाकर विश्वास से भी दो बातें करने का उसका मन होता है। यदि वह वास्तव में संन्यासी बन जाने की क्षमता रखकर विश्व के जन-कलरव और अद्भुत आकर्षण से दूर रहना चाहता है, तो कोई बात नहीं। वह अपने पथ को और प्रशस्त करे और प्रकाश और मुक्ति की खोज में संलग्न रहे, किन्तु यदि वह इसी विश्व में फिर किसी युवती से सम्बन्ध जोड़ना चाहता है, तो यह सर्वथा अनुचित है, जिसे वह नहीं होने देगी। वह न्याय के द्वार खटखटाएगी।

सुमति के हाथ कुछ क्षण को सहसा रुक गए। सुमित्रा उसे अपने बहुत निकट जान पड़ी। हाथ का काम रोककर वह उसके विषय में अनेक प्रकार की कल्पनाएँ करती हुई उसके ही समान उसे देखने को आतुर हो

उठी। सुमित्रा किस परिस्थिति में प्रसन्न के यहाँ आश्रय पा सकी है और किस प्रकार वह पुरुष समाज की शिकार बनी है, यह सब वह हर्ष के पत्र से जान चुकी थी, पर उसे यह आशा नहीं थी कि हर्ष उसके विषय में भी सब-कुछ बता देगा। अभी तो हर्ष को स्वयं यह नहीं ज्ञात है कि विश्वास ने इस सम्बन्ध का पत्र उसे लिखा है। किन्तु जो-कुछ भी उसे ज्ञात है, वही क्या कम है ? और उसी के आधार पर उसने सुमित्रा को सब-कुछ बता दिया है।

मिनी कमरे से बाहर आकर बाथ रूम तक आ गई थी। सुमति उसे अपने पास आने के लिए मना करती रही, पर वह नहीं मानी। अपनी माँ के काम में हाथ बटाना शायद उसे ठीक लगा था। साबुन लगे कपड़ों को वह अपने छोटे और कोमल हाथों से उठा-उठाकर पटकने लगी। सुमति को उसने ऐसा ही करते देखा था।

सुमति की आँखों में आँसू छलछला आए। उसके ही कारण मिनी भी अनाथ हो गई है। विश्वास नाम जितना ही सुन्दर है और जितना ही उसमें तथ्य है, उतनी ही इस नाम के व्यक्ति में कुरूपता है। उसके मन के भीतर जो कलुष है और जो पवित्रता के मूल सिद्धान्त को ही ठोकर मार चुका है, उससे स्वार्थ-सिद्धि की आशा न की जाय, तो और क्या किया जाय ? और उसे विश्वास के वे शब्द भी हठात् स्मरण हो आए जो उसने विवाह के ठीक बाद उससे कहे थे। उसका हाथ अपने हाथ में लेकर, उसकी ठुड्डी ऊपर उठाते हुए जैसे उसके पुष्पित यौवन से पराग लूटने के लिए उसे निमन्त्रण देते हुए कहा था—'···तुम मुझे आज रात में ही जान लोगी सुमति कि मैं कितना···? क्या करूँ, नारी ही मेरी दुर्बलता है और वह भी इसलिए कि मैं जीवन-गति का संचार उसी पर आधारित मानता हूँ। प्रकृति के सौन्दर्य का निराकरण जब मनुष्य कर बैठता है तो उसे नारी से बढ़कर और कोई वस्तु नहीं लगती और यह लाज-शरम, अरे! आँखें ऊपर उठाओ, ठीक मेरी ओर देखो, कितना मादक-पूर्ण, कितना सुखकर हमारा सम्मिलन है। तुम सुमति मेरे हृदय को जीत चुकी हो। मैं जानता

हूँ कि जो कोई भी तुम्हें देखेगा, तुमसे प्रणय की भिक्षा माँगे न रहेगा, किन्तु मुझे विश्वास है कि तुमने अपने कौमार्य की रक्षा निश्चय ही की है। मैंने अनुभव किया है कि जो नारी पुरुष-संसर्ग से परिचित है वह···मेरा मतलब है कि उससे आलिंगन करते समय पुरुष उसे भी अपनी ओर···। नहीं, मुझे यह सब नहीं कहना चाहिए। हर्ष से तुम्हारा नाता रहा जरूर पर वह बुद्धू निकला। इसे तुम भी मानोगी। इस धरती पर जहाँ सब-कुछ यथार्थ है, वहाँ आदर्श का कोई स्थान नहीं है।'

सुमति कितनी देर तक हाथ का काम रोके अतीत की इन बातों का स्मरण करती रही, यह उसे नहीं ज्ञात हो सका। जब बिनी एकाएक रो पड़ी तो उसका ध्यान टूटा। बिनी ने साबुन लगा हाथ मुँह में दे लिया था जिसकी कड़वाहट से वह रो पड़ी थी। सुमति अपने हाथ धोकर उसे लेकर बाहर आ गई। उसे चुप कराने के बाद फिर उसका मन कपड़े धोने में नहीं लगा। सुमित्रा के पत्र का उत्तर उसे देना था। हर्ष का पत्र उसके पत्र के पहले ही आ चुका था। वह भी प्रतीक्षा में होगा। मन ने एक बार चंचल होकर कहा—'सुमति तू विश्वास की विवाहिता पत्नी है। तेरा उस पर पूरा अधिकार है। कानून से ही नहीं, नैतिक दृष्टि में उसे तेरा भरण-पोषण करना चाहिए। तू उसके पत्र का उत्तर जरूर दे और अपनी सामर्थ्य-भर अपने अधिकारों के लिए माँग कर। आखिर तू एक हिन्दू महिला है, जिसके संस्कार भी पति के साथ बँध जाते हैं। इस प्रकार चुप रह जाने से उसका साहस बढ़ता रहेगा और वह समाज में उच्छृङ्खलता फैलाता रहेगा। या तो उसे मार्ग पर ला, नहीं तो ऐसा पाठ सिखा कि वह भविष्य के लिए सुधर जाय।

मन के इस तर्क के सामने सुमति की चेतना कुछ क्षण के लिए जाग्रत अवश्य हो गई किन्तु उसकी अन्तरात्मा ने उसका साथ नहीं दिया। विश्वास ने उसका जो तिरस्कार किया है और उसकी जो घोर उपेक्षा की है, उसे पकड़कर वह उसके सामने अधिकारों की दुहाई और कर्तव्य की माँग को लेकर नहीं जाना चाहती। जिस मनुष्य ने सम्बन्ध की डोर तोड़ दी है,

उसमें गाँठ बाँधकर जोड़ना उसे निरापद और सुरक्षित बनाना नहीं है, अपितु भविष्य के लिए उपहास की सामग्री जुटाना और अपने नारीत्व पर स्वयं सांघातिक आघात करना है। मन तो चलायमान है। क्षण-क्षण में उसकी गति में परिवर्तन निहित है, तब उसी के इंगित पर कोई कार्य कर बैठना कहीं पर भी औचित्यपूर्ण नहीं कहा जा सकता। सुमति प्रत्येक स्थिति को अपने मनःस्थिति से तौलकर और अपनी आत्मा के संकेत को पाकर ही कोई कार्य करेगी। इस समय जो प्रवाह उसको अपने साथ बहा ले जाना चाहता है, वह सुमित्रा के पत्र से उत्पन्न हुआ है। इसीलिए कि वह क्रान्तिकारी विचारों की युवती है। संघर्ष उसे प्रिय है और इसका कारण कोई भी रहा हो, वह समाज से लोहा लेने के लिए मोर्चा खोलना चाहती है।

विनी को खेल में लगाकर और अपने को प्रकृतिस्थ कर वह फिर कपड़े धोने बाथ रूम में चली गई।

## ६

दो दिन पहले सुमति को 'दर्पण' की प्रति मिली थी। घर के काम से फ़ुरसत पाने पर वह परीक्षा के लिए तैयारी करती और जब मन थक जाता तो कुछ देर या तो आराम कर लेती, या 'दर्पण' या कोई अन्य पत्रिका पढ़ने लगती। 'दर्पण' के इस अंक में कई आकर्षक स्तम्भ थे। मिर्ज़ापुर वाली घटना, हर्ष की टिप्पणी, सम्पादकीय अग्र लेख, मार्मिक कहानी और दो सुन्दर कविताओं के अतिरिक्त अन्य सामग्री भी थी। इस अंक को देख कर यह कहा जा सकता था कि उसका सम्पादन कुशलता से किया गया है।

वैसे हर्ष जब बाहर होता था तो प्रेस वाले उसका कार्य-संचालन कर देते थे।

सुमति ने इन दो दिनों में 'दर्पण' को कई बार पढ़कर समाप्त कर पाया था। मिर्जापुर वाली घटना ने तो उस पर अपना प्रभाव डाला ही, किन्तु उससे भी बढ़ कर उस कहानी ने जैसे उसे एक साथ अनेक प्रकार की व्यथाओं से भर दिया। ठीक उसके जीवन का एक पहलू जो हर्ष से सम्बन्धित था, उसमें अंकित किया गया था और ठीक उसके जीवन की गति के समान कहानी को अधूरा छोड़ दिया गया था। पहले उसे लगा कि इस कथावस्तु को हर्ष ने ही स्वयं किन्हीं कारणों से अप्रकट न रखने की इच्छा से छद्मवेषी नाम से लिखा है, किन्तु जब अपरिचित नाम के साथ लेखक का फोटो भी उसे छपा दिखाई दिया तो वह अपनी आशंका को निर्मूल जान कर, कहानी की वास्तविकता पर विचारती हुई जैसे अपनी बेबसी पर रो पड़ी। जिस प्रकार रजत-पट पर दो घन्टे में जीवन के उतार-चढ़ाव की कहानी विस्तार से दिखाई जाती है, ठीक वैसा ही सुमति को इस कहानी को पढ़ने के साथ-साथ लगता रहा, जिसकी मुख्य अभिनेत्री वह स्वयं थी।

कहानी के प्रारम्भ में काली लकीरों के ऊपर हर्ष का नोट था—प्रस्तुत कहानी केवल कल्पना के सहारे लिखी जाकर भी एक तथ्य उपस्थित करने में सफल सिद्ध हो सकी है और यही कहानी लिखने का उद्देश्य भी है। लेखक को शायद ज्ञात नहीं है कि इस कथावस्तु को अंकित कर उसने किसी के जीवन की गहराई में प्रवेश कर कोई गुप्त रहस्य खोज लिया है। हम भविष्य में ऐसी ही स्वाभाविक और मनोवैज्ञानिक कहानियाँ अपने पाठकों को प्रस्तुत करने का प्रयत्न करेंगे।

सुमति ने समझ लिया कि हर्ष का नोट केवल उसे संकेत करने के लिए लिखा गया है। उन दोनों की अतीत की कहानी 'दर्पण' में दूसरे नामों से छपी है। वह सोचने लगी कि कहीं क्या ऐसा भी हो सकता है कि अनेक व्यक्तियों पर एक-सी घटनाएँ घटें? सब की अपनी स्थिति भिन्न होती है, अपनी विचारधारा अलग होती है। तब इस प्रकार का साम्य क्यों? जो भी हो वह हर्ष से इसका कारण पूछेगी अवश्य।

और हर्ष के साथ उसका जो सम्बन्ध था उसे लेकर ही एक दिन उसका पिता से विवाद हो गया था। उसका विवाह विश्वास के साथ हो चुका था और वह पाँच महीने ससुराल में रहने के बाद घर लौटी थी। संयोग की बात उसी दिन हर्ष भी आ गया था। जब वह घर में नहीं था, उस समय पिता ने कहा था—'तू विवाहिता है बेटी, समाज ने आँखें खोलकर तुझे विश्वास के साथ गठबन्धन में बँधते देखा है, तब तू हर्ष के साथ अब उतनी स्वच्छन्दता से नहीं मिल सकती। किसी को लांछन लगाने से रोका नहीं जा सकता है।'

सुमति रोष से लाल हो गई थी किन्तु संयत स्वर से बोली—'तो पिताजी समाज की बाह्य-दृष्टि के साथ अन्तर की दृष्टि भी होनी चाहिए। किसी के साथ मिलने-जुलने से ही यदि अपवित्रता आ जाती है, तो उसे मैं ही क्या कोई नहीं मानेगा? मुझे खेद है कि आपने हर्ष को अब तक नहीं परख पाया है। उसने मेरे लिए अपनी बलि चढ़ा दी है पिता जी, वह अपनी पैतृक-सम्पत्ति तक से वंचित कर दिया गया है और अब भी आपका समाज उसे अपमानित और लांछित करने को तैयार है? उसकी निष्ठा और सहृदयता का कोई मूल्य नहीं आँका जा सकता?'

पिता जी वृद्ध थे। जीवन-भर उन्होंने शान्ति से अपने दिन बिताए थे। अधिक बातें करना या बहस करना उन्हें कभी भी नहीं रुचा था। इस समय सुमति की बातें सुन कर वे विस्मय से उसकी ओर देखते रह गए। वे जानते थे कि सुमति भी उनकी भाँति शान्त प्रकृति की लड़की होगी। जैसा जो-कुछ सामने आएगा, उसे अंगीकार करने में संकोच नहीं करेगी और न उसके फलाफल पर पूर्व से विचार करेगी। किन्तु इस समय उसने जो तर्क उपस्थित कर दिया उससे वे प्रभावित तो नहीं हुए, पर बेचैन अवश्य हो उठे। उन्हें यह ज्ञात था कि हर्ष का सुमति के साथ अनुचित सम्बन्ध नहीं है। हर्ष स्वयं एक गम्भीर प्रकृति का आदर्शवादी युवक है। वह इस प्रकार किसी युवती के जीवन से खेल नहीं कर सकता, किन्तु साथ ही वे विश्वास को भी समझ चुके थे। उसकी दृष्टि उन्हें पसन्द नहीं आई थी। उसके चेहरे

की बनावट भी कुछ ऐसी थी, कि साधारण मनुष्य भी उसकी ओर से उदासीन हो जाता था। एक आन्तरिक घृणा की भावना सहज ही उत्पन्न हो जाती थी। किन्तु परिस्थिति ने उन्हें इतना विवश कर दिया था कि वे उसके साथ सुमति का विवाह कर देने को बाध्य हो गए थे।

उन्होंने अपनी दृष्टि सुमति के मुख पर से हटाकर दीवार पर टँगे भगवान् श्रीकृष्ण के चित्र पर लगा दी, फिर बोले—'मैं तर्क नहीं करूँगा बेटी, पर यह जरूर कहूँगा कि तुझे हर्ष से नाता तोड़ देना चाहिए। हो सकता है कि किसी दिन जब मैं न रहूँ, यह सम्बन्ध एक घटना बनकर उग्र रूप धारण कर ले और तुझे, ईश्वर न करे ऐसा कभी हो, विश्वास इसी कारण सन्देह में''''। आगे मुझसे कुछ मत कहना सुमति। विश्वास विवाह में ही मुझ से हर्ष के विषय में पूछ चुका है। मैंने जो सत्य था वह बता दिया। झूठ बोलने का कोई कारण मेरे पास नहीं था।'

सुमति को जैसे एक गहरा आघात लगा—एक धक्का जिसने जैसे उसे पीछे धकेल दिया हो। इतना पीछे कि वह उठकर सम्भल भी न सके। वह चुपचाप कमरे से उठ आई। फिर उसी दिन उसने हर्ष को चले जाने को मजबूर कर दिया। हर्ष यों बिना कारण जाने चला जाने वाला नहीं था, किन्तु उसके सामने वह अपने उस तर्क का सहारा नहीं ले सकी, जिससे उसने अपने पिता को पराजित कर देने का दुस्साहस किया था। उसने बार-बार पूछने पर केवल इतना ही कहा कि उसे अब उसका कहना मानकर चला ही जाना चाहिए, वह उसके प्रश्नों का उत्तर नहीं दे सकेगी।

हर्ष मिर्जापुर वापस चला गया था।

सुमति 'दर्पण' में प्रकाशित कहानी पढ़ने के बाद अनायास ही इस सबको सोच गई थी। जिस अप्रिय घटना की आशंका उसके पिता ने अपने जीवन-काल में की,वही सत्य सिद्ध हो गई थी। वस्तुस्थिति जो भी रही हो, जिसे विश्वास ही अकेला समझता था, इसलिए कि वह उसका संचालक और सूत्रधार दोनों था, किन्तु उसने अपने पत्र में यह स्पष्ट कर दिया था कि हर्ष के कारण ही वह उससे सम्बन्ध-विच्छेद करने को विवश हो सका

है। सुमति कुछ क्षण तक उनका स्मरण करती रही, फिर 'हाय पिता जी' कहकर रो पड़ी। उसके अश्रु-बिन्दु टप-टपकर नीचे गिरते रहे जिससे 'दर्पण' की सारी प्रति भीग गई।

## १०

मनुष्य जब नियति के खेल खेलने में, अपने को सरकस के पालतू जानवरों की भाँति समझकर प्रत्येक अवस्था में उसी के आश्रित हो जाता है, तो वह अपने कृत्यों को भुलाकर भाग्य को कोसता हुआ ईश्वर पर अपना रोष उतारता है।

उस दिन नाव वाली घटना के बाद से विश्वास और हरबंस एक-दूसरे को समझ गए थे। विश्वास ने मन-ही-मन निश्चय कर लिया था कि वह हरबंस को परास्त करके ही रहेगा और हरबंस हर समय सचेत रहने लगी कि वह कहीं ऐसा अवसर न पा सके जो उसे समर्पण करने को बाध्य कर सके। यदि तेजासिंह उसका विवाह कर दे तो वह सहज ही इस संकट से मुक्ति पा जायगी। पर विश्वास को वह उसकी बद-नीयती और कामुकता का फल भी चखाना चाहती थी। उसे सुमति से भी पता लगाकर मिलना है, इसे भी वह नहीं भूली। तेजासिंह से उन दोनों में से किसी ने भी उस दिन की घटना की चर्चा नहीं की थी। विश्वास तो उस सबको कह ही नहीं सकता था, किन्तु उसके चरित्र को लांछित करने के लिए कोई बनावटी बात जरूर कह सकता था और हरबंस विश्वास के विरुद्ध सब-कुछ कह सकती थी, पर वह भी मौन ही रही।

तेजासिंह एक दोपहरी को, जिस काम के लिए वह कानपुर गया था, उसे

लेकर विश्वास के पास आ बैठा। हरबंस उस समय नहीं थी। वह विश्वास से हरबंस के विवाह के सम्बन्ध में सलाह लेना चाहता था और साथ ही बारात का सत्कार का सारा प्रबन्ध भी होटल की ओर से ही कराना चाहता था। जेब से सिगरेट की डिब्बी निकालकर उसकी ओर बढ़ाता हुआ बोला वह—'विश्वास बाबू, अगर आपके होटल में कोई अपनी बारात ठहराए तो आप उसका खाने-पीने का ठीक और माकूल इन्तज़ाम तो करा ही सकते हैं?'

विश्वास ने एक सिगरेट जलाते हुए अर्थ-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा, फिर मुस्कराकर बोला—'आज यह नई बात कैसी की आपने? सिगरेट न पीकर उसकी डिब्बी जेब में रखना तो एजेण्ट ही जानते हैं, जो दूसरों को उल्लू बनाकर फाँसना अपना काम समझते हैं। मैं समझता हूँ कि आपने तो किसी की एजेन्सी ले नहीं रक्खी है?'

तेजासिंह उत्तर में कुरसी पर लापरवाही से पैर रखकर बोला—'नया दुनिया में कुछ नहीं है भाई साब, सब कुछ पुराना है। वैसे हम-आप हर वक्त कुछ-न-कुछ ऐसा काम किया ही करते हैं, जो नया कहा जा सकता है। सिगरेट मेरे एक दोस्त दे गए थे, मैंने रख ली। सोचा आपके काम आया करेगी। इसकी तारीफ़ बड़ी की है उन्होंने। धुँआ तो बड़ा खुशगवार है। और अब रही एजेन्ट बनने की बात, वह मेरी समझ में आपके लिए ज्यादा मौज़ूँ रहेगी। मैं तो उतना पढ़ा-लिखा भी नहीं। क्यों क्या खयाल है?'

जब से 'मदन होटल' खुला था, उस दिन से आज प्रथम बार विश्वास और तेजासिंह के बीच परिहास का वार्तालाप हुआ था। अभी तक वे दोनों जब मिलते थे, तो होटल के सम्बन्ध में ही चर्चा करते थे। पर इस समय दोनों का बात-चीत करने का ढंग स्नेहपूर्ण होने के साथ सौहार्द्रपूर्ण भी था। तेजासिंह सोचता था कि होटल के बेयरे बारातियों की खातिर ठीक से करेंगे, जिससे उसकी भी प्रशंसा होगी और साथ ही खर्च भी कम होगा। मुनाफ़ा निकाल कर केवल लागत-मात्र पर वह पार्टी और चाय आदि का प्रबन्ध चाहता था। उसके पास वैसे बचत में इतना पैसा नहीं था, इसलिए विश्वास से सौदा पटाना ही उसके लिए ठीक था, और विश्वास इस

अवसर से यह लाभ उठाना चाहता था कि हरबंस उसकी पत्नी न बनकर भी, उसकी वासनात्मक-प्रवृत्तियों को शान्त करते रहने के लिए होटल में उसके साथ स्वच्छन्द रूप से रहने लगे और तेजासिंह इसके लिए यदि अपनी स्वीकृति न भी दे सके तो कोई आपत्ति भी न उठाए। दोनों की अपनी कमजोरी थी। यदि एक धन से हीन था तो दूसरा चरित्र से पतित।

विश्वास ने कुटिलता से एक पैनी दृष्टि तेजासिंह पर डाली, फिर मस्ती और बेफ़िकरी से धुएँ के गोले निकालता हुआ कहने लगा—'ख़याल तो भई, बहुत दुरुस्त है। और हाँ सिगरेट के लिए, आपको थैंक्स। सचमुच बेहद अच्छी है। मेरे लिए एक टिन मंगवा देना। एजेन्ट बनने के लिए, आप चाहें तो मैं सब तरह से तैयार हूँ, पर सोचना पड़ेगा कि एजेन्सी किस चीज की ली जाय। आप तो खाली रहते हैं, माल सप्लाई करना आपके जिम्मे रहेगा।'

तेजासिंह विश्वास के इस व्यंग्य को समझ नहीं सका, जिसके भीतर यह कुत्सित मनोवृत्ति छिपी थी, कि मदन होटल में मुसाफ़िरों को अभी तक जो आराम नहीं मिल रहा है, उसका भी प्रबन्ध किया जाय। तेजासिंह खाली रहता है, इसलिए वह मुसाफ़िरों की रुचि के अनुसार युवतियों को ले आया करे और विश्वास मैनेजर के नाते इस सुविधा को संचालित करता रहेगा। तेजासिंह जमाने की ठोकरें अवश्य खा चुका था, किन्तु वह इतना कुशल नहीं हो सका था कि इस परिहास के भीतर छिपे हुए कटाक्ष को सहज ही समझ लेता। विश्वास की एजेन्सी लेने वाली बात का कोई अर्थ न निकालकर वह फिर अपनी ही बात पर लौट आया। मेज़ पर रखे हुए रजिस्टरों में से एक को उठाकर उसके पृष्ठ पलटता हुआ बोला वह—'मज़ाक छोड़िए, मैंने जो पूछा था उसके बारे में आप क्या कहते हैं?'

विश्वास ने उसके आन्तरिक भावों का सही अनुमान लगा लिया था; कि वह हरबंस के विवाह के सम्बन्ध में भूमिका बाँध रहा है, किन्तु स्वयं अपनी बात पहले न कहकर वह उसके मुख से ही इसे सुनना चाहता था। अतएव गम्भीरता से विचारने का भाव बनाकर कहा उसने '—बारात हमारे

होटल में मज़े से ठहर सकती है और हमारे नौकर बारातियों की अच्छी से अच्छी खातिर भी करेंगे, पर इसमें लड़की वाले का खर्च ज़्यादा ही होगा। होटलों को तो ऐसे काम में अच्छा फ़ायदा हो जाता है जिसके लिए हम लोग ही क्या सारे 'बिज़नेस' करने वाले सदा तैयार रहते हैं।'

तेजासिंह को विश्वास के उत्तर से कोई आशा नहीं बँधी। आपसी व्यवहार से परे यदि वह इसे व्यावहारिक दृष्टि से देखेगा तो निश्चय ही यह सौदा महँगा पड़ेगा, जब कि वह इस ओर बहुत कम ही नहीं, केवल नाम-मात्र का व्यय करना चाहता है।

उसे चुप रहता पाकर विश्वास आगे कहने लगा—'साफ़-साफ़ बताइए किसकी शादी होगी? बारात कहाँ से आएगी? कब आएगी? कितने लोग होंगे? और किस ढंग का खाना-पीना होगा? आप तो पहेली लिए बैठे हैं।'

तेजासिंह रजिस्टर में लिखे विवरण को देखने लगा था। संयोग से उसकी दृष्टि उस हिसाब पर पड़ गई थी, जिसमें विश्वास ने अपने व तेजासिंह और हरबंस के खाने-पीने के व्यय व स्थायी रूप से रहने का किराया लगाया था। अभी तक उसने कभी इस हिसाब को देखने की इच्छा भी नहीं प्रकट की थी। विश्वास महीने-भर की आय व व्यय घटाकर जो बचत होती थी, वह मोटे तौर से उसे बताकर, उसका भाग निकाल देता था। आज तेजासिंह ने जो विवरण अपनी आँखों देखा, उससे वह तुरत यह समझ गया कि उसके हिसाब में विश्वास ने आवश्यकता से अधिक व्यय डाला है। उसने अविश्वास की भावना से एक गम्भीर दृष्टि से उसकी ओर देखा।

विश्वास ने उसकी दृष्टि का भाव पढ़ लिया किन्तु इस अवसर पर इस अप्रिय प्रसंग को समाप्त करने का निश्चय कर उसने तेजासिंह के हाथ से रजिस्टर लेकर बन्द कर दिया और अपनी सफ़ाई देते हुए बोला—'वह सब मैं बाद में आपको समझा दूँगा। पहले यह बताइए कि शादी तो आप ही हरबंस की करने वाले हैं शायद, पर न जाने क्यों आप अब तक अपनी बात नहीं कह पा रहे हैं? मैं चाहता हूँ कि आपके इस कार्य में हर प्रकार से

आपका हाथ बटाऊँ। पर एक बात आप मुझे यह बताइए कि हरबंस से आपका रिश्ता क्या है?'

तेजासिंह क्रोध से उबल पड़ा। ऐसे बेतुके और भद्दे प्रश्न के पूछे जाने की अपेक्षा वह विश्वास से ही क्या, किसी से भी नहीं रखता था। हरबंस, यह सच था कि उस से उत्पन्न नहीं थी, किन्तु जिस स्थिति में वह उसे मिली थी, उसमें उसे पुत्री मान लेने को वह बाध्य हो गया था। वह एक दर्द-भरी और रोमांचक कहानी है, जिसे वह अपने मन से बाहर निकाल देने का प्रयत्न निरन्तर करता रहा है। जिस दिन से उसने हरबंस को 'बेटी' कहकर पुकारा है, वह उसे ठीक उसी रूप में देखता आया है। विश्वास तब इस प्रकार की बात पूछने का साहस कैसे कर सका, इसे वह किसी प्रकार भी नहीं सोच सका। अपनी नाराजी प्रकट करता हुआ बोला वह—'आपको ऐसे बेहूदे ढंग से सवाल पूछते खुद शरम आनी चाहिए। आप बाप-बेटी के रिश्ते को भी शक की निगाह से देखते हैं? न जाने कैसे इधर के लोग हैं!'

उसी समय होटल का नौकर एक मुसाफ़िर को लेकर आ गया। विश्वास उसके लिए कमरा बताकर और नौकर को सारी आवश्यक बातें समझाकर तेजासिंह से नम्रता से कहने लगा—'आप तो नाराज हो गए। इधर के लोग जैसे हैं, वैसे आप जान ही गए हैं। उनमें से एक मैं ही हूँ, जिसने अपना पैसा फँसा कर आपको इतने बड़े होटल का मालिक बना रखा है। अब उधर के लोगों की सुनिए। मैं यहाँ ऐसी कई जगहें जानता हूँ, जहाँ बाप की बेटियाँ और भाई की बहनें···मजबूर की जाती हैं। आप समझ गए न? साफ़-साफ़ कहना ठीक नहीं। और कौन जानता है कि कल मदन होटल बन्द हो जाय तो कौन-सी मुसीबत न उठानी पड़े? मैं चाहता हूँ कि आप हम लोगों पर पूरा भरोसा करें।'

तेजासिंह का क्रोध कम पड़ गया था और वह भवों में बल डाले अशान्त और अधीर भाव से विश्वास की बात पर सोच रहा था।

विश्वास का कहना था कि उसने अपने जीवन में अवसर से सदा

लाभ उठाया है और अपने पक्ष में स्थिति को मोड़ लिया है। आज भी ऐसा ही एक अवसर उसने पाया है। तेजासिंह, अल्पबुद्धि के तेजासिंह के अविकसित विचारों पर विजय पा जाना उसके लिए एक साधारण बात थी। उसने आगे कहा—'और देखिए, आपको नेक सलाह देना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। मेरी बातों का बुरा मानने के स्थान पर आप उन पर गहराई से विचारा करें। आप लोग जब हमारे बीच आ गए हैं, तो अब पराए बनकर या मेहमान के तौर पर नहीं रह सकते। आप सबको हम सबमें घुल-मिल जाना होगा। एक भाषा, एक जाति, एक पहनावा तथा एक-से आचार-विचार बनाने होंगे। इसी में, जिन्हें शरणार्थी कहा जाता है, उनका कल्याण है। हमारा विश्वास प्राप्त कीजिए और निश्चय रूप से यह समझकर कि आपको सदैव यहीं रहना है, हम लोगों के साथ अपने सम्बन्ध और मजबूत कीजिए।'

तेजासिंह जैसे सोते से जाग पड़ा। अब उसकी समझ में आ रहा था कि विश्वास क्या कहना चाहता है? घुमा-फिराकर वह उसे यह समझा देना चाहता था कि हरबंस का विवाह उसके साथ कर दिया जाय, जिसके लिए वह कभी तैयार नहीं था। उसके देश के लोग, जो अपना सब-कुछ लुटाकर यहाँ तक आए हैं, वह उनमें से किसी को, उसका घर बसाने के लिए हरबंस को सौंपे, या कि उसे, जो उसका कोई नहीं है और जहाँ के लोगों ने उसके साथ किसी प्रकार की भी हमदर्दी नहीं बरती है। यह सब जो उनके लिए हो रहा है, वह सरकार कर रही है या उसके वे अधिकारी जो इस बटवारे के जिम्मेदार हैं। उसे अपने भागकर आने के बाद की एक घटना स्मरण हो आई, जब शरणार्थी-कैम्प में एक व्यक्ति उससे कई बार केवल इसलिए मिलने आया था कि वह हरबंस को अपने साथ ले जाना चाहता था और अन्त में धमकी भी दी थी कि यदि वह उसकी बात नहीं मानेगा तो उसे मार डाला जायगा और हरबंस को वह तब आसानी से पा लेगा। तेजासिंह विपत्ति से घिरा था। हरबंस का तब वह एक संरक्षक ही था केवल। भारत आने वाले काफ़िले में उसका, हरबंस और उसके वृद्ध पिता

से साथ हो गया था। फिर उसके मर जाने पर जब हरबंस फूट-फूटकर रोई थी उस समय तेजासिंह ने उसे बेटी कहकर पुकारा था और जन्म-भर के लिए उसके पिता बने रहने की शपथ ली थी।

उसने सचेत होकर कहा—'पर मैं हरबंस का विवाह तय कर चुका हूँ। अगले महीने उसकी शादी हो जायगी और न भी तय होती तो भी मैं आप लोगों के हाथ उसे नहीं दे सकता। आप लोग दूसरों की मुसीबतों में अगर उसे सहायता भी देते हैं, तो भी शर्तों के साथ और वे शर्तें होती हैं कि उसकी लड़की या बहन आपके साथ ब्याह दी जाय। औरत का सौदा''छिः आप लोगों को शरम भी नहीं आती?' कहकर वह उठकर बाहर चला गया।

विश्वास जिस अवसर से लाभ उठाना चाहता था और जिसे जीतने के लिए उसने अपना अस्त्र फेंका था, उसे निष्फल गया जानकर भी वह निराश नहीं हुआ। अब वह अपने दाँव-पेंच को दूसरे ढंग से प्रयोग करने के लिए पृष्ठभूमि तैयार करेगा। हरबंस को उसे अपनी अंकशायिनी बनाना है, यह उसने निश्चय कर लिया है।

## ११

उसी सन्ध्या को, जिस समय हरबंस अपना श्रृंगार कर तेजासिंह के साथ घूमने जाने के लिए कमरे से बाहर निकली, उस समय विश्वास सड़क की ओर वाले बरामदे में कुरसी डाले बैठा था और अपने स्वभाव के अनुसार सड़क पर आने-जाने वाली प्रत्येक युवती को अतृप्ति से देख रहा था। जीने से उतरकर जब गली पार कर, हरबंस और तेजासिंह सड़क पर

आ गए तो हरबंस ने आगे बढ़ते-बढ़ते एक बार होटल की ओर देखा और तब उसे विश्वास भी दिखाई पड़ गया। उसने अपनी दृष्टि फेरते-फेरते यह भी स्पष्ट देख लिया कि विश्वास ने उसकी ओर भद्दे ढंग से संकेत किया है, किन्तु तेजासिंह से उसकी चर्चा किए बिना ही वह उसके साथ आगे बढ़ गई।

और विश्वास जिस समय संकेत कर रहा था, बरामदे में वह मुसाफ़िर भी आ खड़ा हुआ था, जो उसी दिन मदन होटल में उस समय आया था, जब विश्वास तेजासिंह से उलझ रहा था। अपने कमरे की ओर जाते-जाते उसने बाहर खड़े होकर उनकी बातें सुनने का प्रयत्न भी किया था। फिर उसने हरबंस के आने पर उसे देखा था और इस समय उसके चले जाने पर विश्वास से उसके विषय में बातें करने वह बरामदे में आया था। यहाँ उसने विश्वास को संकेत करते देखा तो आगे बढ़कर बड़ी बेतकल्लुफ़ी से उसके कन्धे पर हाथ रखकर बोला—'मैनेजर साहब, यह क्या हो रहा है? अरे, मैं भी उसी का पुजारी बन कर इस होटल में आया हूँ। जरा इधर देखिए।'

विश्वास अचानक उसके कन्धे पर हाथ रखने से चौंक पड़ा था। उसकी ओर जो घूमकर देखा तो, उसे शरारत से मुस्कराते पाया। उसके इस परिहास और बिलकुल ही आपसी व्यवहार से वह जैसे चिढ़ गया। उसे इसलिए उसका आना और भी बुरा लगा कि उसकी दुर्बलता को वह जान गया था। आँखें चढ़ाकर और भवों में बल डाल कर उसने कहा—'आपका मजाक मुझे पसन्द नहीं आया। आपको सोच-समझकर बात करनी चाहिए।'

वह एक कुशल अभिनेता की भाँति शब्दों के उच्चारण को संतुलित करता हुआ बोला—'जो बुरा लगा हो, उसके लिए माफ़ करें, पर मैं जो-कुछ कहूँ उसे आप सुन अवश्य लें। आइए कुरसी पर बैठें।'

विश्वास का मन उससे बात करने को नहीं हो रहा था, पर वह मजबूर था। साफ़ इन्कार नहीं कर सकता था इसलिए कि होटल का मैनेजर

अपने मेहमानों की उपेक्षा नहीं कर सकता। जो कुछ वे कहेंगे, उसे सुनना पड़ेगा इसलिए कि उसका व्यापार उन पर निर्भर है।

कुरसी पर बैठ जाने के बाद उस नये मेहमान ने अपने अभिनय का जादू डालते हुए कहा—'मैं लम्बी-चौड़ी बातें नहीं करना चाहता मैनेजर साहब, वैसे आपकी मेहरबानी से सारे देश में घूम चुका हूँ। लखनऊ में तो जैसे रहना ही होता है। इस बार आपके होटल में आने को मैं अपनी खुशकिस्मती समझता हूँ। इस होटल की बड़ी तारीफ़ मैंने सुनी थी और ठीक वैसा ही पाया भी। मुझे यह कहने में जरा भी संकोच नहीं कि आप सचमुच अच्छे मैनेजरों में से एक हैं। हाँ, एक बात बताइए कि हरबंस कौन है? लोगों ने मुझे बताया है कि वह होटल में इसलिए रखी गई है कि उसके नाम से मेहमान आया करें और आप यकीन करें, तो मैं भी उनमें से एक हूँ। अपना घर-बार कहीं है नहीं। शादी के नाम से मुझे नफ़रत है, पर इसी तरह आप लोगों की मेहरबानी के सहारे जिन्दगी की बे तूफ़ान की घड़ियाँ भी आराम से कट जाती हैं। मैं आज के लिए···।'

विश्वास के सारे शरीर में क्रोध की बिजली दौड़ गई। उसने बीच ही में उसे चुप कराते हुए कहा—'बहुत हो गया जी, आगे और कुछ मत कहना। मुझे आपने क्या समझ रखा है? उस लड़की का मेरे होटल से कोई सम्बन्ध नहीं है। इस तरह की बातें करने से पहले आपको सब-कुछ जान लेना चाहिए था। मदन होटल में ऐसा गन्दा व्यापार नहीं होता है। आप अपने मतलब के लिए कहीं और जगह तलाश कीजिए।'

उस मुसाफ़िर ने जेब से सिगरेट-केस निकालकर उसे खोलते हुए विश्वास की ओर बढ़ा दिया, फिर एक दूसरी सिगरेट अपने मुँह में लगाकर 'लाइटर' से दोनों सिगरेट जलाते हुए बोला—'देखिए, बुरी-से-बुरी बात पर भी 'बिजनेस' में नाराज नहीं हुआ जाता है मैनेजर साहब। मैंने आपकी शान के खिलाफ तो कुछ कहने की हिम्मत नहीं की। लोग बताते हैं कि हरबंस तेजासिंह की लड़की नहीं है। वह उसे होटल में इसीलिए लेकर रहता है कि मेहमान उसकी खूबसूरती देखकर यहीं आया करें। कुछ

लोगों ने तो मुझसे यह भी कहा है कि वह मेहमानों की खातिर भी करती है। आप समझे न? नहीं तो भला अपनी जवान लड़की लिए होटल जैसी जगह में, जहाँ सभी तरह के लोग आते हैं, कौन रह सकता है?'

विश्वास का क्रोध शान्त हो गया था। पर हरबंस, जिसे वह अपनी पत्नी बनाना चाहता था, वह होटल के मेहमानों की काम-वासना शान्त करे, इसे भी वह सहन नहीं कर सकता था। उसने अधजली सिगरेट को दूर फेंकते हुए कहा—'मजबूरी सभी कुछ करा सकती है। तेजासिंह की लड़की है हरबंस, जो पवित्रता से अपना जीवन बिताती है, यह मैं जानता हूँ। दुनिया तो बड़ी बेहूदी बातें सोच सकती है। अब तेजासिंह उसका विवाह करने जा रहा है। अगर आप हरबंस के लिए ही मदन होटल में आए हैं, तो आपको निराश होना पड़ेगा। साथ ही कहीं तेजासिंह से आपने कुछ कह दिया तो वह आपको मार डालेगा। समझे जनाब। ऐसी हिम्मत न करिएगा।'

मुसाफ़िर न तो विचलित ही हुआ और न घबराया। अपनी हर समय होंठों पर खेलने वाली सहज मुस्कान के साथ उसने गर्व से कहा—'मरने-जीने से मैं डरता नहीं। अब तक कई बार ऐसे मौकों से पार पा चुका हूँ और सब में मेरी जीत हुई है। आप मेरी मदद करें तो हरबंस को मैं दो-चार दिन में राजी कर अपने साथ ले जा सकता हूँ। मेरे पास उसे अपने काबू में करने के पूरे साधन हैं। जरूरत पर ताकत की आजमाइश भी करते हुए आप देख सकते हैं। और तेजासिंह....उसे तो मैं बहुत जल्द इस दुनिया से कूच करा सकता हूँ। किसी को खबर भी नहीं होने पाएगी। पर मेरी एक शर्त रहेगी इस सब के लिए। उसे आपने मान लिया तो हरबंस हम दोनों की होकर रहेगी। आखिर आप भी तो अभी जवान हैं और आपको मैं समझता हूँ औरत की जरूरत भी रहती होगी। घर-बार लगता है आपके भी नहीं है। सोच लीजिए, अभी मैं कई दिन तक यहाँ रहने का इरादा कर रहा हूँ।' कहकर वह उठकर बाहर जाने लगा।

विश्वास इस मनुष्य से भयभीत हो उठा था। यह बाहर से जितना

भला लगता है, हृदय से उतना ही दुष्ट है। होटल में कहीं हत्या हो गई तो वह भी फँसेगा और कौन जानता है, यह भयानक मनुष्य अपना सारा अपराध उसके ही सर मढ़कर हरबंस को साथ ले जाय ? फिर भी उसने साहस कर उसे रोकते हुए कहा—'आप तो बड़े खतरनाक आदमी लगते हैं। कहीं पुलिस आकर आपको पकड़ न ले जाय ?"

'पुलिस', कहकर वह क्रूरता से अट्टहास करता बोला—'आप तो मैनेजर साहब बड़े भोले हैं। पुलिस क्या इन जुर्मों के बारे में जानती नहीं या उसकी निगाह से अपराधी छिपा रह सकता है ? उसे सब पता रहता है। आप उसकी फ़िक्र न करें। मैं हर काम बड़े एहतियात से करता हूँ। अब मुझे अपने एक दोस्त से मिलने जाना है, जिसका नाम अगर मैं बता दूँ, तो शायद आप अभी चीख-पुकार मचाने लगेंगे। अब मुझे रोकिए मत। कल सवेरे आपसे फिर मिलूँगा और आज रात में तेजासिंह से भी बातें होंगी। आप चाहें तो छिपकर उन्हें सुन सकते हैं और हाँ, अगर आप मेरी बात मान गए तो हरबंस वैसे आपके पास रहेगी, पर जब मैं चाहूँगा उसे आकर ले जाया करूँगा। मेरी समझ में आपको यह सौदा बहुत सस्ता पड़ेगा। औरत से प्यार मत करो। उसे खिलौना समझकर खेलो और जब जी चाहे उसे तोड़कर दूसरा बदल लो। अच्छा, अब चला।'

विश्वास को अपने जीवन में इतना भयंकर मनुष्य कभी नहीं मिला था। वह परेशान हो उठा और बरामदे में टहलने लगा। अनेक प्रकार की दुर्दमनीय भावनाएँ उसे आकर आतंकित करने लगीं। कहीं उसने तेजासिंह का खून कर दिया, या हरबंस को ही मार डाला, तो क्या होगा ? और यह भी सम्भव है कि वह उसका हरबंस से विवाह करने का विचार जानकर उसे ही ठिकाने लगा दे, फिर हरबंस को लेकर मौजें उड़ाए। वह क्या निश्चय करे, यह उसके लिए कठिन हो गया। आज की रात उसकी बेचैनी से कटेगी और शायद सारी रात जागने पर भी वह किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुँच सकेगा। फिर उसने सोचा कि इस अपराधी और हत्यारे को पुलिस के

हवाले कर दें। उसने जो बातें कही हैं, वे सच ही हैं, इसका भी क्या प्रमाण है? हो सकता है कि वह कोरा बातूनी निकले और इस प्रकार अपने रोब-दाब में हरबंस को ले जाना चाहता हो। विश्वास के मस्तिष्क में सभी प्रकार के विचार चक्कर लगाते रहे और उसकी मानसिक अशान्ति बढ़ती ही रही।

फिर रात में कब वह पुरुष लौटा और उसकी तेजासिंह से बातें हुई भी या नहीं और हुई भी तो क्या, इसे जानने का प्रयत्न उसने नहीं किया, किन्तु एक बात पर उसने अवश्य गम्भीरतापूर्वक विचारा कि उसके मार्ग से यदि तेजासिंह हट जाय तो हरबंस को उसे पाने में कोई अड़चन न होगी। किन्तु इस कार्य में उस शैतान की सहायता लेना जैसे हरबंस को खो देना था। जब वह उसके साथ विवाह कर अपना घर बसाना चाहता है, तब यह कैसे सम्भव होगा कि वह दूसरे के साथ भी रह सके? उसने निश्चय किया कि वह दृढ़ता से इस स्थिति का सामना करेगा और अपने कपटी स्वभाव के द्वारा उसका विश्वास पाकर एक दिन फिर उसे भी पुलिस के सुपुर्द कर देगा। वह भी उस दिन जानेगा कि संसार में सभी लोग एक-से नहीं रहते हैं, जिन्हें भयभीत कर वह जो चाहेगा करा लिया करेगा।

सबेरे वह जान-बूझकर देर से सोकर उठा। नौकर कई बार आकर दरवाज़ा बन्द पाकर लौट गया। जब उस मुसाफ़िर ने कमरे का दरवाज़ा मना करने पर भी भड़भड़ाना प्रारम्भ कर दिया, तब विश्वास को उठना पड़ा। चटखनी खोलकर उसे भीतर ले जाकर वह बोला—'रात तो ऐसी नींद आई कि अब तक सोता रहा पड़ा। आप कब आए, सो भी मुझे पता नहीं चला।'

उत्तर में कुटिल हास्य का सहारा लेकर वह बोला—'और मुझे बिलकुल ही नींद नहीं आई। सारी रात हरबंस मुझे बेचैन किए रही। सुना मैनेजर साहब, मैं उसके बिना नहीं रह सकूँगा। लगता है अब तक जो नहीं हुआ था मेरे साथ, वही होगा। न जाने क्यों·········? होगा, छोड़िए उसे। अब अपनी बात कहिए। मैं घण्टे-भर में जा रहा हूँ।

कलकत्ता जाने का प्रोग्राम है।'

विश्वास ने इस बीच जो निश्चय कर पाया था, वह यह था कि तेजासिंह को वह शैतान अपनी क्रूरता का शिकार बनाए, फिर विश्वास स्वयं पुलिस में इसकी सूचना दे दे। हरबंस तब निःसहाय होकर उसका आश्रय पाने को बाध्य होगी।

उसने कहा—'ठीक है। हरबंस ऐसी ही युवती है। पर मैं तो गृहस्थी के जंजाल से पीछा छुड़ा चुका हूँ। आप उसे चाहें, तो पहले तेजासिंह से निपट लें।'

'तो मिलाओ हाथ, दोस्त', कहकर उसने अपना रूखा और कड़ा हाथ विश्वास से मिलाने के लिए आगे बढ़ा दिया। फिर कहा—'मुझे आपके एक नौकर की जरूरत होगी। अब मैं, जब आया उसी दिन आप बहुत-कुछ बदला हुआ देखेंगे। पर धोखा दिया तो आपकी मौत भी साथ ही रहेगी। समझ लें। मैंने किसी के साथ रियायत नहीं की है।'

विश्वास ने पूरा आश्वासन दिया और वह जब चला गया तो दाँत पीस-कर बोला—'जिसे मैं चाहूँ उसे ही तू भी पाना चाहता है शैतान के बच्चे, यह कभी नहीं होगा। तेजासिंह की हत्या का पाप तुझे फाँसी पर लटका देगा। और मेरा पाप···हः हः हः मैंने पाप किया ही क्या है? सुमति मुझे नहीं चाह सकी, मैं अपनी पसन्द की स्त्री की कामना क्यों न करूँ?'

उस समय हरबंस गुसलखाने में लगे शीशे में अपना रूप निहार रही थी। उसे क्या पता था कि उसे लेकर मदन होटल में एक दिन सैकड़ों व्यक्ति आ जुड़ेंगे और तेजासिंह उसके ही कारण मृत्यु के घाट उतार दिया जायगा।

# १२

सुमित्रा सितार की एक गत बजाने में इतनी तल्लीन थी कि उसे यह पता नहीं चला कि कब प्रसन्न आकर कमरे में बैठ गया। इधर कई दिन से निरन्तर वह इसी गत का अभ्यास कर रही थी। प्रसन्न ने उसे यह भली-भाँति समझा दिया था कि संगीत पर अधिकार करने के लिए यह आवश्यक है कि एक ही राग-रागिनी का जमकर अभ्यास किया जाय। प्रत्येक संगीतज्ञ सभी राग-रागनियों पर समान रूप से अधिकार नहीं प्राप्त कर सकता है, अतः अपनी रुचि के अनुसार उनका चयन कर उन पर पूर्ण सफलता पाने के लिए अथक परिश्रम किया जाय। सुमित्रा के जीवन का उद्देश्य ही यह बन गया था कि वह मौखिक तथा वाद्य-संगीत में निपुण होकर अपनी जीविकोपार्जन करे। राजनीति से उसे जो दिलचस्पी थी, उसके विषय में वह कभी-कभी केवल कल्पना-भर कर लेती थी कि सम्भव है उसकी जीवन-गति भविष्य में कोई मोड़ ले और वह किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो जाय।

प्रसन्न चुपचाप बैठा सुमित्रा की अंगुलियों का कौशल देखता रहा। उसके सामने इस प्रकार तन्मय होकर सुमित्रा ने अब तक किसी दिन भी सितार नहीं बजाया था। प्रसन्न ने मुग्ध-मन से उसकी ओर देखा। सुमित्रा पूर्ण स्वच्छंदता से बैठी थी। सर खुला था और बाल चारों ओर बिखरे थे। अंचल कन्धे और वक्ष से उतरकर नीचे गिर पड़ा था। उसने सफेद रंग की एक साधारण-सी चोली पहन रखी थी। उसके ऊपर ब्लाउज पहनना शायद वह भूल गई थी। वैसे शृङ्गार करने से उसे नफ़रत ही थी। किन्तु जिस दिन से वह यहाँ आई थी, प्रसन्न को उसने ऐसा अवसर नहीं दिया था कि वह उसके प्रति आकर्षण की भावना से देखकर अपने मन में विकार उत्पन्न कर सके। उस सब को वह अपना और प्रसन्न का घोर

नैतिक पतन समझती थी। इसीलिए उसने भावना का संबल लेकर उसे 'भइया' कहना प्रारम्भ कर दिया था। शब्दों की पवित्रता पर, जो हृदय की निष्कलुषता के द्योतक होते हैं, उसे पूरा विश्वास था।

और प्रसन्न ने सुमित्रा को अपने यहाँ आश्रय देकर अपनी परीक्षा लेनी चाही थी। वह उस कहावत को मिथ्या सिद्ध करना चाहता था कि आग और फूस एक साथ नहीं रह सकते, अथवा भूखे होने पर सम्मुख रखी भोजन की थाली सामने से हटाई नहीं जा सकती। जहाँ वह काम-विकार को स्वाभाविक मानता था, वहाँ इसे भी अस्वीकार नहीं करता था कि मनुष्य उन पर विजय भी पा सकता है। वैसे इसे अस्वाभाविक मानकर उसका दम्भ ही कहा जा सकता था, किन्तु उसके दृढ़ विचारों का भी कुछ-न-कुछ मूल्य था ही, जिन पर उसने अपने जीवन का दुर्ग खड़ा किया था। वह कहता था और कहता ही नहीं था, उसका निश्चित मत था कि मनुष्य को ऐसे अवसरों से सदा बचना चाहिए और ऐसे क्षणों के आकर्षण से दूर रहना चाहिए, जहाँ उसका पतन होने की आशंका हो।

किन्तु आज वह अपने इस सिद्धान्त के विपरीत कमरे में आ गया, जब सुमित्रा बेफ़िक्री से वस्त्रों का ध्यान भुलाकर सितार बजा रही थी। संगीत उसके जीवन की सबसे बड़ी दुर्बलता थी, जो उसे वहाँ खींच लाई थी। गत इतनी पूर्ण होकर मुखर हो रही थी कि वह अपने को रोक नहीं सका। पहले तो वह केवल उसे सुनता रहा किन्तु जब सुमित्रा की ओर देखा तो उसका रूप, उसका अर्द्ध-नग्न यौवन उसके मन को उद्दीप्त करने लगा। विकार ने उसे अपने साथ बहा ले जाने के लिए कई बार उसके सर्वांग को कँपा दिया, किन्तु उसका विवेक शक्तिशाली पड़ा और तत्काल ही वह आँधी की भाँति कमरे से इतने वेग से भागा कि वह दरवाजे से टकरा गया।

सुमित्रा का ध्यान अचानक खट-पट की आवाज़ से टूट गया। अँगुलियाँ रोककर उसने जो मुड़कर देखा तो प्रसन्न को कमरे से बाहर भागता पाया। अब उसे पता चला कि प्रसन्न कमरे में बैठा उसका सितार बजाना सुन रहा

था, किन्तु वह इस प्रकार चुपके से आकर बैठ जाने और फिर अनायास ही उठकर बाहर भाग जाने के कारण को नहीं समझ सकी। सितार उठाकर एक ओर रखकर जब वह उसे बुलाने जाने लगी तो उसे सुध आई कि आज उसने यह कौनसा वेष धारण कर रखा है? शरीर पर केवल एक महीन धोती और एक चोली है और जिस अवस्था में बैठी वह सितार बजा रही थी, उसे देखकर तो वह शरम से स्वयं ही जैसे गड़कर रह गई। उसका सारा वक्ष अर्द्ध-नग्न था। सर खुला था और''''और आगे वह साहस नहीं कर सकी कि कुछ सोच सके। प्रसन्न को बुलाने जाने का उसका सारा उत्साह ठण्डा पड़ गया।

सुमित्रा हाड़-मांस से निर्मित एक नारी है, जो जीवन-सुख, पति-सुख तथा गृहस्थी के सुख से सर्वथा वंचित रही है। अभी सारा जीवन उसे इसी प्रकार पार करना है। प्रसन्न की छाया उसे मिल गई है, जिसमें वह पल रही है, किन्तु अन्य नारियों की भाँति उसमें भी वही दुर्बलता व्याप्त है कि उसे पुरुष का सम्बल चाहिए। जिन परिस्थितियों में वह है, उनके कारण वह जिस किसी का आश्रय प्राप्त करे, उसे पति नहीं कह सकती और न उन सारी सुविधाओं को, जो उसे सहानुभूति के कारण मिल रही हैं, पति-सुख मान ले। परन्तु उसका भविष्य जो अन्धकारपूर्ण है, और प्रसन्न के साथ रहते हुए जो अनेक प्रकार की बातें उसे सुनने को मिलेंगी, उन सबसे वह पूर्ण परिचित है। प्रसन्न को कोई भी देवता नहीं मानेगा। कोई यह भी मानने को तैयार नहीं होगा कि उन दोनों का कोई सम्बन्ध नहीं है, केवल जीवन की विषमता ने उन दोनों को एक साथ रहने को बाध्य कर दिया है। उनका भाई-बहन का सम्बन्ध केवल ढोंग है। वे उच्छृङ्खल हैं। विवाह के पवित्र उत्तरदायित्व से बचकर भी यौन-सम्बन्ध स्थापित कर खुल कर रहते हैं। जब दोनों चाहेंगे, अलग-अलग हो जायँगे। यह भी कोई आदर्श है? एक ढकोसला—केवल दिखावा। भला नारी के मोह और आकर्षण से देवता भी क्या अपना पतन होने से बचा सके हैं? नहीं, प्रसन्न और सुमित्रा दोनों''दोनों वासना की तृप्ति के लिए एक साथ रहते हैं जो

विकर्षण उत्पन्न होते ही अपने नए साथियों की खोज में चल देंगे।

पर सुमित्रा जानती है कि प्रसन्न उससे कितना बचकर रहता है। रात में बाहर से कमरे को बन्द करा लेता है। और ठीक उसी भाँति वह भी बनाव-शृंगार से बचकर प्रसन्न से दूर-ही-दूर रहती है। अपने को अनाकर्षक बनाए रखती है। प्रसन्न की ओर सहसा देखती भी नहीं और विकार उत्पन्न होने पर, अपनी भावनाओं के साथ ही शरीर को तृप्ति देने के लिए ठण्डे जल से तुरत स्नान कर लेती है। वह कोई योग-साधना नहीं कर रही है और न तपस्या ही, किन्तु संयम को अपने से दूर नहीं जाने देना चाहती है। प्रसन्न ने एक दिन कहा था—स्त्री-पुरुष के बीच केवल शारीरिक तृप्ति और काम-विकार की शान्ति का सम्बन्ध ही नहीं होता है। इससे भी पवित्र सम्बन्ध उन दोनों के बीच होते हैं और वह उन्हीं पर विश्वास करता है। सुमित्रा जिस दिन से प्रसन्न के यहाँ आई है, उसने यह सब भली-भाँति हृदयंगम कर लिया है। मनुष्य के चरित्र की नैतिकता संसार में सबसे महान् वस्तु है।

जब उसके विचारों का प्रवाह मन्द पड़ गया तो वह उठकर कपड़े बदलने चली गई। पर आज उसके पैर जैसे भारी होकर पड़ रहे थे और उसे अपने कमरे तक जाना जैसे पहाड़ लगने लगा।

ठीक से कपड़े पहनकर जब वह फिर कमरे में आई तो देखा प्रसन्न हाथ में दो लिफ़ाफ़े लिए जैसे उसी की प्रतीक्षा में बैठा है। सहसा वह आँख उठाकर उसकी ओर देख भी नहीं सकी, जैसे कोई अपराध किया हो। सर झुकाए वह भी एक कुरसी खींचकर उस पर बैठ गई, पर उसकी पीठ प्रसन्न की ओर थी। कुछ क्षण तक दोनों कुछ नहीं बोले। सुमित्रा तो आत्म-ग्लानि से जैसे गड़ी जा रही थी।

प्रसन्न को ही बोलना पड़ा। लिफ़ाफ़े उसकी ओर बढ़ाते हुए कहा उसने—'उस समय इन्हें देने ही आया था, पर तुम्हारे सितार की गत ने जैसे जादू कर दिया था सुमित्रा। तुम्हारी तैयारी, बहुत अच्छी है। रेडियो पर प्रोग्राम दिलाने के लिए कहूँगा।' कहकर उसने दोनों लिफ़ाफ़े उसकी

ओर बढ़ा दिए।

सुमित्रा ने हाथ बढ़ाकर उन्हें ले लिया। बोली नहीं कुछ।

प्रसन्न ने स्थिति समझकर भी अनजान बनते हुए कहा—'क्या मनुष्य से नाता तोड़कर दीवार से जोड़ना चाहती हो सुमित्रा ? मुझे पीठ किस लिए दिखाई जा रही है ?'

सुमित्रा अपने को रोके बैठ थी, एकबारगी रो पड़ी। पर उसने मुँह नहीं फेरा। प्रसन्न के लिए यह समस्या बन गई। वह सुमित्रा को परीक्षा में खरा पा चुका था। ठीक अपनी ही भाँति उसे भी संयमी और सत्पथ पर दृढ़ पाकर वह पूर्ण सन्तुष्ट था। उसका यह व्रत अखंड रहे, इसी में उसे सारी सुख-शान्ति मिलती थी। आज तक उसने सुमित्रा को अपने हाथ से छुआ नहीं था। पर इस समय उसके सामने महान् संकट आ गया। वह उसे चुप कराए तो कैसे ? उसने जान-बूझकर उस बात को छेड़ ही क्यों दिया ? आखिर वह भी तो एक नारी ही है। उसके भी स्पन्दन होता है। जब कुरूप भी कभी-कभी अपने ऊपर रीझ उठते हैं, तो अपने अंगों के सौष्ठव को···नहीं, उसे यह सब नहीं सोचना चाहिए। सुमित्रा उसकी बहन है। पर बहन के आँसू पोंछना क्या पाप है ? संयम ने कहा—हाँ, तुम्हारे लिए पाप है। सुमित्रा को तूने बहन माना है किन्तु इस पवित्र सम्बन्ध के लिए तूने अपने से संघर्ष किया है। तू विवेकशील है, इसलिए विजय तेरी हुई। पर अंगों का स्पर्श—वह एक तूफ़ान की उत्पत्ति है। सम्भव है, तू उसके सामने न टिक सके, और तू बह जाय।

वह अपने स्थान से उठा नहीं। वहीं से उसे चुप कराता रहा। किन्तु दूसरे ही क्षण सुमित्रा आँधी के वेग की भाँति दौड़ कर उसके पैरों पर गिर पड़ी। उसकी हिचकियाँ बंधी थीं, और वह रुक-रुककर कह रही थी—'मुझे क्षमा करो—भइया···क्षमा। मैं—उन्माद में थी। मुझे जो चाहो सो सज़ा दे लो।'

प्रसन्न अपने को सन्तुलित नहीं रख सका। सुमित्रा के आँसुओं ने उसकी पलकें भी गीली कर दीं। उसे अपने हाथ बढ़ाकर सुमित्रा को उठाना

ही पड़ा। आर्द्र-कण्ठ से बोला वह—'तुमने भला किया ही क्या था सुमित्रा, रो क्यों रही हो? हम दोनों एक-दूसरे को समझ चुके हैं। हमें विश्वास है हम पथभ्रष्ट नहीं होंगे। हाँ, देखो यह चिट्ठियाँ किसकी हैं? एक तो हर्ष की लगती है। मुझे लगता है जैसे वह यहाँ आना चाहता है और एक बात सुनोगी? वह तुम्हारा सहारा चाहता है, दे सकोगी?'

कहाँ से उठने वाले मेघ न जाने कहाँ-कहाँ जाकर वर्षा करते हैं, इसका लेखा कोई नहीं रखता। किन्तु जब वर्षा के बाद पत्तियाँ धुल-पुछ कर साफ़ हो जाती हैं और वातावरण में जो कोमलता आ जाती है, उसे अनुभव कर हृदय को बड़ी शीतलता मिलती है। आज इस घटना के प्रसंग में प्रसन्न जो कुछ कह जायगा, इसे कौन जानता था? उसके नेत्रों से बहने वाली आँसुओं की धार अब गम्भीरता का स्थान ले चुकी थी और एक विचार-श्रृंखला, जिसमें हर्ष और वह एक साथ जोड़े जा रहे थे, उसके सामने रेल के डब्बों की भाँति तेजी से निकलती जा रही थी। प्रसन्न ने बिना पत्र पढ़े ही जो अनुमान लगाया है, उसकी पृष्ठभूमि भी कहीं पर निश्चय ही है।

वह उठ खड़ी हुई और दोनों पत्रों को मेज पर रखकर ग़ुसलख़ाने में मुँह धोने चली गई। कुछ क्षण पहले उसकी जो आँखें अश्रुओं से तर थीं, वे अब हर्ष का पत्र पढ़ने को व्याकुल हो उठीं। सचमुच ही क्या उसे किसी का सहारा चाहिए? और यदि चाहिए तो क्या सुमति नहीं दे सकती? वह क्यों दे सकती है? तो क्या उसके जीवन में अभी नाटकीय ढंग से परिवर्तन होगा? हर्ष-हर्ष क्या···?

वह स्वस्थ होकर पत्र पढ़ने बैठ गई।

१३

प्रसन्न की बात सच निकली। उन दो लिफ़ाफ़ों में से एक हर्ष का था और दूसरा सुमति का। सुमति ने इस पत्र में जिनी की बीमारी की बात विस्तार से लिखी थी और यह भी अनमने भाव से लिखा था कि उसका मन न जाने कैसा होता जा रहा है? वह तो कुछ भी नहीं समझ पाती। उसका भविष्य क्या होगा, यह प्रश्न कभी-कभी सर्प की भाँति कुण्डली मार कर डसने को खड़ा हो जाता है। तब उससे भय लगने लगता है। हर्ष के विषय में उसने लिखा था कि वह मिर्जापुर से हटना चाहता है। वहाँ उसका मन नहीं लगता! सब कुछ नीरस लगने लगा है उसे। आगे अपनी पढ़ाई के विषय में भी लिखा था।

और हर्ष का पत्र क्या था—अच्छा-खासा लेख था जिसे लिखने के पूर्व वह निश्चय ही उद्विग्न और व्यथित रहा होगा। काफ़ी बड़ा पत्र था जिसमें बीच-बीच में बहुत-सी साधारण बातें उसने अकारण ही लिख दी थीं। उन्हें पढ़कर सहज ही उसकी वर्तमान मनःस्थिति का पता लग जाता था। सुमित्रा जिस सबसे सम्बन्धित नहीं थी, वह भी उसने लिखने से नहीं बचाया था। सुमति और अपने बीच के चलने वाले अन्तर्द्वन्द्व की भी उसने एक स्थल पर सीधी चर्चा कर दी थी। सुमित्रा पत्र की एक-एक पंक्ति मनोयोगपूर्वक पढ़ती और फिर उस पर विचारती जाती। हर्ष के हृदय के भीतर जिन निगूढ़ भावों की प्रतिक्रिया जागृत होकर एक हलचल मचा देना चाहती है, इससे वह अवगत होती जा रही है और उसे लगने लगा कि जैसे वह स्वयं भी इस हलचल में योग दे रही है। एक प्रकार से जैसे वही इस लम्बे पत्र लिखने का कारण बन सकी है। जहाँ पर कुछ अस्पष्ट और उलझा-सा लगता, वहीं पर ठहर जाती और नेत्र मूँदकर उसका अर्थ निकालने का प्रयत्न करने लगती।

पत्र के अन्त में उसने अपनी आर्थिक-स्थिति के डाँवाडोल हो जाने की

बात लिखते हुए घुमा-फिराकर यह प्रकट कर दिया था कि वह मिर्ज़ापुर छोड़ रहा है। 'दर्पण' का प्रकाशन शायद कुछ दिनों के लिए स्थगित करना पड़े, किन्तु पत्र की मृत्यु उसकी भी मृत्यु है। इलाहाबाद पत्रों के प्रकाशन के लिए सबसे उत्तम स्थान है, जहाँ प्रकाशन व मुद्रण की सारी सुविधाएँ प्राप्त हो सकती हैं। पर वहाँ आने के पहले वह एक बार फिर इस सब पर विचार करेगा और दूसरी बात जो इसी से सम्बन्धित थी, वह यह थी कि यहाँ के लोग उसके व्यंग्यों और टिप्पणियों से चिढ़कर अपने सुधार के स्थान पर उसमें विरोध मानने लगे हैं। उसके पास इस प्रकार के धमकी और चेतावनी से भरे पत्र भी आए हैं कि वह या तो 'दर्पण' का प्रकाशन बन्द कर दे या ऐसी टिप्पणियाँ न छापा करे, अन्यथा उसे इसका प्रतिफल भोगना होगा, जो उसके जैसे पत्रकार को काफ़ी महँगा पड़ेगा। किन्तु उसने दृढ़ता के साथ यह भी लिखा था कि वह किसी से इस प्रकार डरता नहीं है। पत्रकार की विशेषता ही उसका निर्भीक होना है और फिर उसकी संगीत-सम्बन्धी तैयारी के विषय में पूछकर उसने पत्र समाप्त कर दिया था।

सुमित्रा को पत्र पढ़ने, उस पर विचार करने और किसी निश्चित मत पर पहुँचने में काफ़ी समय लग गया। इस पत्र से उसे स्पष्ट ज्ञात हो गया था कि हर्ष सुमति की ओर से मन हटाकर उसकी ओर लगाना चाहता है। किन्तु यह सब सुमति के प्रति विश्वासघात होगा। आज उन पति-पत्नियों के बीच जो विषाद और मनोमालिन्य की गहरी खाई है, उसे हर्ष इतना वृहत् रूप देकर और चौड़ी करता जा रहा है कि उसके भरने की आशा टूट गई है। और सुमति, जैसा कि हर्ष ने स्वयं बताया है, केवल उसके कारण ही इस दूरी को पार करने के लिए अपने पारिवारिक सुख को ही क्या अपने को भी बलिदान कर चुकी है और हर्ष अब उसकी ओर आकर्षित होता जा रहा है। उसे सुमति और हर्ष के बीच नहीं आना चाहिए। उसे विश्वास है कि उन दोनों के बीच पवित्र सम्बन्ध है। सब कुछ पाकर भी हर्ष ने कुछ नहीं किया, यही उसके चरित्र की महानता है।

प्रसन्न हर्ष का समाचार जानने को उत्सुक था। अपने कमरे में बैठा वह सुमित्रा की प्रतीक्षा में था कि वह लिफ़ाफ़े में रखा उसके नाम का पत्र अभी देने आएगी। किन्तु काफ़ी समय बाद भी, जब वह नहीं लौटी तो वह उठकर उसके कमरे में आया। वहाँ देखा तो सुमित्रा पत्र लिए जैसे पगली-सी बेसुधावस्था में बैठी थी। उसने कुछ क्षण रुककर पूछा—'सुमित्रा, कैसा है हर्ष? कुछ मेरे लिए भी लिखा है?'

सुमित्रा सँभल गई। पत्र की सारी बातें उसी से सम्बन्धित थीं और उसी के लिए लिखी गई थीं। प्रसन्न के लिए सारे पत्र में कहीं कुछ नहीं लिखा था। उसके सम्मुख जैसे महान् संकट आ गया था कि वह क्या निश्चय करे? पत्र का अधिकांश भाग एक प्रकार से गोपनीय था और प्रसन्न को वह सब नहीं पढ़ना चाहिए था, किन्तु क्या सुमित्रा के लिए यह उचित था कि वह अपनी कोई भी बात उससे छिपा ले? कहीं उसके पैर डगमगाने लगे या वह ठोकर खाकर गिर पड़ी, तो उसे उठाने प्रसन्न ही तो आएगा। इससे अपने प्रसन्न भइया से वह दुराव नहीं रख सकती। सब-कुछ उसे बताते रहना होगा। उससे छिपकर कोई कदम अनजान ही में उठाते रहना उसके अपने ही हित में अनुचित होगा।

उसने पत्र को प्रसन्न की ओर बढ़ाते हुए कहा—'तुम्हारे लिए कुछ नहीं लिखा है। शायद भूल गए हों। तुम भइया, हर्ष बाबू को अपनी तरफ़ से लिख देना कि वह बनारस से 'दर्पण' निकालें। इलाहाबाद से बहुत पत्र निकलते हैं। नया पत्र जमाना यहाँ कठिन होगा।'

प्रसन्न ने एक बार गहराई से सुमित्रा की ओर देखना चाहा पर वह उठकर आलमारी में कोई वस्तु ढूँढने लगी। उसके भावों को पढ़ना इस समय नितान्त आवश्यक था, किन्तु वह भी एक नारी थी, भावुकता और दुर्बलता की प्रतिमूर्ति। उसे सब प्रकार से अपने को समेटकर चारों ओर के वातावरण से बचकर चलना है। पृथ्वी पर, जहाँ आनन्द का स्रोत प्रवाहित है, उसे वंचिता बनकर उस स्रोत से शीतल जल पीने की अपेक्षा उसकी ओर देखते रहना और प्यास से छटपटाना है। यही उसके जीवन का मर्म है,

जो एक पढ़ी हुई पुस्तक की भाँति स्पष्ट है।

प्रसन्न कुर्सी पर बैठ गया। सुमित्रा कब कमरे से चली गई, यह वह नहीं जान सका। जब पत्र समाप्त कर उसने उसकी ओर देखना चाहा और उससे बातें करनी चाहीं तो उसे न पाकर उसकी समझ में आया कि वह स्वयं ही इस पत्र से चिन्तित हो उठी है।

कमरे से बाहर आकर और सुमित्रा के ठीक सामने खड़े होकर पत्र लौटाते हुए उसने कहा—'देखो, मैंने कहा था न कि हर्ष को तुम्हारा सहारा चाहिए सुमित्रा। पत्र तो मुझे अब पढ़ने को मिला। पर मैं ज्योतिषी नहीं हूँ। यों ही मन में जो आ गया कह बैठा। और हाँ, तुम क्या कह रही थीं कि उसे बनारस सुमति के पास रहने को कह दूँ? पर सुमति विवाहित जो है। उसका पति जीवित है। एक पर-पुरुष के साथ तब वह क्यों रहे? हाँ इलाहाबाद में वह भले ही रह सकता है और फिर उसे तो···।'

'भइया' सुमित्रा बीच ही में जोर से बोल पड़ी। 'तुम कितनी बार अपनी बात कहोगे? मैं जो-कुछ नहीं सुनना चाहूँगी, उसे भी सुनने को मजबूर करोगे, क्यों? मेरे प्रति इतनी कठोरता किसलिए, प्रसन्न भैया? मैंने सब कुछ विचार लिया है। सुमति को हर्ष का सहारा चाहिए। हाँ, मैं ठीक कह रही हूँ। मेरा विश्वास करो। लो, सुमति के पत्र को भी पढ़ लो। हर्ष को बनारस ही में रहना होगा—सुना भैया। मैं अपने और सुमति के बीच में उसे लेकर ही विवाद की दीवार नहीं खड़ी करना चाहती हूँ।'

प्रसन्न से जैसे यह सब सुना नहीं गया। सुमित्रा की वाणी में व्याप्त इस करुणोद्रेक से वह इतना द्रवित हो उठा कि उसका कण्ठ भर आया। जिस लगन और विरह के खेल की छाया तक उसने अपने जीवन पर नहीं पड़ने दी है, उसे सुमित्रा हर्ष और सुमति उसके चारों ओर फैला देना चाहते हैं। प्रेम की जिस अनुभूति को उसने सदैव के लिए सुप्त कर दिया था, वह जाग्रत होकर कहीं उसकी चेतना को अपने साथ न बहा ले जाय, इस डर से उसने सुमित्रा को भी अपने साथ ही हर समय संगीत में भुला रखा था। वह यह भी जानता था कि हर्ष के साथ ही सुमित्रा भी

उसकी ओर आकर्षित है । हर्ष जब यहाँ पिछली बार आया था, तो सुमित्रा से इतना प्रभावित हुआ था कि दो दिन रुकने के बाद भी उसका मन जाने का नहीं हो रहा था । और आज जो पत्र आया है, उसमें तो इस सबकी ओर उसका स्पष्ट संकेत है । इसीलिए वह मिर्जापुर छोड़कर इलाहाबाद आना चाहता है । सुमित्रा जिस स्थिति में है, उसमें वह उसे जरूर ही पा लेगा । पर सुमित्रा···वह सुमति के कारण उनके बीच में नहीं आना चाहती है ।

सुमित्रा ने आगे बढ़ कर सुमति का पत्र भी उसके हाथ में दे दिया । वह लौटकर अपने कमरे की ओर जाना ही चाहती थी कि प्रसन्न ने उसे रोक लिया । सुमति का पत्र लौटाते हुए उसने कहा—'तुम विचलित हो गई हो सुमित्रा । अपने मन की स्थिति शान्त करो । मानसिक उद्वेग का उठना अस्वाभाविक नहीं है । मुझे तुम्हारे ऊपर पूर्ण विश्वास है और सदा रहेगा । और सुनो, तुम सुमति से मिलना भी तो चाहती हो । हम लोग बनारस इसी बहाने घूम भी आयेंगे । हर्ष का भी आना अभी ठीक नहीं है । चाहोगी तो मिर्जापुर लौटते समय होते चलेंगे । सुमति भी साथ चलेगी ।' कहकर उसने जैसे सन्तोष की एक साँस ली । एक बार वह उन तीनों को एक स्थान पर मिला देगा, फिर जिसका जो मार्ग होगा, वह उसी पर पैर बढ़ा देगा । गति-अवरोध न हो, इसका उत्तरदायित्व उसका रहेगा ।

सुमित्रा ने पत्र हाथ में लेकर केवल इतना कहा—'जो तुम्हें रुचे भैया, वही करो । मैं उसके विरुद्ध जा नहीं सकूँगी ।' कहकर वह फिर आगे बढ़ने लगी ।

प्रसन्न ने कहा—'और सुनो सुमित्रा, व्यर्थ के आडम्बर में पड़कर अपने को धोखा मत देना । जो हृदय कहे, उसे ही सत्य मानकर चलना होगा । उसके विपरीत चलना अपने को ही स्वयं भुलावा देना होगा । जब जिसे स्वीकार करने को मन करे, उसे विवेक से विचारकर अपनी आत्मा को शान्ति देने का प्रयत्न करना । मैं कभी बाधक नहीं बनूँगा । अशान्त बने रहना जीवन की मृत्यु है, शरीर की वह भले ही न हो ।'

सुमित्रा चुपचाप खड़ी सुनती रही।

प्रसन्न ने दार्शनिक भाव से आगे कहा—'और भी एक तथ्य की बात सुनाता हूँ। जिस प्रकार संगीत अपनी मोहिनी शक्ति से हमारे रोम-रोम को संचारित कर तन्मयता में एकाकार कर देता है, ठीक उसी प्रकार बल्कि उससे भी अधिक प्रबल वेग से सौन्दर्य मन को अपने में समाविष्ट कर केवल उसी का अनुरूप बन कर, वैसा ही, उसी में विलय हो जाने के लिए अपना सर्वस्व लुटा देता है। प्रेम और सौन्दर्य की प्राप्ति का यही चरम उत्कर्ष है। जब से सृष्टि की रचना हुई है और मानव चेतनशील प्राणी कहा जाता है, तब से आज तक यही निरन्तर एक गति से होता आया है। सुमित्रा, इससे कोई अछूता नहीं बचा है। इसे मैं मनुष्य की दुर्बलता नहीं मानता हूँ, इसलिए कि जीवन को स्पन्दित और सृष्टि के क्रम को चिरस्थायी बनाये रखने के लिए स्त्री और पुरुष····।'

'प्रसन्न भइया', सुमित्रा अपनी आकुलता रोक न पाकर फिर बीच ही में बोल पड़ी। 'एक बात बताओ तब। उस दिन जब मैं सितार बजाने में बेसुध थी, तो बाद में जो-कुछ कहा था, क्या वह झूठ था? यदि हाँ, तो तुम स्वयं विरागी बनकर मुझे आज मोह में फँसने का उपदेश क्यों दे रहे हो? और यदि आज जो-कुछ कहा है, वह सच है तो तुम किससे प्रेम करते हो? किसके सौन्दर्य ने तुम्हें बाँध रखा है? तुम्हारा हृदय यदि पत्थर के स्थान पर मोम का बना है, तो तुमने मुझसे प्रेम क्यों नहीं किया? मेरा निष्कलुष सौन्दर्य, निर्मल···।'

'चुप रहो सुमित्रा', प्रसन्न ने आवेश से कहा—'मुझे गाली मत दो। मैंने उस दिन जो-कुछ कहा था, वह भी सच था और आज जो कहा है, वह भी सच है। तुम नहीं जानती, तुम्हें बहन मानने के लिए और आजीवन इस पवित्र नाते को निभाने का व्रत लेने के लिए अपने से कितना संघर्ष करना पड़ा है? कहीं मेरी पराजय न हो, इसलिए मैं रात-दिन सजग रहता हूँ। पर हर्ष, भला वह क्यों तुम्हें बहन मान ले? वह अभी अविवाहित ही है, जब कि उसकी प्रेमिका सुमति एक बच्चे की माँ बनकर अपनी

जीवन-नौका जैसे डुबो चुकी है। तुम्हें तो वह सब-कुछ मालूम है। सुमति अब इस नाते उसकी कोई नहीं रही है। बोलो, उस बेचारे को आखिर मिला ही क्या? उसका अशान्त और अस्थिर मन यदि तुम्हारी ओर झुक जाय, तो अस्वाभाविक भी क्या है? हाँ, तुम चाहो तो उसे साफ़ जवाब दे सकती हो। वह एक असफल प्रेमी आजीवन बना रह सकता है, यह मैं जानता हूँ, पर वह उच्छृङ्खलता का सहारा नहीं ले सकता। मेरी राय में मेरे स्थान पर तुम उसे आने से रोक दो। मैं तो अपने मित्र को गले लगाऊँगा ही सुमित्रा। मेरे दरवाजे उसके लिए कभी बन्द नहीं होंगे।'

सुमित्रा की श्वास-गति तीव्र हो चली थी। उससे आगे बोला नहीं गया। लगा कि वह खड़ी भी नहीं रह सकेगी। कहीं गिर पड़ी तो चोट लगेगी, इसलिए वह उसी स्थान पर बैठकर रह गई। प्रसन्न ने इस समय सब-कुछ भुलाकर उसे उठाकर कमरे में चारपाई पर लाकर लिटा दिया, फिर इस प्रसंग को यहीं समाप्त कर वह धीरे से कमरे से बाहर निकल आया। सुमित्रा को अपनी बाहों में भरने से और उसके अंग-स्पर्श से जिस उत्तेजना का अनुभव उसने किया था, उसे दबाकर वह अपने को प्रकृतिस्थ करने का प्रयत्न करने लगा।

अचानक किसी का अट्टहास सुनकर उसने कमरे में चारों ओर देखा। कहीं कोई नहीं था। उसे सुनाई दिया—'इस बार मैंने अपना दाँव फेंका, तुम उसमें फँस भी गए, पर बचकर निकल गए। जानते हो, मैं हूँ अविवेक-वासना का दैत्य। कब तक मेरे पंजे से बचकर निकलते रहोगे? मैं पतन का गढ़ा खोदे बैठा हूँ। प्रसन्न, तुम्हें उसमें गिरना ही होगा।' प्रसन्न ने दृढ़ता से मुट्ठी बाँधकर मेज पर इतनी जोर से उसे पटककर 'नहीं, नहीं' कहा कि सुमित्रा के कमरे से चीखने की आवाज सुनाई पड़ी।

वह युद्ध का मोर्चा खोले है, डटकर लड़ेगा।

## १४

दूसरे दिन प्रसन्न ने अपना नित्य का अभ्यास समाप्त करने के बाद सबसे पहला काम जो किया, वह दो तारों का भेजना था। एक में उसने सुमति को सूचित किया कि वह दो दिन बाद सुमित्रा के पास बनारस आ रहा है। और दूसरा उसने हर्ष को भेजा कि वह अभी न आए। इसी सप्ताह में वह सुमति व सुमित्रा के साथ उसके पास मिरज़ापुर आ रहा है। फिर उसी दिन वह रेडियो स्टेशन गया और अपने एक प्रोग्राम के साथ ही सुमित्रा के लिए भी एक संगीत-रूपक में भाग लेने के लिए कन्ट्रैक्ट फ़ार्म ले आया। फ़ार्म उसकी ओर बढ़ाते हुए उसने कहा—'इस बार तुम्हारी परीक्षा है सुमित्रा। रूपक में मुख्य स्त्री-पात्र का अभिनय तुम्हें करना है। तुम्हारे स्वर का जादू देखो तुम्हारे लिए क्या करे? पर इस रूपक में प्रेम और सौन्दर्य का ही दिग्दर्शन कराया गया है। लेखक का मत है कि संसार में दूसरी कोई वस्तु चिरस्थायी है ही नहीं। वह कहता है कि ये दोनों वस्तुएँ ही अमर हैं, जो अन्तिम लक्ष्य पर पहुँचकर परमात्मा में लीन हो जाती हैं। उसका विश्वास है कि प्रेम और सौन्दर्य की चरम-सीमा या महान् उत्कर्ष ईश्वरमय होना है, क्योंकि प्राणी-मात्र उसी सत्-चित् आनन्द की प्राप्ति के लिए भटक रहा है, जो उसका ही रूप है। यही विराम स्थल मानव जन्म धारण करने और मोक्ष-पद पाने का आधार है।' कहकर उसने एक पाण्डुलिपि भी उसकी ओर बढ़ा दी।

सुमित्रा ने सारा साहस लगाकर आज प्रथम बार विस्फारित नेत्रों से प्रसन्न की ओर देखा। उसके यहाँ आने के बाद से वह अधिकांश कम ही बोलता था। दोनों में यदि बात होती थी, तो संगीत को ही लेकर। स्वर, ताल, लय, आलाप, और राग-रागिनियों के विभिन्न रूप उनके वार्तालाप के विषय होते थे, किन्तु इधर कई दिन से वह सब पीछे छूट गया था और जिन विषयों ने उन दोनों के बीच एक सरिता प्रवाहित कर दी थी, वे थे—

प्रेम, सौन्दर्य, आकर्षण और स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध। सुमित्रा को इस सबसे अरुचि हो, सो बात नहीं थी, किन्तु जिस स्थिति में वह थी, उसके अनुसार उसे अपने को इस सबसे दूर ही रखना था। इच्छाओं का दमन करना वह जानती थी साधारण बात नहीं है, पर संयम-पूर्वक रहने को निश्चय ही वह श्रेयस्कर समझती थी। अन्यथा इतने बड़े विश्व में, जबसे उसका पति चला गया था, उसके अनेक प्रेमी बन सकते थे और वह अपने रूप और यौवन का स्वच्छन्दतापूर्वक उपभोग कर सकती थी। यह भी सम्भव था कि वह प्रसन्न से मिलने के बाद उसका आश्रय एक भाई के रूप में न पाकर प्रेमी के रूप में पाती, किन्तु जो कुछ स्वतः ही बन गया है उसके लिए उसे पश्चाताप नहीं करना पड़ रहा है। उसे आत्मिक सन्तोष तो मिला ही है, साथ ही चारित्रिक दृढ़ता भी उसे बलवती बनाने में सहायक सिद्ध हुई है।

रेडियो-रूपक की पाण्डु-लिपि अपने हाथ में लेकर वह उसे पढ़ने लगी। प्रसन्न अपनी बातों का प्रभाव उसके ऊपर पड़ता जानकर, उसके उत्तर की प्रतीक्षा में उसकी ओर निहार रहा था। अचानक सुमित्रा की दृष्टि उठी तो वह मुस्करा उठा। सुमित्रा भी हल्की मुस्कान होठों पर लाकर बोली—'मेरी ओर क्या देखते हो भइया, मैं पूछती हूँ तुम्हें हो क्या गया है? मुझे सब-कुछ स्मरण है। भूली कुछ भी नहीं। जब यहाँ आई थी तब और विचार थे और अब दूसरे बनते जा रहे हैं और सुनो भइया! यदि मैं इस रूपक में अपना अभिनय करने में असफल हो जाऊँ, तो बुरा तो न होगा? मेरे अपने लिए वह चाहे न भी हो, पर तुम्हारे लिए नहीं होना चाहिए।'

प्रसन्न ने बात काट दी। बोला—'मेरे और अपने की बातें करना तुम सीख गई हो सुमित्रा, यह ठीक है, पर किस लिए? जो निश्चय ही बुरा है, वह सभी के लिए है। मैं यह सिद्धान्त की बात कह रहा हूँ, वैसे तुम स्वयं चाहोगी कि तुम्हारी पराजय न हो। मनुष्य हार नहीं खाना चाहता। तुम भी इस रूपक में भाग लेने के बाद चाहोगी सुमित्रा कि तुम्हारे अभि-नय की प्रशंसा की जाय। यह सब स्वाभाविक है।'

सुमित्रा प्रसन्न के सामने चाहते हुए भी कोई विवाद नहीं उठाना

चाहती थी। जैसा, जो-कुछ वह कहेगा, उसे स्वीकार करना होगा यही उसने निश्चय कर रखा था। कन्ट्रैक्ट फ़ार्म पर अपने हस्ताक्षर कर उसे लौटाते हुए बोली वह—'औरों से चाहे मैं जीत भी जाऊँ प्रसन्न भैया, पर तुम से हार ही खानी पड़ती है। हम लोग बनारस से लौट आएँ, फिर इस रूपक के लिए तैयारी करूँगी। हर्ष को भी बताना होगा कि वह मेरा प्रोग्राम ज़रूर सुने। वैसे अभी काफ़ी दिन हैं। हाँ, एक बात मैं और चाहती हूँ भइया, पर तुम्हारी आज्ञा होगी तभी उसके लिए आगे क़दम बढ़ाऊँगी।'

'वह क्या?' प्रसन्न ने पूछा।

'मैं नृत्य भी सीखना चाहती हूँ।' कहकर सुमित्रा ने सर नीचे झुका लिया।

प्रसन्न उत्तर देने ही वाला था कि बाहर से किसी ने उसका नाम लेकर पुकारा। वह 'अभी आया' कहकर बाहर चला गया।

सुमित्रा अपने कमरे में आकर नृत्य की एक भूमिका तैयार करने लगी थी। उसके पैर, उसके शरीर का रोम-रोम, उसके अंगों की चंचलता और उसके मन की उड़ान, सब मिलकर उसे नृत्य करने को बाधित कर रहे थे। उसने अपने वस्त्रों को ठीक किया और प्रसन्न के आने की प्रतीक्षा करने लगी। उसने निश्चय कर लिया था कि वह नृत्य में अपनी रुचि और प्रगति, जिसे वह अब तक गोपनीय ही रखती आई थी, एक सामान्य प्रदर्शन के रूप में प्रसन्न के सम्मुख रखेगी। कला के सबसे विकसित और मनोमुग्धकारी अंग संगीत और नृत्य को उसने अपनाया है, यह उसके लिए कम गौरव की बात नहीं है। वह इसमें पूर्णता प्राप्त कर जिस सुख और संतोष का अनुभव करेगी, वह कदाचित् उसे गृहस्थी बसाकर रहने में भी न प्राप्त होता।

बाहर आहट पाकर उसने मुड़कर देखा तो प्रसन्न को कमरे की ओर आता पाया। वह ठिठककर रह गई। नृत्य का प्रदर्शन करने के लिए संवारे गए अपने वस्त्रों की ओर उसे हठात् ध्यान आ गया। उसने साड़ी को ऊँचा कर चारों ओर से लपेट रखा था और अंचल को कन्धे के बाईं

ओर से ले जाकर वक्ष के बीच से निकाल कर कमर में इस प्रकार अटका रखा था कि उभरा हुआ ब्लाउज़, जिसके भीतर उसका यौवन अँगड़ाई ले रहा था, स्पष्ट झलकता रहे। उसने प्रसन्न को आकर्षित करने के लिए इस प्रकार का वेष नहीं बनाया था, किन्तु नृत्य में शरीर के प्रत्येक अवयव को जो विकास मिलना चाहिए, उसे ही दृष्टि में रखकर उसने इतनी तैयारी की थी।

प्रसन्न ने कमरे के दरवाज़े पर खड़े होकर पहले सर से पैर तक उसे निहारा, फिर गम्भीरता से बोला—'यह नृत्य करने का अवसर नहीं है सुमित्रा। बाहर एक व्यक्ति तुमसे मिलने की प्रतीक्षा कर रहा है। उसके लिए चाय-वाय तैयार करनी होगी।'

सुमित्रा अपनी स्मृति पर ज़ोर देने के बाद भी समझ नहीं सकी कि उससे मिलने कौन आ सकता है? उसके यहाँ होने का पता उसे कैसे चल गया और वह उससे किसलिए मिलना चाहता है? वह खड़ी-की-खड़ी रह गई।

प्रसन्न ने उसे सजग करते हुए फिर कहा—'पहले अपने कपड़े ठीक करो, फिर सोचो कि कौन हो सकता है? उसने मुझसे बहुत संक्षेप में बातें की हैं। उसे जो कुछ कहना है, तुम्हीं से कहेगा और मैंने जब तुम्हारा यहाँ रहना स्वीकार कर लिया है तो बिना मिले तुम्हारा निस्तार भी नहीं होगा। क़ानून की नज़र से तुम्हारा यहाँ रहना भी······।'

'क़ानून में सब कुछ ठीक ही नहीं है', सुमित्रा ने प्रसन्न की बात अधूरी काट दी। 'जब मुझे निस्सहाय छोड़ दिया गया, तो मैं क्या अपना भविष्य भी बनाने की अधिकारिणी नहीं? क़ानून तो उसके लिए होना चाहिए, जिसने मेरी ज़िन्दगी मौत में बदल दी थी। तुम भइया उससे यह पूछो जाकर कि वह मुझसे क्यों मिलना चाहता है और वह कौन है? जब तक वह इसका उत्तर नहीं देता, मैं उससे मिलने को तैयार नहीं हूँ।'

प्रसन्न को जाना पड़ा। सुमित्रा की दृढ़ता को वह भली भाँति जान

गया था।

सुमित्रा इस बीच अपने वस्त्र ठीक कर, चाय के लिए पानी गरम करने के स्थान पर अपने भावावेश को संतुलित और मनःस्थिति को प्रकृतिस्थ बनाए रखने का प्रयत्न करती रही। वह प्रत्येक अवस्था में, जो भी विपरीत स्थिति उसके सम्मुख आए, उसे झेलकर भी कहीं जाने को तैयार नहीं थी। अनेक प्रकार की अमंगलकारी दुर्भावनाएँ जो उसे चारों ओर से घेरकर व्यथित करने लगी थीं, ऊँच-नीच सोचने को बाध्य कर रही थीं। उसके पति के घर छोड़कर चले जाने के बाद से आज तक कोई उससे मिलने नहीं आया था और न किसी ने यही जानने का प्रयत्न किया था कि वह कहाँ है, किस स्थिति में है और इससे भी बढ़कर कि वह जीवित भी है या नहीं?

प्रसन्न ने लौट आकर बताया कि जो व्यक्ति आया है वह एकदम सफ़ेदपोश है, पर जितने ही उसके वस्त्र स्वच्छ हैं, उतना ही उसका चेहरा कुरूपता और क्रूरता से भरा है। वह पिछले एक वर्ष से उसकी खोज में है। अपने साथ वह एक पत्र भी लाया है, जो उसे ही देगा। इसके बाद प्रसन्न ने यह भी कह दिया कि वह सोच-समझकर उससे बात करे। घबड़ाने या डरने की जरूरत नहीं है। वह स्वयं भी प्रत्येक परिस्थिति के लिए तैयार है।

सुमित्रा निर्भयता से किन्तु शंकित हृदय बाहर कमरे में आई। उस व्यक्ति ने उठकर दोनों हाथ मिलाकर उसे नमस्ते किया, फिर सामने की कुरसी पर बैठकर और उसे सुमित्रा के ठीक सामने एकदम निकट लाकर बोला—'मुझे आप नहीं पहचानती होंगी सुमित्रादेवी, पर मैं आपसे अपरिचित नहीं हूँ। जब आप अपने पति के साथ थीं, तो मैं आपके यहाँ कई बार आया था। वे मेरे सबसे बड़े मित्र हैं। उन्होंने आपके नाम एक पत्र दिया है। आप उसे पढ़ लीजिए, और चलने की तैयारी कीजिए। वे आपको पाकर बहुत खुश होंगे। आप चाहें तो···।'

'जी, मैं उनके लिए सब-कुछ करूँ यही न? लाइए, पहले पत्र दीजिए।' कहकर उसने अपना हाथ बढ़ा दिया।

उस व्यक्ति ने शैतान की भाँति मुस्करा कर जेब से एक लिफ़ाफ़ा निकालकर उसकी ओर बढ़ा दिया।

सुमित्रा एक साँस में सारा पत्र पढ़ गई। पत्र छोटा किन्तु अलंकारिक भाषा से भरा था। उसके पति की ओर से वह लिखा गया था, जिसमें उसने यह लिखा था कि उसे निस्सहाय छोड़कर चले जाने के बाद उसे अपनी कायरता पर बड़ी ग्लानि लगी और वह आत्मघात करने का प्रयत्न करता रहा, किन्तु किसी न-किसी प्रकार बच जाता रहा। उसके एक मात्र मित्र, जो पत्र ला रहे हैं, उन्होंने उसके जीवन में नया प्रभात ला दिया। उसने मृत्यु का सहारा छोड़-कर अपनी चिकित्सा कराई और अब वह पूर्ण स्वस्थ है और अनुभव करता है कि उसे उसकी (सुमित्रा) आवश्यकता है। वह अपने अपराध के लिए बार-बार क्षमाप्रार्थी है। अब वह पत्र देखते ही चली आए। प्रसन्न बाबू के प्रति वह अत्यन्त कृतज्ञ है जिन्होंने उसे अपने यहाँ आश्रय दिया है—चाहे वह किसी रूप में हो। वह उसे हृदय से अपनाने के लिए व्याकुल है और उसके जाने के बाद से आज तक के आचरण को क्षमा करने को तैयार है।

सुमित्रा पत्र पढ़कर उबल पड़ी। असंयत होकर रोष से उसने पत्र फाड़कर टुकड़े टुकड़े कर दिया, फिर उसे उस व्यक्ति के मुँह पर घृणा से फेंकती हुई अपनी कुरसी पीछे खींचती बोली—'आप उनसे कह दें उन्होंने चाहे मुझे क्षमा कर दिया हो, पर मैंने उन्हें नहीं किया है। मैं उनके लिए मर चुकी हूँ।'

उस व्यक्ति ने पत्र के टुकड़ों को जैसे फूल समझते हुए और अपने मानापमान का ध्यान न करते हुए कहा—'आपको ऐसी बातें नहीं करनी चाहिए सुमित्रा देवी। सोच देखिए, आप उनकी पत्नी हैं—विधिवत पत्नी। कानून की दृष्टि से आप उनके साथ बँधी हैं। सामाजिक बन्धन तो है ही और सबसे बड़ा हिन्दू जाति का नैतिक बन्धन है कि विवाहिता स्त्री अपने पति को छोड़कर पर पुरुष के साथ रहने से....।'

सुमित्रा से और आगे सुनना असह्य हो गया। वह आवेश में आकर उठकर खड़ी हो गई, और तड़प कर बोली—'धर्म, समाज, कानून और

नैतिकता की दुहाई देने वाले पहले आप उत्तर दीजिए, कि अपनी दुर्बलता को समझकर भी समाज में सर उठाकर चलने के लिए किसी युवती को व्याह लाना कहाँ तक उचित और नैतिक कार्य कहा जा सकता है? आज मुझे जो क्षमा करने को कह रहा है, वह कितना क्षुद्र प्राणी है, यह स्वयं जानता है? इसी से स्वयं आगे आने को तैयार नहीं है। अपना पाप आदमी समझ ले, किन्तु···। आप यहाँ से उठकर सीधे चले जाइए। मेरे उनके बीच में आप क्यों आकर खड़े हो गए? साफ़-साफ़ यह क्यों नहीं कहते कि आप ही मुझे अपने लिए चाहते हैं। उठिए, अब कभी यहाँ आने का साहस न करिएगा।'

वह व्यक्ति इतना निरादर पाकर भी बेशरमी से मुस्करा उठा। उठने का प्रयत्न न करता हुआ निश्चिन्तता से बोला वह—'मैं भी ठीक यही सोचता था। प्रसन्न बाबू का जादू लगता है पूरी तरह हो चुका है। और एक बात जानती हैं—नारी अपना दोष छिपाने के लिये इतने विकराल रूप से निर्दोष होने का प्रदर्शन करती है कि सब-कुछ जानते हुए भी उसे सत्य मानना पड़ता है। बस सुमित्रा देवी, यहीं पर आदमी लाचार है। नारी उसकी कमजोरियों में सर्वप्रमुख है। आप चाहे अब तक पवित्र ही हों और प्रसन्न बाबू से आपका······।'

सुमित्रा आगे सुनने के लिए रुकी नहीं। बड़ी कठिनाई से अपने आँसुओं को रोकती हुई वह भीतर आकर अपने कमरे में पहुँचकर फफक-फफक कर रो पड़ी। प्रसन्न सुमित्रा को जोर से बोलता पाकर कमरे के दरवाजे पर आ खड़ा हुआ था। उसने सुमित्रा को जाने से रोकने के स्थान पर बाहर कमरे में पहुँचकर उस व्यक्ति से मोर्चा लेना ठीक समझा। तेज़ कदम बढ़ाता हुआ जैसे ही वह बाहर कमरे में पहुँचा, वह व्यक्ति उसे दरवाजा पार कर जाता हुआ दिखाई दिया। प्रसन्न उसे देखता रहा। आगे बढ़कर उससे विवाद करने का मन फिर उसका नहीं हुआ।

## १५

पिछले दिन की उस घटना ने सुमित्रा को सारे दिन और सारी रात अप्रकृतिस्थ बनाये रखा। प्रसन्न ने उसे कुछ शान्त करने का प्रयत्न किया, किन्तु उसके मुख पर विषाद की छाया बिखरी ही रही। वह सोचती थी कि उसके और प्रसन्न के सम्बन्ध की पवित्रता पर कोई विश्वास नहीं करता है। परित्यक्ता हो जाने के बाद उसकी स्थिति उस चरित्र-भ्रष्टा स्त्री की भाँति हो गई है, जिसे कोई भी पर-पुरुष अपने साथ रख सकता है और वह अपने नारीत्व की मर्यादा को तिलांजलि देकर वेश्यावृत्ति भी करने को तत्पर हो सकती है। पुरुष चाहे जैसा हो, पत्नी के लिए उसकी छाया ही सब कुछ है। समाज में स्त्री का आदर पति के साथ इतनी जटिल और गूढ़-ग्रन्थियों से बँधा है कि उसके टूटते ही स्त्री कटी हुई पतंग के समान निराधार होकर पतन के गहरे गर्त में हर समय गिर सकती है। जो व्यक्ति उसके पति का पत्र लेकर आया था, उसके भी नेत्र सुमित्रा के सौन्दर्य और उसके शरीर के भूखे थे। वास्तव में अपने छल और प्रपंच से वह उसे अपने साथ ले जाना चाहता था। सुमित्रा के पति का पत्र भी उसी ने लिखा था। वह जानता था कि पत्नी का आदर्श पति की आज्ञा मानने में है, इसलिये सुमित्रा उसके साथ तुरन्त जाने को तैयार हो जायगी और वह उसे भय दिखाकर अपने साथ रहने को मजबूर कर लेगा।

सुमित्रा सोकर उठी तो उसे अपना सर बड़ा भारी लगा। हलकी पीड़ा के साथ विचारों की आँधी उसे अभी भी व्यथित किये थी। अपने कमरे से निकलकर वह बाथरूम की ओर जा रही थी। प्रसन्न उधर से गम्भीर मुद्रा बनाये लौटा आ रहा था। उसके निकट आने पर उसने कहा—'आज नौ बजे की गाड़ी से बनारस चलेंगे सुमित्रा, तैयारी कर लो चटपट।'

सुमित्रा उत्तर में कुछ न कहकर सीधी चली गई। आज जैसे उसके

पैरों में न गति शेष है और न मुख में बोलने की शक्ति।

बाथरूम से लौटने के बाद उसे अपनी तबियत हल्की जान पड़ी। प्रसन्न अभी तक उसकी प्रतीक्षा में चाय पीने को बैठा था। उसके आ जाने पर बोला—'एक जरा-सी बात को तुम इतना बड़ा रूप दिये बैठी हो सुमित्रा, क्यों? यह तो संसार है। सब कुछ इसमें होता है। हम अपने वचन और कर्म से यदि शुद्ध और निष्कलुष हैं, तो ऐसे लांछन हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। भूलो इस सबको। बनारस में तुम्हें सुमति के पास कुछ दिन के लिये छोड़ देंगे। जी बहल जायगा, पर एक बात का ध्यान रखना होगा। कहीं उसके सामने अपनी असमर्थता न प्रकट कर देना। वह तुमसे नव-चेतना प्राप्त करना चाहती है। उसका जीवन बड़ा दुख-मय है।'

सुमित्रा ने चाय का प्याला होठों के पास ले जाकर पूछा—'और कहीं वह मनहूस छाया वहाँ भी पहुँच गई, तब क्या होगा? मैंने निश्चय रूप से समझ लिया है कि वह मुझे पथभ्रष्ट करना चाहता है और एक नारी अपनी रक्षा करने के लिये जो मार्ग अपनाती है, उसे भी भइया तुम जानते हो।' कहकर वह जैसे काँप उठी, जिससे चाय की बूँदें उसके कपड़ों पर गिर पड़ीं। उसकी वाणी का ओज, उत्साह और उसके भावों की दृढ़ता सब न जाने कहाँ विलीन हो चुकी थी?

प्रसन्न ने सुमित्रा के इस नवीन रूप को देखा। नारी वास्तव में जहाँ उग्र है, वहीं लाचार भी है। यदि उसमें विपत्ति झेलने की असीम शक्ति है, तो अपना विनाश करने की दुर्बलता भी है। दो परस्पर-विरोधी भाव-नाओं का समन्वय का रूप है वह। इसीलिए उसकी बुद्धि की अस्थिरता भी विख्यात है। विश्व इतिहास में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है, जहाँ नारी-बुद्धि ने घोर अनर्थ किये हैं और उनको लेकर ही भीषण रक्त-पात और युद्ध की विभीषिका से सैकड़ों राज्य नष्ट हो गये हैं। प्रसन्न आगे और नहीं बढ़ा। विचारों की शृङ्खला को जहाँ का तहाँ विश्राम देकर बोला—'वह व्यक्ति तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता, सुमित्रा। और तुम्हें अपने

साथ तो किसी प्रकार भी नहीं ले जा सकेगा। पर उसकी मक्कारी और चालों से बचना होगा। जानती हो, ऐसे लोग केवल एक बार अपने मन की साध मिटाने के लिए सारे जीवन चैन से नहीं बैठते हैं। वे सब उपाय काम में लाते हैं। पर तुम सतर्क रहना। अगली बार वह आया नहीं कि पुलिस के सुपुर्द उसे किया नहीं। और हाँ, हर्ष भी तुम्हारी सहायता करेगा। वह 'जर्नलिस्ट' है। उसे भी दाव-पेंच आते होंगे।'

सुमित्रा ने खड़े होते-होते कहा—'प्रसन्न भइया, मुझे सबसे बड़ा अपनी बदनामी का भय है। वह मेरे लिए मृत्यु से भी बढ़कर है। मैं यह जानती हूँ कि मेरा तुम्हारे साथ रहना, समाज को एक वैसा अवसर देता है, पर आखिर मैं करती भी तो क्या? यहाँ रहकर मैं कम-से-कम अपने आचरण के लिए अग्नि-परीक्षा तो दे सकती हूँ, वैसे मेरे लिए····।'

'तुम्हारे लिए—क्या तुम्हारे लिए सुमित्रा?' प्रसन्न ने आतुरता से पूछा। 'तुम्हारे लिए सब-कुछ उचित है। तुम्हारे साथ जो दुर्व्यवहार हुआ है उसका उत्तरदायी यही समाज है, जो आज तुम्हें लूटना चाहता।'

सुमित्रा ने आगे बात नहीं बढ़ाई। कमरे से बाहर जाती हुई बोली—'मैं सामान ठीक करती हूँ, बनारस जो चलना है। ये बातें तो जीवन की समाप्ति पर ही मन से निकल सकेंगी।'

प्रसन्न ने चाय का अन्तिम घूँट पीते हुए जैसे उसी के साथ सुमित्रा के शब्द भी गले के नीचे उतार लिए। फिर वह भी उठकर अपने कमरे में चला आया।

नौ बजे की गाड़ी से वे दोनों बनारस जाने के लिए स्टेशन पहुँच गए। भीड़ से बचने और आराम से यात्रा करने के लिए प्रसन्न ने इण्टर क्लास के टिकट लिए थे। वे दोनों कम्पार्टमेन्ट में आकर बैठ गए। प्रसन्न बुकस्टाल से दो पत्रिकाएँ साथ लेता आया था, उन्हें सुमित्रा को देता हुआ बोला—'पैसेञ्जर ट्रेन है। हर स्टेशन पर ठहरती चलेगी। मुगलसराय पहुँचते-पहुँचते दोपहर हो जायगी। फिर वहाँ से बनारस पहुँचना होगा। सुमति खाना तैयार किये बैठी मिलेगी।'

सुमित्रा एक पत्रिका उठाकर उसके पृष्ठ उलटने लगी थी। प्रसन्न की इन निरर्थक बातों में उसने दिलचस्पी नहीं ली।

गाड़ी छूटने में दो-तीन मिनट रह गए थे। अचानक प्रसन्न तेज़ी से उठकर प्लेटफ़ार्म पर उतर गया। सुमित्रा ने उसे जाते हुए देख लिया था। प्लेटफ़ार्म पर दृष्टि डाली तो उसे किसी के पीछे जाते हुए देखा। इसी बीच एक अन्य मुसाफ़िर बेफ़िकरी से कुछ गुनगुनाता हुआ आकर सामने वाली बर्थ पर पैर फैलाकर लेट गया। सुमित्रा की ओर भरपूर दृष्टि से देखकर भी उसने अपना भाव ऐसा बनाए रखा कि उसे जैसे देखा ही न हो। उसके पास कोई सामान नहीं था। और बर्थ पर लेट जाने के बाद वह अपना गीत ज़ोर-ज़ोर से अपने भद्दे स्वर में गाने लगा था। सुमित्रा बार-बार खिड़की से झाँक रही थी। गाड़ी के सीटी दे देने के बाद भी जब वह नहीं लौटा, तो उसे बड़ी बेचैनी लगने लगी। वह कुछ समझ नहीं सकी कि उसने जिसका पीछा किया है, वह कौन है?

अन्त में एक झटके के साथ गाड़ी चल पड़ी। प्रसन्न फिर भी नहीं आया। सुमित्रा की बेचैनी को वह मुसाफ़िर लेटा-लेटा देख रहा था और अपने गीत को गाता जाता था। सुमित्रा वास्तव में उसे वह सुन्दर अछूता पुष्प लगी, जिसे अभी तक केवल मुग्ध-दृष्टि से निहारा ही जा सका है। उसे तोड़कर अभी सूँघा नहीं गया है। वह उसकी तुलना उस अक्षत नवयौवना से करने लगा, जो साक्षात रति के समान अलौकिक रूप धारण कर मनुष्य को ही क्या देवताओं तक को पराजित कर सकती है। और हरबंस···उसने एक क्षण सोचा—दोनों अनिन्द्य सुन्दरी हैं। उन दोनों ने चुनाव करने में धोखा नहीं खाया है।

गाड़ी ने कुछ तेज़ी पकड़ ली थी। प्लेटफ़ार्म के टीन के शेड के पार होते ही उसे प्रसन्न दिखाई दे गया, जिसने लपककर कंपार्टमेण्ट का डण्डा पकड़ लिया। सुमित्रा की जान-में-जान आई। वह इसके पूर्व कुछ पूछे कि प्रसन्न स्वयं बोल उठा—'उस दुष्ट की छाया दिखाई पड़ी थी, पर वेष बदला हुआ था। ठीक से पहचान नहीं सका। उसी के पीछे लगा रहा।'

सुमित्रा बर्थ पर ठीक से बैठने वाली थी, पर उस मनुष्य की बात सुनकर उसका मुख जैसे पीला पड़ गया और वह बेसुध-सी जैसे गिर पड़ी।

प्रसन्न उसे सँभालता हुआ आगे कहने ही वाला था कि उस मुसाफ़िर को देखकर रुक गया। मन में कहा उसने—यह कहाँ से मरने आ गया यहाँ ? सुमित्रा को ठीक से पूरे बर्थ पर लिटाकर वह उस मुसाफिर से बोला—'अगर आपको तकलीफ न हो तो आप उधर वाली बर्थ पर चले जायँ।'

वह व्यक्ति बड़े तपाक् से उठ खड़ा हुआ और बोला—'क्यों नहीं, प्रसन्न बाबू ? आप आराम से बैठिए। मैं उधर निकला जाता हूँ।'

प्रसन्न अपना नाम सुनकर उसका मुख देखकर रह गया।

उसने बिना रुके आगे कहा—'आप मुझे नहीं पहचानते हैं। इलाहाबाद में आप बहुतों को नहीं जानते हैं, पर आपको सब लोग पहचानते हैं। रेडियो-आर्टिस्ट को भला कौन नहीं जानेगा ? आपका गाया हुआ एक गीत ही मैं अभी गुनगुना रहा था।' फिर बहुत बेतकुल्लफ़ी से कहने लगा—'बनारस जा रहे होंगे आप ? वहाँ भी कई एक अच्छे गाने वाले हैं। म्यूज़िक कान्फ्रेंस होगी वहाँ ? और आप क्या मिसेज़ प्रसन्न हैं ? कुछ बीमार लगती हैं ? जब तक आप नहीं आए, बड़ी परेशान रहीं।'

प्रसन्न ने बर्थ पर पैर फैलाते हुए उत्तर दिया—'ये मेरी बहन हैं सुमित्रा। इनकी सहेली हैं बनारस में, उन्हीं के यहाँ हम लोग जा रहे हैं। तबियत ठीक है और वैसे तो आप जानते हैं, हिन्दुस्तान की स्त्रियाँ बड़ी जल्दी घबड़ा उठती हैं।'

उस मनुष्य ने 'जी-जी' करके दाँत निकाल दिये।

सुमित्रा लेटी न रहकर बैठ गई और अपना ध्यान फिर पत्रिका में लगाने की निरर्थक चेष्टा करने लगी। किन्तु उस मनुष्य के यहाँ भी आ जाने और साथ चलने की आशंका से वह इतनी भयभीत-सी हो गई कि उसे वह पत्रिका ही क्या सब कुछ नीरस और अरुचिकर लगने लगा। मन के भीतर द्वन्द्व उठने के बाद जब मनुष्य की दुष्प्रवृत्तियाँ विजय पा जाती हैं,

तो उन्हें दबाने के लिए सद्‌विचारों का अवलम्बन भले ही लिया जाय, किन्तु उनका रूप-परिवर्तन कर पाना असम्भव-सा हो जाता है। सुमित्रा जानती है कि उसके पीछे वह व्यक्ति यदि पड़ गया है तो उसका सर्वस्व ही संकट में घिर गया है। अवसर पाकर वह क्या नहीं करेगा, और जो कुछ वह करेगा, वह सब क्या उसे पहले जैसा बनाए रख सकेगा? समाचार-पत्रों में संवाद प्रकाशित होगा। सम्भव है मुकदमा भी चले और तब उसे भी अदालत में अपने बयान देने होंगे। शपथ के साथ उसे कहना पड़ेगा कि वह परित्यक्ता है। उसका पति···है, इसलिए उसे छोड़कर चला गया। उसने प्रसन्न के यहाँ उसकी बहन के रूप में आश्रय लिया और यह व्यक्ति–अपराधी के कटघरे में वह खड़ा होगा, यह व्यक्ति उसके पीछे पड़ गया और एक दिन उसने अवसर पाकर उसका नारीत्व, उसकी मर्यादा, उसकी इज्जत-आबरू सब कुछ नष्ट कर डाली। उसे पतित कर डाला। फिर उसके बयान होंगे। दोनों ओर के वकील बहसें करेंगे। दलीलें दी जायँगी और सबसे निर्लज्जता पूर्ण कृत्य यह होगा कि उससे अभियुक्त का वकील उस घटना की, जब उसे पथभ्रष्ट किया गया, एक-एक बात स्पष्ट रूप से पूछेगा और वह पुराने उदाहरणों का प्रमाण देते हुए अदालत को यह समझाने का प्रयत्न करेगा कि यह जो कुछ हुआ है, सब उसकी मरजी से। उसके साथ बल-प्रदर्शन नहीं किया गया। वह युवती है। पति उसका छोड़कर चला गया। प्रसन्न को वह भाई मानती है, तब अपनी वासना, अपनी काम-पिपासा को शान्त करने के लिए उसे पुरुष की आवश्यकता निश्चय ही थी, किन्तु वह उसके लिए कह तो नहीं सकती थी।

सुमित्रा जैसे आवेग से काँप उठी। प्रसन्न यदि उसे सहारा न देता तो वह बर्थ से नीचे गिर पड़ती।

प्रसन्न को अपनी गलती अब जान पड़ी। उस व्यक्ति की चर्चा उसने व्यर्थ ही कर दी। सुमित्रा उसी के नाम से विचलित हो उठी है। उसने सुमित्रा को समझाते हुए दृढ़ स्वर से कहा—'तुम डरती क्यों हो सुमित्रा? सोचो, तुम तो अपना कार्य-क्षेत्र घर के बाहर ही बनाने का निश्चय कर

रही हो। 'पब्लिक सरविस' करने वाले को तो हर समय विपरीत परि-स्थितियों का सामना करना पड़ता है। तुम अपना साहस क्यों खोती हो? मेरे रहते....।'

आगे वह व्यक्ति बिना प्रसंग जाने ही कह बैठा—'ठीक है, आपके रहते सुमित्रा देवी को किस का भय हो सकता है? आप तो छाया की भाँति पीछे ही लगे रहते हैं। मुझे लगता है आपको किसी का डर सता रहा है। वास्तव में कुछ लोग ऐसे होते भी हैं, जिनकी भद्दी और मनहूस शक्लें लोगों को डरा देती हैं और ऐसे आदमी खतरनाक भी होते हैं। इसी गाड़ी में आगे के कम्पार्टमेण्ट में एक ऐसा व्यक्ति बैठा है, जो ठीक वैसा ही है, जैसा मैंने अभी बताया। पर आप लोगों का उससे क्या मतलब? आपका रास्ता और है, और उसका और।' फिर बहुत आपसी के ढंग से बोला—'माफ़ कीजिएगा, बिना पूछे मैंने बीच में अपनी राय दे दी है।'

गाड़ी एक स्टेशन पार कर आगे बढ़ रही थी।

सुमित्रा उस मनुष्य के विषय में जानने को उत्सुक हो रही थी, इसलिए कि यह वही व्यक्ति था जो उससे मिलने आया था। उसके सम्बन्ध में जितना जो-कुछ मिल सके, वही बहुत है। उसने प्रसन्न को संकेत किया। प्रसन्न ने पूछा—'आप उसे जानते हैं क्या?

'खूब जानता हूँ उसे।' उस व्यक्ति ने प्रभावोत्पादक वाणी से कहा—'और उसे ही क्या, उसके सारे साथियों को जानता हूँ। एक लखनऊ में बिश्वास बाबू हैं। इन लोगों का दल, सुमित्रा देवी आप माफ़ करें, औरतों का व्यापार करता है। मैं नहीं समझ पाता कि आपको यह क्यों परेशान करता है? आप तो भले घर की हैं। समाज में ऐसे व्यक्ति ही तो गन्दगी फैलाते हैं। उन्हें कड़ी सज़ा मिलनी चाहिए। और देखिये, आप लोग डरिये नहीं। मैं पूरी तरह से आपकी सहायता करूँगा।'

विश्वास का नाम सुनकर सुमित्रा और प्रसन्न पहले एक-दूसरे को फिर उस अपरिचित व्यक्ति का मुख देखते रहे। विश्वास अपनी पत्नी सुमति को छोड़ कर अब दूसरी स्त्रियों के पीछे दौड़ रहा है। प्रसन्न ने पूछा—'आप विश्वास

को भी जानते हैं ? वह तो विवाहित है, तब···।'

'विश्वास बाबू विवाहित है ?' उस व्यक्ति ने आश्चर्य से पूछा । 'पर वह तो हरबंस नाम की एक लड़की को अपनी पत्नी बनाना चाहता है ? पहली पत्नी कहाँ है उसकी ?'

सुमित्रा इस रहस्य के प्रकट कर देने के पक्ष में नहीं थी । सुमति को भी कहीं इस दुर्भाग्य में न घसीटा जाय इसलिए वह प्रसन्न को चुप कराना चाहती थी, पर उसने तत्काल ही कह दिया—वह बनारस में है । विश्वास से उसके एक लड़की भी है । हम लोग वहीं···।'

प्रसन्न का वाक्य पूर्ण होने के पहले ही सुमित्रा ने बीच में कह दिया—'जी नहीं, वह अब बनारस से अपने घर चली गई है । हम लोग तो दूसरी जगह जायेंगे ।'

उस व्यक्ति ने भेद-भरी दृष्टि सुमित्रा पर डाली, फिर निश्चिन्त होकर बोला—'आप लोग कहीं भी जायँ, मुझे क्या करना है ? पर इस प्रकार की बातें, जो एक-दूसरे के स्वयं विपरीत हैं, सुनने का मैं आदी नहीं ।' कह कर वह बर्थ पर लेट गया ।

प्रसन्न आगे कुछ कहने वाला था, पर सुमित्रा ने उसे मना कर दिया । अधिक सरल बनना भी अपनी हानि करता है, यह वह जानती थी । आज इस छोटी-सी यात्रा में इस व्यक्ति से जो बातें हुई हैं, वे महत्व की होकर कुछ-का-कुछ रूप धारण कर सकती हैं । और सबसे बड़ी आशंका यह है कि इस व्यक्ति का नाम-धाम भी पता नहीं । वह उन दोनों को तो जानता है, पर उसे वे नहीं जानते । कहीं वह भी उसी दल का न हो और अपने मतलब के लिए यहाँ आ बैठा हो ?

गाड़ी अपनी गति से चलती जा रही थी और सुमित्रा अस्थिर सी, भविष्य में अकस्मात् ही आ घटने वाली दुर्घटनाओं की भयावह कल्पना से सिमटी जा रही थी ।

१६

अगला स्टेशन आने पर कम्पार्टमेंट का तीसरा व्यक्ति आँधी की भाँति उतर गया। प्रसन्न उसे देखने के लिए उसके पीछे जाने को चला, पर सुमित्रा ने उसे पकड़ लिया। बोली—'सब-कुछ जानकर भी वही करोगे प्रसन्न भइया, जिससे बाद में पछताना पड़े। वह दुष्ट गाड़ी में चल ही रहा है और साथ ही मुझे लगता है कि यह भी उसका साथी है। तुमने सुमति का पता बताकर बड़ा बुरा किया। देखो न, हम लोग कहीं पर भी सुरक्षित नहीं हैं। यह पुरुष जाति क्यों इतनी निष्ठुर और मदान्ध है भइया कि स्त्री को सब प्रकार से यातना पहुँचाने के साथ उसे भ्रष्ट कर डालना चाहती है? हम लोगों ने उसका क्या बिगाड़ा है?'

प्रसन्न के पास सुमित्रा की इन बातों का, जिनमें मर्म व्यथा व्याप्त थी, कोई उत्तर नहीं था। वास्तव में पुरुष स्त्री पर निरन्तर अत्याचार आज से नहीं आदि-काल से करता आ रहा है। नारी कोमलांगी है। उसकी पीड़ा की अनुभूति इतनी जाग्रत रहती है कि वह उसे लेकर ही पल-भर में विनाश तक की सोच जाती है। उसे सब प्रकार से अशक्त बनाकर और उसमें ही अपनी पूर्णता पाकर पुरुष की बुद्धि की विलक्षणता ने नारी को त्रस्त करने से कुछ उठा नहीं रखा है। सुमित्रा से इस सबको कहना अनुपयुक्त समझ-कर उसने विषय बदलते हुए कहा—'उस सबका कहाँ तक समाधान हो सकेगा? हाँ एक बात तुम्हें स्मरण है सुमित्रा? उस व्यक्ति ने कहा है कि विश्वास हरबंस नाम की लड़की को अपनी पत्नी बनाना चाहता है। यह विश्वास सुमति का ही पति है। बनारस चलकर उसे यह सब बताया जाय अथवा नहीं, यह तय कर लें हम लोग।'

सुमित्रा ने इस विषय-परिवर्तन को स्वीकार कर लिया। जिस वस्तु से व्यथित होकर उसने प्रसन्न के सम्मुख एक पहेली रख दी थी, उसे वह

सुलझाने में निश्चय ही असमर्थ था। इस नवीन प्रसंग पर अपनी सम्मति देती हुई बोली वह—'सुमति से उस सबकी चर्चा करना उसके दुख को और बढ़ाना होगा। हाँ, तुम भइया लखनऊ जाकर विश्राम बाबू से एक बार अवश्य मिलो। उन्हें समझाना कि वह सुमति को साथ लेकर अपनी गृहस्थी में फिर लौट आएँ। इसी में सामाजिक जीवन की सार्थकता है। रोज अपनी रुचि बदलते रहने से तृप्ति तो मिलती नहीं, उल्टे विशृङ्खलता जीवन को भीतर-ही-भीतर समाप्त करती रहती है और फिर मनुष्य के जीवन का कुछ ध्येय है, उसे भी वह क्या गँवा देना चाहते हैं ?'

प्रसन्न भी इन्हीं विचारों का था। पर हर्ष को वह यह जरूर बता देगा, यह उसने निश्चय कर लिया। इसके लिए सुमित्रा से सलाह लेने की कोई आवश्यकता नहीं समझी उसने।

गाड़ी बढ़ती जा रही थी। मिर्ज़ापुर भी निकल गया और वे दोनों बीच-बीच में बातों का प्रसंग चलाकर फिर अपनी-अपनी पत्रिका पर दृष्टि दौड़ाने लगते। मुगलसराय आने पर उन्होंने गाड़ी बदली और तब बनारस के स्थान पर काशी में ही उतरकर सुमति के यहाँ के लिए ताँगा कर चल दिए। उन्होंने पीछे मुड़कर यह नहीं देखा कि कोई छाया की भाँति रिक्शा पर आ रहा है। यह वही व्यक्ति था जो सुमित्रा से मिलने आया था और जो उसे पाने के लिए अपना मन मसोसकर रह जाता था।

जिस समय ताँगा आकर रुका, सुमति ने दरवाज़े से झाँककर देखा। बिनी अभी कुछ देर पहले खेलते-खेलते सो गई थी। प्रसन्न पहले उतरा और बाद में सुमित्रा। सुमति ने चाहा कि अभी दौड़ जाकर सुमित्रा के गले से लिपट जाय। उनका प्रथम बार मिलन था। दोनों ने जी-भरकर परस्पर एक-दूसरे का रङ्ग-रूप निहारा, फिर प्रसन्न की चिन्ता न कर दोनों पल भर में एक-दूसरे से लिपट गईं। सुमति के आँसू बहने लगे थे।

अन्दर आकर सुमित्रा ने बिनी को जगा दिया। उसे बिना सोते से जगाये और बिना मातृ-सुलभ वात्सल्य से प्यार किये उसका मन नहीं माना। अपने साथ लाई अन्य सामग्रियों में से चाकलेट निकालकर उसके होठों से

लगाकर वह उसे जगाने लगी थी। प्रसन्न और सुमति का अभी तक कभी साक्षात्कार नहीं हुआ था। केवल हर्ष ने पत्रों के द्वारा उन दोनों को परिचित करा दिया था। प्रसन्न कुरसी पर बैठकर अपनी यात्रा की थकान उतार रहा था। सुमति ने उससे परदा करना चाहा, पर वह चल नहीं सका। प्रसन्न ने प्रारम्भ से ही कई प्रश्न उसकी शिक्षा, बिनी के स्वास्थ्य तथा अन्य बातों को लेकर पूछ डाले, जिनका उत्तर सुमति को देना ही पड़ा।

खाना बना रखा था, सुमति बोली—'सुमित्रा दीदी, आप लोग पहले कुछ खा-पी लें, फिर बातें हों।

प्रसन्न ने सुमित्रा के बदले उत्तर दिया—'हम लोग यहाँ खाने नहीं आये हैं सुमति जी, हम लोग तो तुम्हें देखकर और बातें सुनकर अपना जी भर लेंगे। भूख-प्यास सब-कुछ छोड़कर यहाँ तक आ पाये हैं।'

सुमित्रा ने आगे कहा—'पर एक कमी रह गई। हम लोगों ने गलत सोचा। हर्ष को भी यहाँ तक साथ ले आना था, बजाय इसके कि हम लोग इन्हें लेकर वहाँ तक चलते। उल्टा चलना पड़ेगा। रास्ते में मिरज़ापुर पड़ा था। तार मिल जाने पर वह स्टेशन आ जाते और आ जाने पर फिर वापसी सम्भव नहीं थी। उन्हें साथ आना ही पड़ता।'

सुमति ने अवसर पाते ही कह दिया—'इसलिए कि आप साथ थीं। वे आपको···।'

'नहीं सुमति, तुम समझी नहीं।' सुमित्रा ने बीच ही में कह दिया। 'इसलिए कि हम लोग तुम्हारे यहाँ आ रहे थे।'

सुमति उठती हुई बोली—'छिपाओ मत दीदी, अब तो 'दर्पण' इलाहाबाद से निकलेगा। बनारस मिरज़ापुर से जितना ही निकट पड़ता है, उससे कहीं अधिक दूर होता जायगा। हर्ष बाबू ने एक पत्र में मुझे इसका कारण भी लिख भेजा है, पर उसमें यह नहीं लिखा है कि वह कारण आप हैं। यह तो मैं आपका पत्र पाकर अनुमान लगा सकी हूँ।'

सुमित्रा बिनी से खेल रही थी। वह बार-बार प्यार से बिनी के कपोलों का चुम्बन ले रही थी, जिससे बिनी तंग आकर अपना मुख दूर रखना

चाहती थी पर सुमित्रा का मन ही नहीं भरता था। प्रसन्न ने भी सुमति का व्यंग्य सुना था, किन्तु उसमें कड़ुवाहट या शुष्कता नहीं थी। मृदुल-हास्य के बीच सुमति ने यह उपहास किया था, जिससे सुमित्रा रुष्ट होने के स्थान पर मन-ही-मन आह्लादित हुई थी।

रसोई घर में पहुँचकर सुमति कुछ क्षण के लिए जैसे स्तब्ध-सी रह गई। अभी वह सुमित्रा पर जो व्यंग्य कर आई है, उसका सम्बन्ध सीधा हर्ष से है, और तब हर्ष से उसका जो नाता है, वह क्या स्वयं ही उसकी उपेक्षा करना चाहता है? उसके जीवन में यदि सुमित्रा ने प्रवेश कर लिया है, तो भी वह उससे ईर्ष्या करने का अधिकार नहीं रखती है। इसलिए कि······।

दरवाजे पर आहट मिलते ही उसका ध्यान टूटा। देखा उसने सुमित्रा बिनी को गोद में लिए खड़ी है। सुमति को अपनी स्थिति बड़ी दयनीय लगी उस समय। सुमित्रा ने उसे खड़े हुए विचार सागर में डूबते-उतराते देख लिया था, जबकि वह खाना लेने आई थी। वह सुमित्रा से दृष्टि न मिला सकी। सम्भलकर बोली—'सोच रही थी दीदी कि खाना एक थाली में लगाऊँ या दो में? इसी में देर हो गई।'

सुमित्रा ने उसके मन के भीतर उठते हुए द्वन्द्व को ताड़कर भी मुस्करा कर स्नेहपूर्ण वाणी में कहा—'तुम बड़ी भोली हो सुमति। हम लोग कोई गैर हैं क्या? एक ही थाली में सब लोग खा लेंगे। क्या अविश्वास···।'

'अरे, नहीं दीदी', कहकर सुमति अपनी सफ़ाई देने लगी। 'यों ही संकोच में पड़ गई थी कि कहीं आपको मेरा बनाया खाना पसन्द न आये? आप लोग मेरे ऊपर हँसेंगे ही केवल।'

सुमित्रा बोली—'हँसना होगा तो वैसे भी हमारे पास तुम्हारे विरुद्ध काफ़ी मसाला है। पर सोचती हूँ सुमति कि हम लोगों का हँसना क्या उचित है? तुम हमारे ऊपर जरूर········।'

'नहीं दीदी', सुमति जैसे पछताते हुए बोली—'वह सब मेरी ना-समझी है। मैं भी क्या हो गई हूँ? अपनी स्थिति तो देखती नहीं, उल्टे

आप लोगों से मज़ाक करने बैठ गई ?' फिर बिनी से बोली 'ले री बिनी, मेहमानों की खातिर नहीं करेगी ? तेरी मौसी जी हैं ये।'

बिनी सुमित्रा की गोद से उतरने का प्रयत्न करने लगी। पर सुमित्रा ने उसे इतना कसकर दाब रखा था कि वह चाहने पर भी नीचे नहीं उतर सकी। प्यार से उसके कपोलों को काटती हुई बोली सुमित्रा—'अब तू मेरे पास से हट नहीं सकेगी बिनो, समझी। तेरी मां ही सब कुछ नहीं है, मैं भी तेरी कुछ हूँ। मेरे पास रहेगी तो तुझे 'डान्स' सिखाऊँगी, गाना सिखाऊँगी। तू 'एक्ट्रेस' बनेगी न ? तेरी सूरत ठीक वैसी ही है।'

बिनी संकट में पड़ी थी। रोने का उसका स्वभाव नहीं था। अपना मुँह किसी प्रकार बचाने के लिए सुमित्रा के वक्ष में छिपाने लगी, जिसके स्पर्श से उसे ऐसा लगने लगा कि अब उसे किसी की आवश्यकता नहीं रही है। वह बिनी को पाकर पूर्ण हो गई है। उसके शरीर और मन को जो आत्मिक-सुख प्राप्त हो रहा है, वही उसके जीवन की अमूल्य निधि है। बस, उसे कुछ और नहीं चाहिए। बिनी इसी प्रकार अपने बाल-स्नेह से उसकी ममता को जाग्रत कर, उसके मन-प्राण को आह्लादित और प्रफुल्लित करती रहे।

सुमति ने थालियाँ लगा दी थीं। सुमित्रा से बोली—'चलो दीदी, वहीं कमरे में बैठने का प्रबन्ध कर लें न ? प्रसन्न बाबू से कहो कि हाथ-मुँह धो लें।'

सुमित्रा बिनी को हिलाती-झुलाती एक गीत गाती हुई कमरे में आई तो देखा कि प्रसन्न कुरसी पर आराम से बैठा सो रहा है। पैर फैलाने के लिए उसने एक दूसरी कुरसी रख ली है। सामने मेज पर दृष्टि गई तो अभी की आई डाक दिखाई दी। प्रसन्न को सोता पाकर पोस्टमैन कमरे में आकर मेज पर चिट्ठियाँ रखकर चला गया था। उसने निस्संकोच हो डाक उठा ली। बिनी को उसने एक कुरसी पर बिठा दिया और डाक को पलट कर देखने लगी कि सुमति थाली लिए आ गई।

सुमित्रा ने उससे कहा—'लो सुमति, हर्ष बाबू का कार्ड है। मैंने

पढ़ा नहीं है । पर वह खुला पत्र क्यों भेजते हैं ?' कहीं किसी और के हाथ में पड़ जाय तो क्या होगा ? और यह 'दर्पण' की प्रति है । क्यों, इसे तो मैं देख सकती हूँ ।' कहकर उसने रैपर फाड़कर फेंक दिया और 'दर्पण' देखने लगी ।

सुमति ने कहा—'दीदी फिर कहोगी कि मैं हँसी करती हूँ ? हर्ष बाबू का पत्र हाथ में पड़ते ही बिनी को गोद से उतार दिया । लो पढ़ लो, आज ही शाम तक आ जायँगे । कोई काम है, जो मिलने पर बतावेंगे ।'

सुमित्रा 'दर्पण' के मुख पृष्ठ पर छपी चौकोर बार्डर से घिरी हुई सूचना पढ़ रही थी, जिसमें 'दर्पण' के व्यवस्थापक ने लिखा था कि आर्थिक तथा अन्य कठिनाइयों के कारण 'दर्पण' का प्रकाशन स्थगित करना पड़ रहा है । यह अंक पत्र का अन्तिम अंक है, अतः समस्त लेखकों, कवियों व पाठकों से क्षमा-याचना करते हुए उनकी सद्भावना के प्रति व्यवस्थापक सदा ऋणी रहेगा ।

सुमति की बात से सुमित्रा का ध्यान टूटा । बोली—'अब तुम्हारी इन चुटकियों का उत्तर मैं तब दूँगी, जब हर्ष बाबू आ जायँगे ।' फिर प्रसन्न को जगाते हुए कहा—'उठो भइया, खाना इन्तजार कर रहा है और नई खबर-हर्ष बाबू आज ही बनारस आ रहे हैं । 'दर्पण' का प्रकाशन बन्द हो गया है ।'

अर्धनिद्रित अवस्था में प्रसन्न था । चौंककर जाग उठा । आँखें खोलीं तो सुमति को मेज के निकट थाली के पास खड़ा पाया । उसे लगा जैसे इस नारी के अन्तस्तल में कहीं कुछ ऐसी गहन पीड़ा व्याप्त है, जो उसके मुख के लावण्य को तो आक्रान्त कर ही चुकी है, साथ ही उसके शरीर के गठन और विचारों को भी जर्जर कर चुकी है । अपने मुख पर वह जो प्रसन्नता छिटकाने का प्रयत्न करती है वह सब केवल एक दुराशा-मात्र है, एक कृत्रिम-हास्य ।

वह कुरसी से एकदम उठकर खड़ा हो गया । बोला—'ओह ! तुम्हें तकलीफ़ देने तो मैं नहीं आया हूँ सुमति । तुम निश्चिन्त रहो, मैं अभी

आया खाने। शाम की गाड़ी मे हर्ष आ रहा है। यह भी ठीक रहा। मिरजापुर में अब उसका कौन रह गया है? 'दर्पण' था सो भी बन्द हो गया।' कहकर वह गुसलखाने की ओर बढ़ गया।

प्रसन्न के खा चुकने के बाद सुमित्रा और सुमति रसोईघर में खाने चली गईं।

# १७

मनुष्य स्वभाव से भीरु होता है किन्तु अपने जीवन में वह जो महत्वपूर्ण कार्य करता है, उसके लिए अपनी परिस्थिति को आमूल परिवर्तित कर लेता है। उसका यह अदम्य उत्साह ही उसकी कार्य-प्रगति बनकर उसे जीवन का लक्ष्य पूर्ण करने में सहायक सिद्ध होता है। और जो लोग उत्साहहीन होते हैं, वे निरुद्देश्य भटकते रहकर एक दिन अपनी इह-लीला समाप्त कर चले जाते हैं।

तेजासिंह अपने जीवन को भार समझकर जैसे उसे ढो रहा था। उसके सामने एक ही लक्ष्य था हरबंस का विवाह कर देना और उसके बाद फिर वह जैसे एकदम निश्चिन्त हो जायगा। पश्चिमी पंजाब से उजड़कर आने वाले जहाँ फिर पुरुषार्थ से अपने पैर टिका सके थे और एक प्रकार से पूर्ववत् नौकरी या व्यापार में लग गये थे, वहाँ तेजासिंह केवल मदन-होटल में अपना भाग पाकर ही सन्तुष्ट रह जाता था। विश्वास उसे धोखा दे रहा है, यह जानते हुए भी वह अपने को उस स्थिति से लड़ने के लिए जैसे मजबूर पाता था।

हरबंस के विवाह के दिन निकट आते जा रहे थे। तेजासिंह ने

विश्वास से उस दिन के बाद फिर विवाह-सम्बन्धी बात नहीं की थी। उसके साथ हरबंस का विवाह करने को वह कभी राजी नहीं था। यह तो एक प्रकार का सौदा था, जिसे वह घृणित समझता था। इधर के लोगों के प्रति उसके मन में तीव्र अरुचि उत्पन्न हो गई थी और एक-दो बार उसने विश्वास से अलग हो जाने की बात भी कहनी चाही, पर उसमें कानूनी अड़चन खड़े हो जाने का भय था। सरकार ने होटल की इमारत उसे अपना काम चलाने के लिये दी थी। वह विस्थापित है और अब उसे बसाना और काम दिलाना सरकार का उत्तरदायित्व है। उसे तो पूरा कर दिया गया है। सरकार ने उसे आर्थिक सहायता अलग से दी है, फिर उस सबका अनुचित लाभ उठाकर उसने विश्वास को साझीदार क्यों बना लिया है जो होटल का पूर्ण स्वामी बन बैठा है, साथ ही हरबंस को भी चाहता है।

पिछले दिन उसने एक मकान किराये पर लेने की बात की थी। वहीं से शादी करने की तैयारी के विषय में वह सोचता रहा। संध्या को विश्वास अचानक उसके कमरे में जा पहुँचा। वह तेजासिंह की गति-विधि पर निरन्तर दृष्टि रखता आ रहा था। एक नौकर उसने केवल इसीलिए रख छोड़ा था।

कमरे में हरबंस की उपस्थिति की चिन्ता न करते हुए उसने असभ्यता से कहा—'पुलिस को तुम्हारे चरित्र पर सन्देह है तेजासिंह, जिसे तुम नहीं जानते शायद। यह विवाह जो होने जा रहा है, वह सब एक ढोंग है। इंस्पेक्टर मेरा अपना आदमी है, इससे मैंने उसे आज तो टाल दिया है, पर आगे जो होगा, उसे तुम जानो। और जिस मकान को तुम लेना चाहते हो, उसमें एक दूसरे का ताला पड़ा है।' फिर तेजासिंह के निकट जाकर और हरबंस की ओर एक बार अर्थ भरी दृष्टि डालकर उसने शरारत से भर-कर कहा—'मेरा कहना मानने में जब तुम्हारा सारा काम बनता है, तो उसे क्यों नहीं मान लेते ? हरबंस कोई तुमसे पैदा तो है नहीं, जो तुम्हें उसके लिए···।'

तेजासिंह की आँखों में खून उतर आया। उसने पलक मारते ही अपना सारा बल लगाकर एक तमाचा विश्वास के गाल पर इतने जोर का मारा कि वह सम्भल न पाकर कुरसी से टकराता हुआ नीचे आ गिरा। फिर उस पर निरन्तर लात और घूंसों की बौछार करता हुआ वह बड़बड़ाने लगा—'कुत्ते···और कहेगा ? दूसरों की कोई इज्जत ही नहीं तेरे लिए ? जान से मार डालूँगा शैतान के···।'

और उस दिन क्रोधावेश में तेजासिंह परिणाम की चिन्ता न करते हुए शायद विश्वास को मृत्यु के घाट लगा ही देता यदि हरबंस उसे पकड़ न लेती। अपनी पूरी शक्ति से उसे झकझोरते हुये वह विश्वास से दूर कर सकी, फिर बोली—'मैनेजर साहब, इसे अपना अपमान मत समझना। नाव वाली घटना याद है न ? जाइये और कोई नहीं जान पाया है। स्त्री की भी समाज में अपनी कोई जगह है और उसकी आबरू····।'

विश्वास के दाँतों से खून निकलने लगा था। उसे पोंछता हुआ वह सम्भलकर उठा और हरबंस का वाक्य पूरा होने के पहले ही कमरे से बाहर चला गया। उसे इस समय शारीरिक पीड़ा के साथ ही जो मानसिक व्यथा सता रही थी, उसमें वह दुखी होने के साथ ही इतना मर्माहत हो गया था कि इतना तिरस्कृत होने पर क्रोध से अपनी जान पर खेलने के स्थान पर वह रो पड़ा। अपने कृत्य पर शरम और लज्जा से गड़ जाने के स्थान पर वह बेशरमी और बेहयाई के आँसू बहाता रहा। इस समय उसे उस मुसाफिर की याद बार-बार आई जिसने तेजासिंह को ठिकाने लगाने का निश्चय किया है। और हरबंस, उससे तो वह ऐसे बदला लेगा, जो वह भी याद करेगी। जब वह सुमति जैसी विवाहिता पत्नी के प्रति कठोर बनकर उसका परित्याग कर चुका है, तो इस बाजारू हरबंस—बिलकुल ठीक है। हरबंस उसके लिए एक बाजारू औरत के बराबर है। उसके प्रति वह क्या दया दिखा सकेगा ? उसे ऐसा तड़पायेगा कि वह भी याद करेगी जन्म भर ! उसके गाल पर पड़ा तमाचा, लात-घूँसे, दाँतों से बहने वाला खून सबका बदला लिया जाएगा।

अभी वह स्वस्थ होकर बैठ भी न पाया था कि उसके कमरे में एक अजनबी आकर कुरसी पर बैठ गया। उसकी लम्बी दाढ़ी थी और वह आँखों पर काला चश्मा लगाये था। अलीगढ़ी पाजामे पर शेरवानी उसने पहन रखी थी, जिसके बटन वह बार-बार घुमाता जाता था। सर की टोपी उतारकर मेज़ पर रखते हुए उसने पूछा—'मैनेजर साहब, कहिये हाल-चाल तो दुरुस्त हैं ?'

विश्वास उसे सहसा पहचान नहीं सका। उसकी ओर देखकर कहा—'मैंने पहचाना नहीं आपको। आप....?'

'जी मुझे....हः हः हः। कैसे पहचानेंगे भला ?' उसने कुटिलता से कहा। 'पर आप कुछ परेशान-से लगते हैं। मैं आपको और हैरान नहीं करूँगा।' कहकर उसने दरवाजा बन्द कर दिया, फिर आँखों पर से काला चश्मा उतारकर और दाढ़ी के बाल हटाकर पूछा—'अब देखिये मेरी तरफ़, पहचान पाया....?'

विश्वास के जी में आया कि उससे लिपटकर जी-भरकर रो ले, और उससे अपने अपमानित किए जाने की सारी घटना विस्तारपूर्वक सुना दे। इस समय वह उसी की याद कर रहा था। बहुत ठीक मौके पर वह आ गया है। फिर तुरन्त ही उसे ध्यान आ गया कि अपनी दुर्बलता और अपने मारे जाने की बात उसे सुनाकर वह एक रहस्य जो अभी तक छिपा है, प्रकट कर देगा। उस व्यक्ति को हरबंस के विवाह की बात शायद नहीं मालूम है। साथ ही उसके विचारों से भी वह परिचित नहीं है। इस प्रकार के लोगों पर तब अपनी कमज़ोरी प्रकट कर देना मानो अपने को उनकी दृष्टि में गिरा देना है। पल-भर में सजग होकर और विपरीत स्थिति पर अधिकार करते हुए उसने कृत्रिम उत्साह प्रकट करते हुए कहा—'ओह ! आप हैं ! क्या रूप बनाया है ! कलकत्ता से कब वापसी हुई ! इधर मेरी तबियत कई दिन से ख़राब रही। अभी ठीक नहीं हूँ।'

उस व्यक्ति ने आराम से दूसरी कुरसी पर पैर फैलाते हुए कहा—'कलकत्ता से तो तभी लौट आया था। हम लोग कहीं जमकर तो रहते

नहीं। इधर काम किया, उधर शहर छोड़ा। हर समय जान की खैर मनानी पड़ती है, इसमें रूप बदलते रहना पड़ता है। हाँ, यह तो कहिये अपनी हरबंस का क्या हाल है? लोगों का कहना है कि वह अभी तक....' आप समझ गए न? पर मैं इसे मानने को तैयार नहीं हूँ। आपका क्या ख्याल है? इधर तो आपका नाम उसके साथ जुड़ने लगा है। सुनने को यह भी मिला है कि उसकी शादी कानपुर में हो रही है। मुझे तो लगता है कि आप बहुत कुछ मुझसे छिपाये रहते हैं। खैर, वह सब भी सामने आ जायगा। और देखिये इधर, कहकर उसने अपनी शेरवानी के बटन खोलकर भीतर एक छुरा और एक रिवालवर लटकता हुआ उसे दिखाया।

विश्वास ने आँखें बन्द कर लीं। बीमारी की दुर्बलता के सहारे वह अपना भय छिपाता हुआ बोला—'न जाने कैसी बीमारी है कि चक्कर आने लगते हैं? दवा काम नहीं दे रही है। आप बड़े हिम्मती हैं। हरबंस के लिए आपने जो सुना है वह ग़लत है। मुझसे उसका कोई सम्बन्ध नहीं है। वैसे वह वाहियात औरत है, एकदम बे-ग़ैरत। ये लोग उस सब को कोई महत्त्व नहीं देती। मैं तो चाहता हूँ उसका ब्याह हो जाय और मेरा होटल पवित्र हो।'

वह मुसाफ़िर इस प्रकार उसकी बातों में आने वाला नहीं था। विश्वास के मुँह पर दृष्टि जमाकर बोला—'पिछली बार मैनेजर साहब, आपने कहा था कि मदन होटल में गन्दा व्यापार नहीं होता है और हरबंस चरित्रवती युवती है। आज आप उसके विरुद्ध चरित्रभ्रष्टा होने का दोष लगा रहे हैं। मेरे लिए यह कोई कम रहस्य की बात नहीं है। मुझे सब-कुछ याद रहता है। बोलिए सचाई क्या है? और आपका मुँह, होंठ यह सब क्यों फूले हैं? मार-पीट हुई है, लगता है? क्या तेजासिंह लड़ा था? उसकी जान तो वैसे भी जाने वाली है। मेरा दूसरा साथी भी है। शहर घूमकर आता होगा। इस बार हम लोग आपके मेहमान बनकर रहेंगे, यह न भूलिएगा।'

विश्वास ने चाहा कि कह दे—अभी चले जाओ, फिर कभी आना।

इसलिए कि शारीरिक-पीड़ा-मिश्रित मर्मान्तक मानसिक-वेदना उसे जैसे निर्जीव किए दे रही थी। उसे भय था कि कहीं उस व्यक्ति के सामने ही वह संज्ञाशून्य होकर न गिर पड़े। किसी प्रकार उससे छुटकारा पाने का मार्ग खोजता हुआ बोला वह—'जब तक चाहे रहिए। होटल आप लोगों का है। और इस समय मैं माफ़ी चाहूँगा। कहा था न, बीमार रहा था। आज ही सीढ़ियाँ चढ़ते हुए गिर गया था। चोट आप देख ही रहे हैं। भला मैं क्या लड़ूंगा? और उस तेजासिंह से—कभी नहीं।'

उसने उठते हुए अपना रूप फिर पहले-जैसा बना लिया और बोला—'मेरी पहचान कर लीजिए ठीक से। मैं किसी भी समय, किसी भी वेष में आ सकता हूँ। कहीं ऐसा न हो कि आप मुझे पुलिस के सिपुर्द कर दें?' उसने एक शरारत-भरी दृष्टि फिर विश्वास पर डाली।

विश्वास अपनी जगह से उठा नहीं।

'और देखिए', उसने दरवाजे पर खड़े होकर कहा—'आपकी परीक्षा भी होनी है मैनेजर साहब, तैयार रहिएगा। मैं आपको आने पर एक और रहस्य बताऊँगा।'

विश्वास झल्ला उठा—'चल, शैतान के बच्चे! तू मेरी परीक्षा क्या लेगा? यह तो कह कि एक दाँव मैं हार गया, नहीं तो···नहीं तो तुझे क्या बताऊँ? हार-जीत तो होती ही रहती है। मुझे सम्भल लेने दे, हाँ, फिर मेरे हथकण्डे तू देखेगा। और रहस्य···तू रहस्य को समझता ही नहीं है। तू केवल एक हत्यारा और लुटेरा है।'

वह व्यक्ति इसे सुनने के लिए रुका नहीं था। सावधानी से वह जिस प्रकार आया था, उसी प्रकार नीचे उतर गया। विश्वास की झल्लाहट उसके कमरे में व्याप्त होकर जैसे उसे ही खलने लगी।

और मदन होटल में जो अप्रत्याशित दुर्घटना आज हो गई, उसके विषय में होटल के सारे नौकर अनभिज्ञ ही रहे।

# १८

हरबंस उपन्यास पढ़ते-पढ़ते चौंक पड़ी। घबराहट से उसके शरीर में जैसे कँपकँपी-सी दौड़ गई और वह शिथिल होकर एक ओर लुढ़क गई। तेजासिंह बाहर जाने के लिए कपड़े पहन रहा था। दौड़कर उसके पास आ गया। पूछा—'कैसी तबियत है हरबंस? क्या हो गया? काँप क्यों रही हो?'

उसने आँखें बन्द कर रखी थीं। उन्हें खोलते हुए बोली—'डर लग रहा है मुझे। इस 'नावेल' में ऐसा ज़िक्र एक जगह पर आया है, जैसा यहाँ इस कमरे में हो चुका है। उसका नतीजा बड़ा बुरा निकला। मार-पीट करना ठीक नहीं था।'

तेजासिंह बिलकुल ही भयभीत नहीं हुआ, निःशंक होकर बोला—'डरने की बात ही क्या है? जो जैसा करेगा, उसे वैसा फल भोगना पड़ेगा। तुम नहीं जानती हरबंस, हम लोग कितने दबाये जा रहे हैं। यह विश्वास अपने-आप सारा पैसा हज़म कर हमें थोड़ा-सा हिस्सा दे देता है। मैंने हिसाब देखा है और ऊपर से चाहता है कि उसके साथ तुम्हारा विवाह कर दिया जाय। जब मैं राजी नहीं हुआ तो बेइज्जत करने पर उतारू है। उसे जो सबक मिला है वह भी कम है।

हरबंस को वह दृश्य स्मरण हो आया था, जब तेजासिंह का तमाचा खाकर विश्वास गिर पड़ा था और उस पर जी-भरकर उसने प्रहार किया था। उसे मार खाते देखकर कुछ क्षण के लिए हरबंस भी बहुत विचलित हो उठी थी, किन्तु वह बीच में बोल नहीं सकी थी। तेजासिंह के क्रोध का इतना प्रबल स्वरूप उसने आज ही देखा था और साथ ही जब उसके कमरे में आकर विश्वास अपनी डींगें मारने लगा था, तो वह भी उससे चिढ़ गई थी। प्रारम्भ से ही वह विश्वास को स्वीकार नहीं कर सकी। उसके मुख की बनावट उसे इतनी घृणामय लगती थी, कि वह उससे दूर ही रहना

चाहती थी। जिन परिस्थितियों में वह उसके साथ नदी की सैर को गई थी, उन पर अब उसे स्वयं ही ग्लानि और खीझ लग रही थी। किन्तु इतना सब होने पर भी उसका लात-घूसों से मारा जाना उसे न जाने क्यों बुरा लगा था? विश्वास के मुख की दयनीयता और उसके दाँतों से निकली खून की बूँदें उससे देखी नहीं गई थीं। बाद में जब विश्वास चला गया था, तो कमरे के फ़र्श पर गिरी बूँदों को उसी ने धोया था। नौकर को बुलाकर उन्हें धोने के लिए कहने का अर्थ था कि इस घटना का अनेक रूपों में प्रकट हो जाना।

तेजासिंह ने उसे चुप देखकर आगे कहा—''नावेल' पढ़ना अब बन्द कर दे हरबंस। ब्याह के बाद घर सम्भालना पड़ेगा। वहाँ मौका नहीं मिलेगा पढ़ने का। तब तू उससे झगड़ा करेगी। अभी से आदत बदल ले। 'नावेलों' में अनहोनी बातें भी तो होती हैं। दिमाग़ फिर उन्हीं में घूमा करता है। इसी से तू डर गई होगी। क्या तू समझती है कि पुलिस आएगी? नहीं जी, मैं साफ़ इन्कार कर जाऊँगा। उसकी गवाही देने वाला कौन है?' फिर कुछ रुककर पूछा—'और वह नाव वाली बात क्या है? बता तो? मुझसे छिपकर तू उसके साथ घूमने गई थी क्या? और वहाँ ···बोल वहाँ क्या हुआ था? क्या उसने तेरी इज़्ज़त पर हमला करना चाहा था? बोलती क्यों नहीं? तब तो मैं उसे जान से मार डालने को तैयार हूँ? ऐसे बदमाशों को···।' कहकर उसने अपनी त्योरियाँ चढ़ा लीं और दाँत पीस लिए।

हरबंस ने चाहा कह दे कि हाँ ऐसा ही हुआ था। किन्तु शीघ्र ही उसे ध्यान आ गया कि तेजासिंह का आवेश कहीं सचमुच ही विश्वास की जान न ले ले? तब उसे लेकर ही चारों ओर खबर फैल जायगी। पुलिस आएगी, सैकड़ों आदमी तमाशा देखने आएँगे। मुक़दमा चलेगा। उस पर ज़ोर-दबाव पड़ेगा। सब-कुछ सुनाने के लिए वह मजबूर की जायगी। भारी अदालत में उसका मुकदमा चलेगा। लोग उस पर ताने कसेंगे। तेजासिंह को फाँसी होगी, और उसे···वह छोड़ दी जायगी

जहाँ चाहे जाय, जिसके साथ चाहे रहे। अखबारों में यह सब निकलेगा, लोग पढ़ेंगे और तमाम आदमी उसे पाने के लिए दौड़-धूप करेंगे। कोई धन से, कोई गुण्डागिरी से और कोई अपनी जवानी की मस्ती से उसे अपनी ओर खींचेगा। वह बिकेगी, सरे बाजार बिकेगी। उसके शरीर का मोल होगा और वह दूसरों की इच्छा पर बलिदान हो जायगी।

विचारों की आँधी से वह इतनी भयभीत हो गई कि सहसा चीख उठी। 'नहीं-नहीं', वह चिल्लाई। 'ऐसा नहीं होगा। ऐसा हरगिज नहीं होगा।'

उसकी चीख विश्वास के भी कानों में पड़ी थी। इच्छा हुई उसकी कि उठकर देखे जाकर। शायद तेजासिंह हरबंस से कुछ बलपूर्वक मनवा रहा हो। कहीं उसकी भी यही दुर्गति न कर रहा हो, जो उसकी (विश्वास) कर चुका है। आजकल विवाह के व्यय के कारण तेजासिंह बौखला उठा है। मरने-मारने पर उतारू है। फिर न जाने क्या सोचकर वह उठा नहीं। उसकी कमर में कुरसी लग जाने से दर्द पैदा हो गया था, जिसे वह स्वयं ही 'हीटर' से सेंक रहा था। 'मरे हरबंस' उसने चिढ़कर क्रोध से कहा, फिर अपना मन इस अप्रिय घटना से दूर ले जाने का प्रयत्न करने लगा।

तेजासिंह अपना बाहर जाना भूलकर हरबंस के निकट आकर उसे हिलाते हुए कड़े स्वर में बोला—'क्या नहीं होगा हरबंस, बोल? ब्याह नहीं होगा तेरा? विश्वास से करेगी? पर सोच ले। पहले होश में आ जा? हाँ, मुँह से निकला कि तेरी हड्डी-पसली भी तोड़ डालूँगा। तुझे पालने-पोसने का यही नतीजा है? दुश्मन से.......।' कहता हुआ वह हरबंस के हाथ से नावेल छीनकर अपनी चारपाई पर जा बैठा।

होटल के दो नौकर, जो इधर के कमरों में सफ़ाई कर रहे थे, भागते हुए आ गये थे। वे बाहर से झाँक रहे थे। आवाज़ देने या एकदम से भीतर घुस जाने का उनका साहस नहीं था। कुछ देर तक आहट लेने के बाद वे चले गये।

हरबंस उठकर बैठ गई। अपने को संयत कर उसने कहा—'नाव

वाली बात केवल इतनी है कि जब तुम कानपुर गये थे, तब हम कई लोग गोमती की सैर को गये थे। मैनेजर विश्वास बाबू भी न जाने कैसे वहाँ पहुँच गए। वहाँ इन्होंने रोहिणी से, वह जो चड्ढा साहब की लड़की है, मज़ाक करने की हिम्मत की। उसने इनकी खासी गति बनाई। यह तो बेशरम हैं। मुझ से कहते कुछ तो मैं इन्हें नदी में डुबो देती।'

तेजासिंह को अब संशय नहीं रह गया था। हरबंस ने जैसे भी हो, स्थिति स्पष्ट कर उसका भार हलका कर दिया था। फिर भी उसने पूछा—'तो इन्कार तू किसके लिए कर रही थी?'

'इन्कार', हरबंस ने दोहराते हुए कुछ क्षण बाद और सम्भलकर कहा। 'वह तो मैं इसलिए कर रही थी कि आप कहीं विश्वास बाबू की हत्या न कर दें। मैं बेहद डर गई थी। उस समय जो कुछ सोच गई, वह अगर मन में भरा रहता तो मैं सचमुच मर जाती।'

तेजासिंह जाने के लिए फिर उठ खड़ा हुआ, बोला—'अब यहाँ रहना ठीक न होगा। यह तो होटल है। सभी तरह के लोग आते हैं। आज मकान में शाम तक चले चलेंगे और फिर तेरे व्याह के बाद मैं जहाँ जगह मिलेगी, पड़ा रहा करूँगा। एक काम, जिसे पूरा करने की आदमी ज़िम्मेवारी लेता है, पूरा करने के बाद उसे जो सुख मिलता है, वही जानता है। ज़माना बड़ा खराब है हरबंस, बिलकुल बदला हुआ। किसी पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अपने लोग ही साँप बनकर काट लेते हैं। तेरे कारण कोई ऐसी-वैसी बात तो मैं कभी सहन कर ही नहीं सकता। पहले से ही मैं मकान लेकर रहता, तो इतनी बात नहीं बढ़ती। एक बात और कहता हूँ तुझ से हरबंस, तू अपने रास्ते से इधर-उधर मत जा। तेरी हिम्मत पर मुझे संदेह नहीं है, पर कोई जानता नहीं कि क्या होने वाला है? मेरे मुँह में कालिख न लगे, तुझे यही हरदम सोचते रहना है। मुझे अभी कानपुर एक बार फिर जाना है, पर किसी को पता न चलने पाए।'

हरबंस ने सब-कुछ सुन लिया। अपने चरित्र के प्रति वह स्वयं बहुत जागरूक है और फिर अब वह अपना पतन क्यों होने देगी जब विवाह के

दिन निकट आते जा रहे हैं। अपनी इस अमूल्य-निधि को संचित किये वह जीवन-संगी पाकर, उसके अर्पण कर देगी।

तेजासिंह कमरे से बाहर निकला और जीने की ओर बढ़ना ही चाहता था कि कोट-पैण्ट धारी एक व्यक्ति उसके सामने आ खड़ा हुआ। उसने कहा—'आप ही तेजासिंह हैं न? मैं सी. आई. डी. का इन्सपेक्टर हूँ। एक पुराने मामले का पता अब चला है। उसमें आपके बयानों की ज़रूरत है। सरकार उस मामले में जल्दी कर रही है। यों आपकी नज़र में वह कुछ नहीं है और हो सकता है कि आप उसे भूल चुके हों, पर सरकार के लिए छोटी सी बात भी बड़ी होती है। आप मेरे साथ चले चलिये। मजिस्ट्रेट के सामने आपका बयान होगा, फिर आप चले आ सकते हैं। कई दिन बाद तो आपका पता चल पाया है। पहले आप शरणार्थी क्वार्टरों में थे।'

तेजासिंह उस व्यक्ति के रोब में आ गया और दबकर भीगी बिल्ली बन गया। अपने काम की बात छोड़कर उसने कहा—'चलिए। अभी तो मैं समझ नहीं पाया कि कौन-सा मामला है? पर जानने पर जो पता होगा, जरूर बताऊँगा।'

वह व्यक्ति आगे बढ़ा, फिर कुछ रुककर पूछा—'इस मदन होटल का मालिक कौन है?'

तेजासिंह ने इस प्रश्न से लाभ उठाना चाहा। सोचा उसने कि अपने को पूरा मालिक बता देने से इन्स्पेक्टर पर कुछ अपना भी प्रभाव पड़ेगा, और पुलिस वाले हैसियतदार आदमी की ज़रा कद्र करते हैं, सो उसकी भी होगी। उसने कहा—'जी, मैं ही इसका मालिक हूँ।'

'ओह! बहुत अच्छा,' कहकर इन्स्पेक्टर मुस्कराया।' आप यहीं रहते हैं तो खुद ही सारा 'मैनेज' करते होंगे? मैनेजर की भी आपको ज़रूरत नहीं है? अच्छा चलिए।'

तेजासिंह ने मुड़कर उत्तर दिया—'जी नहीं, मैनेजर एक दूसरे साहब हैं, विश्वास बाबू। वही सब करते हैं। आइये, उनसे भी मिलते चलिए।

आजकल कमरे ही में पड़े रहते हैं। सुना है कहीं पीटे गए हैं।'

'क्यों, पुलिस में रिपोर्ट नहीं की?' इन्स्पेक्टर ने विश्वास के कमरे की ओर मुड़कर पूछा।

'जी वह अच्छे चाल-चलन का आदमी नहीं है। लड़कियों को छेड़ता है। सबसे अपना ब्याह करना चाहता है। ऐसे ही एक मौके पर एक लड़की के घरवालों ने कहते हैं, उसे खूब पीटा है।' तेजासिंह इस प्रकार विश्वास के विरुद्ध पुलिस वालों से उसकी शिकायत कर उससे अपना और बदला निकालने का एक अवसर पा गया था किन्तु उसने यह नहीं सोचा कि वह एक आपत्ति भी मोल ले रहा है।

इन्स्पेक्टर ने उस समय केवल इतना कहा—'इसके बारे में आपसे रास्ते में बातें होंगी।'

विश्वास के कमरे में पहुँचकर तेजासिंह ने उसकी ओर संकेत करते हुए कहा, 'ये हैं विश्वास बाबू! मदन होटल के मैनेजर और आप खुफिया पुलिस के इन्स्पेक्टर।'

विश्वास ने सतर्कता से पैनी दृष्टि इन्स्पेक्टर पर डाली, जिसने उसे आँख का संकेत दिया। उसकी समझ में सारी बात आ गई। यह इन्स्पेक्टर नहीं तेजासिंह का काल था। उसकी मौत की सवारी थी।

उसने उठने का प्रयत्न करना चाहा। इन्स्पेक्टर बोला—'आप लेटे रहिए मैनेजर साहब, मुझे पता है आपके काफ़ी चोट लगी है। इलाज ठीक से कीजिएगा। इस वक्त मैं एक जाँच के सिलसिले में आया था।' कहकर उसने अभिमान से विश्वास की ओर देखा।

विश्वास को आशंका हो गई कि कहीं तेजासिंह ने उस नकली इन्स्पेक्टर को मार-पीट की घटना न बता दी हो। वह इसे पुलिस का आदमी समझकर उससे सहायता चाहेगा। वह उलझन में पड़ गया।

तेजासिंह इन्स्पेक्टर के साथ कमरे से बाहर आ गया। हरबंस तेजासिंह का लौट जाना जानकर कमरे से बाहर आ गई थी। इन्स्पेक्टर ने पूछा—'कौन है यह?'

'मेरी लड़की हरबंस,' उसने बताया, फिर यह भी कह दिया कि उसका विवाह होने जा रहा है।

इन्स्पेक्टर ने निकट से एक गहरी दृष्टि उस पर डाली, फिर आगे बढ़ गया। तेजासिंह ने हरबंस से कहा—'मैं अभी आया। जरा इन्स्पेक्टर साहब के साथ जा रहा हूँ।'

एक ताँगे में बैठकर दोनों चल दिये। इन्स्पेक्टर ने पूछा—'इस बदमाश मैनेजर ने तुम्हारी लड़की को तो नहीं छेड़ा कभी?'

तेजासिंह सोच में पड़ गया।

उसने सख्ती से पूछा—'पुलिस का मामला है। ठीक-ठीक बताना होगा।'

तेजासिंह बताने को मजबूर था, किन्तु वह यह नहीं समझ रहा था कि यह मुसीबत उसकी नासमझी के कारण आ रही है। उसने जैसे फूँक-फूँक कर कदम रखते हुए उत्तर दिया—'वह हरबंस का ब्याह अपने साथ कर देने के लिए कहता था, जिसके लिए मैं तैयार नहीं था।'

'ठीक है। एक बदमाश के साथ भला आदमी अपनी लड़की का ब्याह कैसे कर सकता है?' इन्स्पेक्टर ने जैसे उसे ढाढ़स देते हुए कहा। 'यह ठीक किया तुमने और इसीलिए तुमने उसे मारा भी, क्यों? देखो छिपाने से सारा काम बिगड़ जायगा।'

तेजासिंह को स्वीकार करना पड़ा और फिर उसने विस्तृत रूप से उस घटना के साथ ही उसके पूर्व-प्रसंग का भी वर्णन किया, जब विश्वास ने अपनी युक्तिपूर्ण दलीलें देकर इधर के लोगों के साथ ब्याह आदि के सम्बन्ध स्थापित कर उनमें घुल-मिल जाने के लिए समझाया था। इन्सपेक्टर के वेष में वह नर-राक्षस मुसाफिर विश्वास को परास्त करने के लिए तेजासिंह से अकाट्य प्रमाण एकत्रित कर रहा था। उसे यह परिणाम निकालते विलम्ब नहीं लगा कि विश्वास इसीलिए उसके साथ मैत्री रखना चाहता है कि वह तेजासिंह को उसके मार्ग से हटा दे। फिर वह हरबंस को अपने अधिकार में कर ले और उसे पुलिस का भय दिखाकर भगा दे, और हरबंस···तेरा दुर्भाग्य

निकट आ रहा है। तू सुन्दरी है, और यही तेरे लिए जहर है। तेरा विवाह कहीं नहीं होने पाएगा। तुझे पुरुषों के साथ खेलना पड़ेगा—उनकी मर्जी के अनुसार चलना पड़ेगा। तेरी जैसी युवतियों के साथ सदा से यही होता आया है—और सदा होता रहेगा। कहते हैं जो अभिशापित होता है, वही अगले जन्म में सुन्दर स्त्री बनकर उसका प्रायश्चित करता है।

तेजासिंह सड़क के दोनों ओर देखते रहकर फिर इन्स्पेक्टर की मुद्रा परखने का प्रयत्न करता जाता था। उसे विश्वास हो गया था कि यदि उसने इन्स्पेक्टर को खुश कर लिया तो उसे मैनेजर विश्वास से यदि मुक्ति न भी मिली, तो भी वह आगे से अपना चरित्र ठीक रखेगा। पुलिस उसके पीछे पड़ गई, तब तो उसे लखनऊ छोड़ते बनेगा।

इन्स्पेक्टर ने बाजार में आकर एकाएक ताँगा रुकवा दिया, फिर उतरकर एक व्यक्ति से कुछ देर सशंकित ढंग से बातें करता रहा। एक-दो बार उसने जिससे बातें कीं, उसने भरपूर दृष्टि से तेजासिंह की ओर भी देखा, किन्तु तेजासिंह इस सबको समझ नहीं सका। वह बाजार की चहल-पहल को देख-सुन रहा था।

इन्सपेक्टर के लौट आकर बैठ जाने पर ताँगा फिर चल पड़ा। वह बिना किसी प्रसंग के बड़बड़ाया—'साले आज़ाद हो गये हैं, समझते हैं कोई कानून उन पर लागू ही नहीं होता ! पर मेरे रहते यह नहीं होगा। एक-एक को पकड़कर जेल में जिन्दगी-भर के लिए बन्द करा दूँगा। तब सारी बदमाशी निकल जायगी—गुण्डे।'

तेजासिंह सुनता रहा बैठा, बोला नहीं।

इन्स्पेक्टर फिर तेजी से अफ़सरी भाषा में तेजासिंह से बोला—'हाँ जी, पुलिस तुम्हारा भी चालान करेगी। तुमने एक बदमाश को, जिसका पता-ठिकाना नहीं है और जो औरतों को परेशान करता है, अपने होटल का मैनेजर बना रखा है। जान-बूझकर ऐसे आदमी को नौकरी में रखना कानून की नजर में जुर्म है। होटल में भले घर के लोग अपनी औरतों-बच्चों के साथ ठहरने आते हैं, यह तुमने नहीं सोचा ? पुलिस आख़िर है किस-

लिए ? मैनेजर का घर का पता जानते हो ?'

तेजासिंह अत्यन्त विनम्रता से बोला—'मुझे इस सबका पहले पता ही नहीं था। उसका घर भी नहीं मालूम कहाँ है ? मेरी बेटी हरबंस से एक बार उसने कहीं सुमति नाम की एक स्त्री का जिक्र किया था। आगे कुछ नहीं बताया उसने। वह शायद उसकी स्त्री है, जिसे वह छोड़ चुका है। इसलिए कि वह जब से यहाँ आया है, एक दिन के लिये भी कहीं नहीं गया है। पहले वह किसी को मनीआर्डर भी भेजता था, अब वह भी बन्द कर दिया है।'

इन्स्पेक्टर ज़रा रोप में आ गया। उसे तेजासिंह को हर प्रकार से आतंकित करना था और कानून का भय दिखाकर उससे सारी बातें जान लेनी थीं। उसने कृत्रिम रूप से दाँत पीसकर कहा—'एक साथ सारी बातें क्यों नहीं बताते ? तुम्हें और तुम्हारी लड़की को सब-कुछ मालूम है और मेरा तो ख़्याल है कि तुम्हारी लड़की तुम्हारे मैनेजर से रिश्ता जोड़ चुकी है। नहीं तो सुमति का नाम वह कैसे जानती ? अपनी निजी बातें और जिसमें कोई रहस्य छिपा हो, कोई यों ही नहीं बता देता। तुम्हारी लड़की ने क़सम खिलाकर उससे पूछा होगा। क्यों, मेरी बातें ग़लत लग रही हैं ? चलो एक के साथ दूसरा मामला भी चलेगा। ए ताँगे वाले, ज़रा जोर से चला, मजिस्ट्रेट कहीं दौरे पर न चले जायँ ?'

तेजासिंह की संज्ञा जैसे लुप्त होती जा रही थी। उसकी बुद्धि हैरान थी कि वह क्या करे और कैसे अपने को इस आपदा से बचाये। उसने जो कुछ सत्य रूप से कहा था, वही एक जाल-सा बनकर उसके चारों ओर इतनी तेज़ी से अपना घेरा डाल गया कि उससे बचकर निकल भागने का कहीं कोई मार्ग उसे नहीं मिल पाया। उसने साहस लगाकर उत्तर में जब कुछ कहने के लिए मुँह खोला ही था कि इन्स्पेक्टर बोल पड़ा—'लो, आ गया मजिस्ट्रेट साहब का बंगला। लगता है बाहर दफ्तर में ही हैं।'

तेजासिंह के ताँगे से उतरते समय पैर लड़खड़ा रहे थे और उसकी आँखों के सामने जैसे अँधेरा छाता जा रहा था।

## १६

उस नकली मजिस्ट्रेट के यहाँ तेजासिंह को सारे दिन रोक रखा गया। 'अभी बयान होते हैं', यह उनसे बार-बार कहा जाता रहा। बीच में मजिस्ट्रेट कहीं उठकर चला गया। जब लौटा, तब उनकी पुकार कराई गई। इस बीच उस इन्सपेक्टर ने उनसे किसी प्रकार की भी बात नहीं की। केवल इतना कहा—'मामला बड़ा संगीन है और चूँकि अभी खुफिया वालों के पास है, इससे अदालती कार्यवाही होने में देर है। परन्तु सारे कागज़ तैयार करने हैं, जिन्हें बंगले पर ही किया जाता है।'

तेजासिंह भूखा-प्यासा बैठा रहा था। उठकर जा भी नहीं सकता था। उससे जो प्रश्न किये गए, उनके विषय में वह बिलकुल अनभिज्ञ था। जिस घटना का उसे स्मरण कराया गया उसे भी वह नहीं जानता था। सब कुछ एक षड्यन्त्र के आधार पर हो रहा था। तेजासिंह से बयान देते समय बड़ी मूंछों वाले मजिस्ट्रेट ने केवल यह कहा—'तुम इस मामले के बारे में जो कुछ जानते हो, सब ठीक-ठीक बता दो। कोई दबाव नहीं है।'

उसने प्रारम्भ से अन्त तक अपनी अनभिज्ञता प्रकट करते हुए किसी प्रकार अपनी जान छुड़ाई। बाहर आकर उसने माथे का पसीना पोंछा और कुछ क्षण ठन्डी हवा के झोंके खाता रहा। उसे हरबंस की चिन्ता थी। वह न जाने क्या सोचती हो? सारा दिन लग गया यहाँ। विश्वास से झगड़ा है। वह न जाने इस बीच क्या मुसीबत पैदा कर दे?

वह आगे बढ़ा। सोचा था कि रिक्शा कर तुरन्त होटल पहुँच जायगा। तभी पीछे से किसी ने आवाज़ दी। उसने मुड़कर देखा—इन्सपेक्टर कमरे से निकलकर आ रहा है। निकट आकर उसने कहा—'देखो तेजासिंह, मैंने तुम्हारे खिलाफ़ एक बदचलन आदमी को होटल में मैनेजर रखने के जुर्म में कोई कार्यवाही नहीं की है। मैं उसकी जाँच करूँगा। तुम जो भी

मामले हों, मुझे बताते रहना। अभी तो मैं देहली जा रहा हूँ इसी मामले के सिलसिले में। तुम्हारे बयानों ने तो उसे उलझा दिया। खैर, वह सब कानूनी कार्यवाही है, होती रहेगी।' फिर क्रूरता का भाव छिपाकर मुस्कराता हुआ कहने लगा—'तुम मिले खूब! सारा काम बन जायगा। विश्वास को जेल भिजवा कर रहूँगा। और हाँ, मैंने रिक्शा मँगवाया है। मेरा एक आदमी तुम्हारे साथ जायगा। यहीं पड़ोस में आगे चलकर एक रेस्ट्राँ है। चाहना तो वहाँ जाकर चाय-वाय पी लेना। अच्छा, अब मैं चला। देखो कब मुलाक़ात हो!' कहकर वह आँधी की भाँति वहाँ से ग़ायब हो गया।

तेजासिंह उसे नमस्ते झुकाकर सड़क पर आ गया। इन्स्पेक्टर का आदमी उससे बोला—'मैंने आपके लिए रेस्ट्राँ में चाय का प्रबन्ध किया है। इन्स्पेक्टर साहब बड़े मनमौजी हैं, साथ ही हमदर्द भी। सारे दिन आपको यहाँ लग गया, इसका उन्हें बड़ा दुख है। आइये, इन्कार आप नहीं कर सकते। वहाँ रेस्ट्राँ के सामने रिक्शा लगा चलकर।'

तेजासिंह को जाना पड़ा किन्तु वहाँ जाने के लिए न तो उसके पैर आगे बढ़ रहे थे और न उसका मन ही साथ दे रहा था। बेबसी से जैसे वह खिंचा चला जा रहा था।

रेस्ट्राँ में देर नहीं लगी। जैसे सब पहले से ही तैयार था। तेजासिंह ने बैठते मन किन्तु आशंकित हृदय से चाय का प्याला उठा लिया और पीने लगा। दो-तीन घूँट पीने के बाद उसे लगा कि चाय कड़वी है। जायका बदला हुआ है। उसने मुँह बनाया।

उस व्यक्ति ने तुरन्त सफ़ाई पेश कर दी—'यह होटल-रेस्ट्राँ वाले चाय की पत्तियाँ बार-बार इस्तेमाल करते हैं। चीनी और लीजिये, कड़वी तो मेरी भी चाय है। माफ़ कीजिए, आप भी तो होटल के मालिक हैं। सभी जगह ऐसा कभी नहीं होता। पीते जाइये।

तेजासिंह ने बाध्य होकर तीन-चार घूँट और पिये। आगे उससे नहीं पी गई। कप रख दिया।

इन्स्पेक्टर के आदमी ने मन में कहा—'काम बन गया। दो घूँट ही काफ़ी थे तेजासिंह। चलो मेरा काम पूरा हो गया।'

तेजासिंह की मुखाकृति बदलने लगी। ज़बान ऐंठने लगी और हाथ-पैर अकड़ने लगे। तेज ज़हर का प्रभाव सारे शरीर में फैल गया था। उस व्यक्ति ने झटपट रेस्ट्राँ के एक कमरे में जाकर अपने कपड़े बदले। पुलिस की वरदी पहन ली और तेजासिंह को रेस्ट्राँ के नौकर के सहारे रिक्शे में बैठा दिया। निकट ही वह भी बैठ गया। रिक्शा वाला तेज़ी से पैर चलाने लगा। मार्ग में स्थान-स्थान पर वह व्यक्ति कहता जाता—'वाह रे जमाना! ऐसी पीते हैं कि होश ग़ायब। चल भई, तुझे घर तक पहुँचाने का हुक्म है नहीं तो नाली में पड़ा होता।'

तेजासिंह धीरे-धीरे मौत की घड़ियाँ गिनता जा रहा था। ज़हर ने अपना काम पूरा कर दिया था। वह उस व्यक्ति के ऊपर बिलकुल लुढ़क गया था। रिक्शा सड़क, चौराहा और बाजार पार कर भागता जा रहा था। पुलिसमैन के साथ तेजासिंह को देखकर कोई कुछ कह भी न सका। वह व्यक्ति बीच-बीच में रिक्शा तेज चलाने का आदेश देता जाता और इस प्रकार तेजासिंह के जीवन का पटाक्षेप कर, निडरता से भरे बाज़ार के बीच उसके शव को मदन होटल के कमरे में पहुँचा दिया गया। उस व्यक्ति ने वहाँ उपस्थित लोगों से कहा—'शराब इतनी पी ली है कि मुर्दा-सा पड़ा है। सड़क पर पड़ा था। इन्स्पेक्टर साहब ने देखा—जानते थे, यहाँ पहुँचाने का हुक्म दे दिया। नहीं तो कोई और होता तो जेलखाने भेजवा देता। और वह वेग से जीना पार कर सड़क पर आ गया। क्षण-भर में वह भीड़ में समा गया।

विश्वास अपने कमरे में ही था। वह आज होने वाले सारे घटना-चक्र को प्रारम्भ से ही जानता था। जब वह शैतान इन्स्पेक्टर बनकर तेजासिंह को अपने साथ ले गया था और जब उसके जाने के कई घण्टे बाद एक दूसरा व्यक्ति आकर हरबंस को यह कहकर बुला ले गया था कि पुलिस स्टेशन पर तेजासिंह उसे बुला रहा है, तो उसने एक बार अपनी

सारी शक्ति लगा कर क्रूरता से अट्टहास किया था, जिसने सारा कमरा ही क्या जैसे मदन होटल भी गुँजा दिया था। उस समय वह इतना प्रसन्न था कि उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि उसे अपनी इस अपरिसीम प्रसन्नता को किस प्रकार व्यक्त करना चाहिए? आगे जो घटने जा रहा है वह सब भी उससे छिपा नहीं था, किन्तु वह यह नहीं जानता था कि आज तेजासिंह की मृत्यु के साथ हरबंस भी चली जायगी। उसके मस्तिष्क में जो योजना थी, उसके अनुसार हरबंस होटल में ही रहती, फिर सब लोग ऊपरी दिखावा कर तेजासिंह के लिए दो आँसू बहाते और हरबंस के प्रति सहानुभूति प्रकट करते हुए उसे प्रत्येक प्रकार की सहायता देते रहने का आश्वासन देते। विश्वास ने एक बार यह भी निश्चय सा कर लिया था कि वह पुलिस को चुपके-से सारी बातों की सूचना देकर उन अभियुक्तों को पकड़वा देगा किन्तु उसकी चाल हार खा गई। मदन होटल के किसी भी आदमी का सहारा उन लोगों ने नहीं लिया, जैसा कि उससे कहा गया था। बाहर-ही-बाहर सारी कार्यवाही समाप्त कर दी गई और हरबंस को तेजासिंह का शव भी देखने को नहीं मिला।

वह अपने कमरे से बाहर आया। तेजासिंह का शरीर जैसा वह व्यक्ति डाल गया था, पड़ा था। कमरे से और तेजासिंह के कपड़ों से तेज शराब की महक आ रही थी। अब उसे अपनी गलती समझ में आ रही थी, जो उसने सारे रहस्य को समझने में की थी। तेजासिंह को कौन कहाँ ले गया था, इसे कोई नहीं जानता था। उसे ज़हर भी दे दिया गया और शव फिर मदन होटल भेज दिया गया; इससे पुलिस उस पर भी सन्देह कर सकती है। दूसरे हरबंस गायब है। इस सारे षड्यन्त्र में उसे सहज ही सम्मिलित किया जा सकेगा। तेजासिंह की मृत्यु से उसे जो प्रसन्नता हुई थी, उससे कहीं बढ़कर चिन्ता अब उसे हरबंस के गायब कर देने की हो रही थी। काँटा तो निकल गया पर उसकी टीस और तपन इतनी तीव्र हो रही थी कि लगता था पैर ही काट डालना पड़ेगा। ऐसी ही विपरीत परिस्थितियों के एकाएक उत्पन्न हो जाने से मनुष्य अपने मस्तिष्क का

सन्तुलन खो बैठता है और फिर बदहवासी में वह जो कुछ सोचता और करता है, उसका परिणाम उसके प्रतिकूल ही होता है। इसे दुर्भाग्य कह-कर लोग उस पर आँसू बहाते रहते हैं।

तेजासिंह के कई घण्टे तक न लौटने पर हरबंस व्याकुल हो उठी थी। जिस मनुष्य से उसने हरबंस को अपनी लड़की कहकर परिचित कराया था, उसने दूषित और हिंसक दृष्टि से उसकी ओर देखा था। हरबंस के मन में उसके प्रति जो उपेक्षा के भाव उत्पन्न हुए थे, उन्हें व्यक्त न करते हुए भी उसने चाहा था कि तेजासिंह को जाने से रोक ले किन्तु वह मुख से कुछ न कह सकी। पता नहीं वह इन्स्पेक्टर कौन है और किस लिए तेजासिंह को अपने साथ लिए जा रहा है, इसे जान लेने के लिए भी वह अपनी जबान न खोल सकी। इन्स्पेक्टर के रोब में वह भी आ गई थी। फिर तीसरे पहर के बाद एक व्यक्ति, जो पुलिस की वर्दी में था, उसे बुलाने आया और तेजासिंह का नाम लेकर उसे अपने साथ ले गया। विश्वास ने उसे जाते हुए देखा—पहले सोचा कि रोक ले, फिर साहस नहीं हुआ। सड़क की ओर खुलने वाले बरामदे में खड़ा होकर वह उसका जाना देखता रहा। उस समय उसे अनुभव हुआ कि जिस चिड़िया को उसने पकड़ रखा था, उसे स्वयं ही अपनी असावधानी के कारण छोड़ चुका है। अब वह वापस लौटकर आए न आए।

विश्वास के सामने जो पहेली थी, वह हल होने के स्थान पर और जटिल होती जा रही थी। वह तेजासिंह के शव को देखता खड़ा रहा। वह अपना दम तोड़ चुका था। उसे जहर इतना तेज दिया गया था कि जान लेने पर डाक्टरी उपचार के बाद भी उसके प्राणों की रक्षा न की जा सके। बहुत कुछ सोचने के बाद भी जब उसकी समझ में कोई उपाय न आया तो वह होटल के एक नौकर को बुला लाया और उससे तेजासिंह को ठीक से लिटाने और उसे होश में लाने के लिए कहा। किन्तु सारा खेल तो समाप्त हो था। उसने मुँह लटकाये हुए आकर बताया कि उसे शराब में जहर दिया गया है। साँस नहीं चल रही है। बेहोशी होती तो

होश में आ जाते। डाक्टर को बुलाना ठीक होगा। उसे तो लगता है कि वह अब रहे नहीं हैं।

सारे होटल के नौकर आकर एकत्रित हो गये। कुछ मुसाफ़िर भी आ गये, जो अपने कमरों में थे। जितने मुँह थे, उतनी बातें थीं। विश्वास से इस सम्बन्ध में जब कुछ पूछा गया तो उसने कुछ बताने से साफ़ इन्कार कर दिया। इसी में उसकी बचत थी। कहीं से भी कुछ बता देने के अर्थ थे कि तेजासिंह की मृत्यु के रहस्य में सम्मिलित होना। हरबंस को कौन ले गया, यह भी उसने नहीं बताया।

अभी आपस में बातचीत चल रही थी कि नीचे से पुलिस इंस्पेक्टर के साथ भीड़ घुस आई। उसने आते ही मैनेजर विश्वास को गिरफ्तार कर लिया, फिर सारी घटना के बारे में जाँच-पड़ताल कर तेजासिंह के शव की परीक्षा के लिए उसे अपने अधिकार में कर लिया।

विश्वास को एक और मुसीबत ने घेर लिया। हार-पर-हार उसकी हो रही थी।

## २०

हृदय जब किसी से मिलने के लिए आतुर होकर प्रतीक्षा की घड़ियाँ गिनता है और मन चंचलता से हर्ष-विह्वल होकर अनेक प्रकार की कल्पना करता है, उस समय एक-एक पल युगों सा लगता है। सुमित्रा और सुमति दोनों के लिए हर्ष का आगमन एक-दूसरे से बढ़कर उल्लासमय था।

संध्या हो गई, और धीरे-धीरे रात की चादर फैलने लगी, किन्तु हर्ष तब भी न आया। उन दोनों के मुख पर नैराश्य की वेदना की छाया फैलते देर नहीं लगी।

प्रसन्न बिनी को लेकर घूमने निकल गया था। सोच रहा था कि लौटने पर हर्ष से मिलेगा और तब वह बिनी को लेकर पार्क में जा बैठा। वह हरी-भरी घास पर खेलने लगी थी। आज वह घर से कहीं निकल पाई थी। फूलों के पौधे, बेलें और फव्वारा सब कुछ उसे बड़ा आकर्षक लग रहा था। वह फूलों के तोड़ने में लग गई। प्रसन्न, हर्ष के जीवन पर एक लम्बी दृष्टि डालकर उसके भविष्य पर विचारने लगा। 'दर्पण' बन्द हो गया है, किन्तु उसके जीवन की गति इधर पत्रकारिता में ही समाई है। वह और कुछ नहीं कर सकेगा। और पेट पालने के इस जटिल धन्धे के साथ मानवीय दुर्बलता भी उसके पीछे लगी है सुमति के प्रति वह सहृदय है, शायद आजीवन रहे। उससे सम्बन्ध जोड़कर नहीं बैठ सकता। सुमति दूसरे की पत्नी है अब। उसके अधिकार से बाहर। पहले का नाता है, उसे पवित्रता से निभाता आ रहा है। और अब सुमित्रा आ गई है—एक स्फूर्ति बनकर, जैसे उद्धत यौवन का रूप हो। हर्ष उससे पराजित हो चुका है। मन उस पर टिका लेना चाहता है। सोचता होगा जब वह श्रांत-क्लान्त होता है तो सुमित्रा का अंचल उसे संचार दे सकेगा। ठीक है। दो स्त्रियाँ हैं—दोनों का अलग-अलग अस्तित्व है, अलग-अलग स्थान है। ईर्ष्या नहीं जगनी चाहिए दोनों के बीच। मन में कुण्ठा न फैले, यही—ठीक यही हर्ष को करना होगा।

सामने की बेंच पर एक युवती बैठी थी, नीचे घास पर एक पुरुष लेटा था, उसके लिए शायद इसी में आत्मिक सुख था कि वह उस युवती के चरणों के निकट आश्रय पाता रहे। प्रसन्न उनकी ओर देखता रहा और तब तक देखता रहा, जब तक बिनी ने लौट आकर उससे लिपटकर घर चलने के लिए नहीं कहा।

शाम का खाना आज सुमित्रा ने बनाया था। सुमति जब सारा सामान

निकालकर रसोईघर में रख आई और आटा मलने चली तो सुमित्रा ने उसे रोक लिया था। कहा था—'इस समय का अवसर मुझे दे दो सुमति। कई दिनों से चूल्हा फूँकने का मन कर रहा है।'

सुमति ने ऊपर दृष्टि उठाई तो सुमित्रा को प्रेम-विह्वल पाया। रोम-रोम से हर्ष और उल्लास प्रस्फुटित हो रहा था। वह सुमित्रा के मन की गहराई भाँप गई, बोली—'ठीक तो है दीदी, मैं भूल गई थी। हर्ष बाबू को आपके बनाये फुलके बहुत पसन्द हैं और सब्ज़ी की तो वे इतनी प्रशंसा करते हैं, जितनी आपके सितार की भी नहीं। अरे हाँ, खीर और बना लेना दीदी। पत्र में लिखा था उन्होंने कि इलाहाबाद में आपके यहाँ उन्होंने जैसी खीर खाई थी, वैसी अब तक कभी नहीं खाई है।' फिर सुमित्रा को रसोईघर का सारा प्रबन्ध सौंपती हुई भरे मन बोली—'क्यों दीदी, ऐसा नहीं हो सकता कि हम लोग साथ-साथ रहें? देखती हूँ पढ़ाई तो मुझसे चलेगी नहीं, तब क्यों न अपनी कला का थोड़ा अंश मुझे भी दे दो? सोच देखना, कोई जल्दी नहीं है। कहना कई दिन से चाह रही थी, पर न जाने क्यों रुकी थी? और सुनो, जिस चीज़ को यहाँ न पाना, माँग लेना। अपने-आप ढूँढने बैठ जाओगी, तो हाथ नहीं लगेगी। मैं तब तक···।'

सुमित्रा ने रसोई बनाने का सारा प्रबन्ध ले लिया। वह उसमें इतनी तन्मय हो जाना चाहती थी कि एक-एक वस्तु जो वह तैयार करे, हर्ष बिना बताये ही जान ले कि उसने बनाई है। अँगीठी की आँच को तेज़ करते हुए उसने कहा—'सुमति, सत्य को मैंने कभी नहीं छिपाया है। तुमसे भी नहीं छिपाऊँगी। बात तुमने ठीक कही है। भला चूल्हा फूँकने में क्या आनन्द मिलता है, जो मन करेगा? और यहाँ तो अँगीठी है। खैर, छोड़ो उसे। मन के स्वाद के साथ-साथ हृदय के कोने में छिपी वैसी इच्छाएँ भी जाग्रत होती रहती हैं। हर्ष को क्या पसन्द आया है, यह तो मैं नहीं जानती। तुम्हें ठीक लिखा होगा। और अच्छा जाओ अब। मुझे बहुत कुछ सोचते भी जाना है। सच पूछो तो आज एकान्त पाया है।'

सुमति ने दरवाज़े पर खड़े होकर स्निग्ध भाव से कहा—'देखो दीदी,

में सहायता को बिलकुल नहीं आऊँगी। पर एकान्त पाकर कहीं सोचती रहकर नमक डालना न भूल जाना, या फुलके न जला देना। अँगीठी में पत्थर के कोयले हैं। आँच तेज होती है। और सच कह दूँ। हर्ष आपके हैं दीदी। हम दोनों के बीच आप उन्हें पाएँगी। मैं और जिऊँगी ही कितने दिन?' कहती वह दूसरे कमरे में चली आई।

सुमित्रा से यह सब नहीं सहा गया। वह ऐसा कुछ चाहती भी है तो सुमति का जीवन लेकर नहीं। हर्ष एक अकेला पुरुष है। वे दो स्त्रियाँ हैं। दोनों की ऐसी स्थिति नहीं है कि हर्ष को पाकर अपनी जीवन की दिशा ही मोड़ लें। आखिर समाज भी तो कुछ है? वह समाज जो अटल चट्टान-सा सामने खड़ा है और जिससे टकराकर अपना ही सर फोड़ा जा सकता है। पर सुमति मरने-जीने की बात क्यों कह गई है? ओह नारी! तेरी सृष्टि ही रहस्यमय है। तुझे कौन समझ पाया है? जैसे एक निगूढ़ सत्य है जो···अरी सुमति, तू और कुछ न कर तो अपने नाम को ही सार्थक कर पगली।

वह रसोईघर से उठकर आई और सुमति को प्यार से दुलराते हुए कहा—'देख बिनी की मा, ऐसे चलते-चलते मरने-जीने की बात नहीं सोचते। अभी तो सोना तपाया जा रहा है। उसे निखरने तो दे एक बार।'

सुमति की आँखें भरी थीं, दो आँसू टपक पड़े। सुमित्रा से लिपटकर बोली—'आप···दीदी मेरी पीड़ा नहीं जानतीं।'

'आप नहीं तुम सुमु, सुना तुम कहो। हम दो बहनों के बीच दुराव नहीं रहेगा।' सुमित्रा ने उसकी पीठ पर प्यार से हाथ फेरते हुए कहा—'देखती नहीं, मैं तुझे तू कहने लगी हूँ। मरने की बात सोचना हम स्त्रियों के लिए बड़ा आसान है, पर मौत की कल्पना न करना सुमु। उससे जब मैं बच गई तो तुझे भी बचाऊँगी। अच्छा चलूँ, सब्जी अँगीठी पर रख आई थी, जल न गई हो।'

सुमित्रा अभी अलग हुई ही थी कि बाहर से प्रसन्न आ गया बिनी को

लेकर। दोनों के मुख पर विषाद की छाया देखकर बोला—'क्यों झगड़ा हुआ है क्या ? और हमारा मेहमान कहाँ है ?'

सुमति ने अपने को स्वस्थ कर तत्काल उत्तर दे दिया, 'वह नहीं आये अभी तक, हालाँकि दीदी आज उन्हीं के लिए खाना बनाने जा रही हैं।'

सुमित्रा कमरे से 'इसे तो हर समय मजाक चाहिए' कहती रसोईघर में चली गई।

प्रसन्न आराम कुर्सी पर पैर फैलाकर बैठ गया। बिनी चाकलेट खा रही थी। वह आकर सुमति से लिपट गई।

प्रसन्न ने मेज़ की ओर संकेत करते हुए कहा—'वह लिफाफे उठा लो सुमति। तुम दोनों परिहास तो कर रही हो, पर मुझे चिन्ता हो गई है कि हर्ष आया क्यों नहीं ?'

सुमति ने आगे बढ़कर मेज से लिफ़ाफ़े उठा लिए। उनमें खाने का तमाम सामान था। मिठाई, नमकीन, फल सभी कुछ था। एक छोटे लिफ़ाफे में बिनी के लिए टाफी और चाकलेट थे और दो बिस्कुटों के पैकेट थे। वह उस सबको देखती रही कुछ क्षण तक, फिर अलमारी में रख आई।

प्रसन्न घर के भीतर के अवसादपूर्ण वातावरण से परिचित था, इससे और अधिक हर्ष को लेकर ही मानसिक व्यथा बढ़ाना उसने उचित नहीं समझा। मन में उसने कहा—'संध्या का नाश्ता अकेले करना पड़ा है, शायद रात का खाना भी अकेले ही खाना होगा। चलो, कोई बात नहीं। आना तो है ही उसे, आज नहीं तो कल।' फिर सुमति से बोला—'बिनी को घूमने का बड़ा शौक है। आज सारे पार्क भर में तितली की भाँति दौड़ती रही। फूलों को देखकर उसका मन खिल उठा। हो सके तो उसके घूमने जाने का प्रबन्ध कर दो सुमति। लड़की बड़ी समझदार है, ठीक अपनी माँ की भाँति।'

सुमति ने और सब बातें जैसे पीछे छोड़ दीं, तत्काल बोल उठी—'और पिता का कौन-सा गुण अपनाया है उसने ?'

'अरे, उन्हें तो मैं भी नहीं जानता ठीक से। बिनी बेचारी गुण-अवगुणों की परिभाषा अभी से क्या जाने? उसका स्वभाव बन रहा है। तुम उसके पास हो। तुम्हीं उसकी माँ-बाप हो। जैसा सिखाओगी सीख जायगी। पर तुम्हें इस सबके बताने की जरूरत मैं नहीं समझता। तुम जीवन का महत्व समझती हो। संघर्ष करके भी सुख से रह सकोगी। पुरुषों के उद्धत विचार, आवेशपूर्ण कार्य और अपने पद की मिथ्या महत्वाकांक्षा एक दिन उन्हें स्वयं ही पतनोन्मुख करेगी। जीत अन्त में नारी की होती है सुमति। सदा से होती आई है, पर इस जीत के लिए उसे सहना सब कुछ पड़ता है, अपमान, तिरस्कार, दुराशा, अत्याचार।'

सुमति आगे कुछ कहने वाली थी कि सुमित्रा आ खड़ी हुई। सर से खिसककर धोती का पल्ला कन्धे पर वक्ष को खोलता हुआ आ गिरा था। हाथ उसके दोनों आटे से भरे थे। मुख पर पसीने की बूँदें फैली थीं। प्रसन्न से बोली—'मैं तो समझी थी कि तुम लोग वहीं रसोई घर में आ बैठोगे, बातें भी होती चलेंगी। पर देखती हूँ कि वहाँ कोई झाँकने भी नहीं जाने वाला है।'

प्रसन्न से पहले ही सुमति बोल उठी—'पर तुम्हें तो दीदी एकान्त चाहिए था, जिससे चख-चखकर हर्ष बाबू के लिए खाना बनाती जाओ। और फिर धुआँ में रहने की इच्छा भी थी। कम-से-कम मैं तो अपनी दीदी की आज्ञा या इच्छा के विरुद्ध चल नहीं सकती।'

सुमित्रा ने प्रसन्न से पूछा—'और तुम भी कुछ कहोगे भैया?'

'मैं', कहकर प्रसन्न कुछ क्षण रुका, फिर कहा—'चलो मैं कुछ कहने के बजाय चलता हूँ। अगर नहीं चलता हूँ तो इलाहाबाद पहुँचकर भूखों मरना पड़ेगा। बिनी, आ तो इधर जरा काट तो ले अपनी मौसी जी को, जैसा मुझे पार्क में काटा था।

सुमति हँस पड़ी। उसका साथ सुमित्रा ने भी दिया। प्रसन्न ने जिस गम्भीरता से विषय बदला था, वह क्षण-भर में देखते-देखते तेज हवा के साथ हल्के-फुल्के बादलों की भाँति दूर उड़ता जाता दिखाई पड़ने लगा

था। बदली वहाँ अभी छाई थी, पर ऐसी नहीं कि घुटन हो और वर्षा की दो बूँदों के लिए भी तरसना पड़े।

प्रसन्न ने बिनी को साथ लिया फिर सुमित्रा से बोला—'चलो, रसोईघर में तुम्हारा साथ दूँगा। तुम खाना बनाओगी और मैं संगीत का अभ्यास करूँगा। बेमेल ज़रूर है, पर और कोई चारा नहीं है। सुमति यहाँ तब तक कोई और काम सम्भाल लेगी। बिनी की फ्राक कटी पड़ी है, उसे ही सिलेगी। तुम सुमित्रा, जब तक यहाँ हो, खाना बना लिया करो, तो इसे थोड़ा आराम भी मिलता रहेगा। अकेले रात-दिन लगे रहना पड़ता है।'

सुमित्रा ने परिहास करते हुए कहा—'धन्य है प्रबन्धक जी। मैं तो चली, जल्दी से खाना बना डालूँ।' कहती वह मुड़ने ही वाली थी कि दरवाज़े पर किसी ने आवाज़ दी।

प्रसन्न आगे बढ़ गया। पीछे-पीछे सुमित्रा और सुमति भी दरवाज़े तक गईं। जो व्यक्ति आया था उसने हर्ष के विषय में पूछा। उसने बताया कि वह भी उसके साथ मिर्ज़ापुर से आया था। वह उस प्रेस में कम्पोज़ीटर था, जहाँ से 'दर्पण' प्रकाशित होता था। प्रेस मालिकों ने पत्र के प्रकाशन के बन्द होते ही उसे भी काम घट जाने के कारण अलग कर दिया। यहाँ बनारस में प्रेस बहुत हैं, कहीं-न-कहीं उसे काम मिल जाने की आशा है। जहाँ तक सम्भव होगा वह हर्ष बाबू के साथ ही काम करेगा। उसने भी आश्वासन दिया है। इस घर का पता उसने दिया था, सो अब तक पहुँचे ही नहीं। अब कल मिलने आएगा। कहकर वह उसी क्षण, बिना रुके वापस लौट गया।

सुमित्रा ने उतावली से कहा—'अरे, बुलाओ उसे, कुछ पूछ लो।'

प्रसन्न ने बरामदे से बाहर आकर उसे देखा। रात में वह किधर निकल गया, यह पता नहीं चल सका। हर्ष बनारस आ गया है, यह तो मालूम हो गया, पर वह कहाँ है और अब तक घर क्यों नहीं आया, इस पहेली ने और उलझन और मानसिक अशान्ति खड़ी कर दी। जितनी उसके यहाँ

आने की प्रसन्नता हुई, उससे बढ़कर उसके घर न आने की चिन्ता व्याप्त हो गई। प्रसन्न उसे ढूढ़ने जाय भी तो कहाँ? कहीं पता-ठिकाना तो है नहीं? और वह व्यक्ति आया कि आँधी की भाँति अपनी बात कहकर चला गया। दूसरे को कुछ पूछने का अवसर ही नहीं दिया। प्रसन्न चिन्ताकुल-सा बरामदे में टहलने लगा। सुमित्रा दरवाजे से लगकर खड़ी हो गई और सुमति जहाँ खड़ी थी वहीं बैठ गई। केवल बिनी इस स्थिति की गम्भीरता से अनभिज्ञ होकर सुमित्रा द्वारा सिखाई एक गीत की पंक्ति को गुनगुना रही थी। हर्ष, तू कितना निष्ठुर है रे! तेरे अकेले के लिए आज तीन प्राणी बेचैन हैं और तू है कि आने का नाम ही नहीं लेता। तेरे लिए सुमित्रा ने खाना बनाया है, सुमति के स्नेहपूर्ण व्यवहार से तू प्रभावित है ही और रह गया प्रसन्न, उसकी मित्रता ने तुझे एक संयमी व्यक्ति दिया है।

तीनों अमंगल कल्पनाएँ कर रहे थे, पर कोई बोल नहीं रहा था। सन्ताप से भरा मन मौन रहता है।

प्रसन्न ने अन्त में कुछ क्षण बाद संयत होकर कहा—'चलो भीतर, हर्ष आया है, तो घर जरूर आएगा। कहीं प्रेस में अटक गया होगा। घबड़ाने की बात नहीं है।'

सुमित्रा और सुमति अन्दर की ओर मुड़ीं। पीछे प्रसन्न घुसा कि उसे सुनाई दिया किसी ने उसका नाम लेकर पुकारा। मुड़कर देखा सबने—वह और कोई नहीं, हर्ष था। थका लगने पर भी वह प्रसन्न दिखाई पड़ रहा था। बरामदे में घुसते ही बोला—'माफ़ करना, प्रतीक्षा तो की होगी, पर मैं ऐसे चक्कर में फँस गया कि उबर नहीं सका अब तक। बदमाशों ने मुझे घेर लिया था जान बच गई यही कुशल रही।'

प्रसन्न कुछ बोला नहीं। सुमित्रा घबराहट से पूछना चाहती थी कि क्या हुआ? कहाँ मिल गये वे लोग? किन्तु उसके पहले ही सुमति कह उठी—'पहले जल्दी से कुछ खा-पी लो, फिर शान्त होकर बैठना। भूख लगी होगी। सारे संकट पुरुषों की जान के लिए हैं, हम स्त्रियों को कुछ भी नहीं होता।'

हर्ष को आभास हो गया कि सुमति ने जो-कुछ कहा है उसमें अपरिसीम स्नेह व्याप्त है, पर जिसकी करुणा भी हृदय को दग्ध कर देने के लिए पर्याप्त है। अभी वह केवल इतना कह पाया था—'यह सब केवल एक संयोग है जो....।' कि प्रसन्न ने उसे हाथ पकड़कर बाथरूम की ओर कर दिया, फिर बोला—'पहले सुमति की आज्ञा पालन करो, फिर सुमित्रा का आग्रह स्वीकार करना। संयोग-वियोग सभी-कुछ एक साधारण क्रिया-मात्र है, जो जीवन में प्रतिक्षण आता-जाता रहता है। भावुक न बनो हर्ष।'

वह बाथ-रूम में चला गया। उसके सामान को, जिसे पीछे से मजदूर आकर रख गया था, एक ओर लगा दिया गया। सुमित्रा रसोईघर में जाकर सशंकित हृदय किन्तु उत्साहित हो खाना तैयार करने लगी।

# २१

जब मनुष्य के जीवन में सहसा कोई अप्रत्याशित घटना आ घटती है तो उससे बच जाने के बाद वह उतावली के साथ उसे प्रत्येक व्यक्ति को बताने की चेष्टा करता है और उसकी सहानुभूति के साथ ही अपनी बुद्धि की कुशाग्रता पर प्रशंसा के दो शब्द सुनना चाहता है।

हर्ष के जीवन में भी ऐसी ही घटना मिरजापुर से बनारस आते समय घटी थी। वह उससे बच निकलने के बाद उसे सुनाने के लिए आतुर था। जिस युक्ति से वह उन बदमाशों को चकमा देकर निकल भागा था, उसका वर्णन वह विस्तार से करना चाहता था। यों उस पर इस घटना से एक रहस्य भी प्रकट हो गया था, किन्तु अनेक कारणों से वह उसे गोपनीय

नहीं बताना चाहता था। जो-कुछ उसे ज्ञात हुआ है, उसे वह अपने पत्र 'दर्पण' की नीति की भाँति स्पष्ट कर देना चाहता है। किन्तु उसे कदाचित् यह नहीं मालूम था कि जिसे वह गोपनीय की संज्ञा देकर कहेगा, वह बहुत पहले ही उन लोगों पर प्रकट है, जिनसे वह उसे कहने जा रहा है।

खाना खाने और फ़ुरसत से बैठ पाने का समय निकालते-निकालते रात के ग्यारह बज गए। सरदी अधिक न होने पर भी इतनी थी कि कमरे में ही सोना पड़ता था और उस छोटे से मकान में रसोईघर और भण्डार-घर को छोड़कर यही एक ऐसा कमरा था जिसमें दिन-भर बैठना और रात में सोना पड़ता था। हर्ष पहले जब कभी यहाँ आता था तो इसी कमरे में सोता था। उससे कुछ दूर पर अपनी चारपाई डालकर सुमति सोती थी, किन्तु वह दूरी इतनी निकट थी कि रात के सन्नाटे में एक-दूसरे की सांसें साफ़ सुनाई पड़ती थीं और कल तक, जब तक हर्ष नहीं आया था सुमति अकेली रही थी। आज प्रसन्न, सुमित्रा और हर्ष सभी कोई हैं। सबके लिए चारपाइयों की कमी पड़ेगी, इसकी ओर अभी तक किसी का ध्यान नहीं गया था। जब लेटने का समय आया तो फ़िकर हुई।

हर्ष आज मानो पूर्ण तृप्त था। सुमित्रा ने खाना खिलाते समय अपना सारा अनुराग, सारी कामना मूक सन्देशों द्वारा व्यक्त कर दी थी, जिसके उत्तर में उसने केवल सन्देश-सूचक दृष्टि से उसे देखा था। उसके निकट प्रसन्न बैठा खा रहा था और सामने रसोईघर में सुमति भी पहुँच गई थी। बिनी को प्रसन्न अपने पास बिठाए था। हर्ष ने सुमति और सुमित्रा दोनों से केवल शिष्टाचार की बातें की थीं। कुशल-क्षेम पूछने के बाद सुमित्रा से उसके संगीत की प्रगति, रेडियो-प्रोग्राम मिलने की सम्भावना तथा राजनीति में किस ओर झुकाव बढ़ रहा है पूछा था; और सुमति से उसकी पढ़ाई, विश्वास से पत्र व्यवहार और बिनी की शैतानी आदि के विषय में जानना चाहा था।

लेटने की समस्या जब सामने आई तो उसने कह दिया—'मैं तो भई नारी-पक्ष का हिमायती हूँ। अपने अखबार में भी यही लिखता रहा।

महिलाओं को पूरा सम्मान मिलना चाहिए, तभी उनमें जाग्रति उत्पन्न हो सकती है। मेरी सम्मति ही नहीं मत है कि हम दोनों पुरुष जमीन पर लेटें और तुम दोनों स्त्रियाँ चारपाइयों पर।'

सुमति बोल पड़ी उत्तर में—'स्त्रियों को पुरुषों के चरणों में ही स्थान मिलता है, हमारे देश की संस्कृति यही रही है और जिस दिन से उन्हें बराबर का पद मिलने लगा है, उनके कारण घर में कलह और अशान्ति बढ़ गई है। अपने पद का दुरुपयोग करना उसे खूब आता है सम्पादक जी। लेखों की बात छोड़िये। अब मेरा कहा मानिए। नई नीति अपनाकर पत्र का प्रकाशन पुनः कीजिए। सुमित्रा दीदी हाथ बटाने को कह रही थीं।' इस सुमति का न जाने कैसा मन है कि वह परिहास का पुट हर स्थान पर दे देती है? ऐसा परिहास जिसमें कटु-व्यंग्य नहीं है और न ईर्ष्या की जलन। स्वच्छ विचारों के साथ निर्मल हास्य ही जहाँ प्रस्फुटित होता रहता है।

प्रसन्न ने सुमति का साथ तो नहीं दिया, पर उसने अनुभव किया कि पुरुषों के सामने स्त्रियाँ चारपाइयों पर लेटें और वे जमीन पर, इसे शायद वे स्वीकार नहीं करेंगी।

निर्णय करने के लिए सुमित्रा को चुना गया और उसने कह दिया कि सुमति के पक्ष में उसकी सम्मति है। हर्ष स्वयं भी यही जानता था, किन्तु उसने मनोविनोद के लिए इस प्रसंग को उठा दिया था। सुमति ने चारपाइयाँ बिछाते हुए मुस्कराकर प्रसन्न की ओर देखते हुए कहा—'कभी-कभी हार में भी पुरस्कार मिलता है, क्यों भइया? यहाँ जज ने अपने को जिता तो दिया पर हारने वालों को···।'

'हारने वालों को चारपाई मिलेगी सोने को, यही कहना चाहती हो न,' सुमित्रा ने बीच में बात काट दी। पर मैं पूछती हूँ कि आज रात सोयेंगे नहीं सब लोग? आधी रात तो लगभग बीत रही है। सवेरे भी जल्द ही उठना है।'

सुमति तकियों पर नया गिलाफ़ चढ़ा रही थी, बिना दूसरी ओर देखे

कह दिया—'मुझे तो आज रात नींद नहीं आएगी दीदी। कल सवेरे देर तक पड़ी-पड़ी सोती रहूँगी। तुम गंगा जी स्नान करने जाओगी अँधेरे ही, तो या प्रसन्न भइया साथ दे देंगे या हर्ष बाबू मजबूरी में चल देंगे। वैसे उन्हें इस सबमें विश्वास नहीं है।'

चारपाइयों पर प्रसन्न और हर्ष आ लेटे थे। सामने ही दीवार से लगाकर दो बिस्तर बिछा दिये गए थे, जिन पर एक ओर बिनी को लिटा दिया गया और फिर वे दोनों स्त्रियाँ बत्ती बुझाकर आ लेटीं। कमरे में अन्धकार छा गया।

सुमति ने जो-कुछ कहा था, सुमित्रा उसका मर्म समझकर भी चुप रही। इधर-उधर की सस्ती बातों में पड़ने की अपेक्षा वह यह अधिक ठीक समझती थी कि या तो सब लोग सो जायँ या हर्ष अपनी आज की घटना सुनाए। उसका मन सशंकित हो रहा था कि कहीं उन लोगों में से तो कोई उसे नहीं मिल गया, जो लोग उसके पीछे पड़ गये हैं। किन्तु वह कहने से सकुचाती थी। प्रसन्न ने तभी उसे जैसे उबार लिया। बोला—'सुमति को अपनी दीदी का मजाक उड़ाना खूब आता है। कल से मैं सुमित्रा को संगीत के अभ्यास के साथ व्यवहार की बातें भी सिखाना प्रारम्भ कर दूँगा, फिर देखना सुमित्रा अपनी इस बहन को कैसे-कैसे उत्तर दे? अरे हर्ष, एक बात तो बता भाई? मिरज़ापुर का एक तुम्हारे प्रेस का आदमी आया था तुम्हें पूछने। कहता था कि तुम्हारे साथ ही आया है। उसकी चर्चा करना तो हम लोग भूल ही गये थे।'

हर्ष के मुख पर जो भाव इसे सुनकर उतर आया, उसे देखा तो नहीं जा सका, पर उसकी वाणी ने उसका आभास प्रकट कर दिया। उसने कुछ घबराये से स्वर में पूछा—'कौन आया था मेरे साथ? नाम क्या बताया अपना? सूरत कैसी थी? और अब तक यह क्यों नहीं बताया?'

सुमित्रा ने उठकर बत्ती जला दी। हर्ष के शब्दों ने जो गम्भीर स्थिति उत्पन्न कर दी थी, उससे कमरे का वातावरण जैसे भयातुर लगने लगा था। उस सारी परिस्थिति पर गहराई से विचार करना होगा। उसने कहा—

'सुमित्रा तुम सुनो, यह लोग उसी दल के हैं। न जाने क्यों हम लोगों के पीछे पड़े हैं ?'

प्रसन्न सारी घटना पर सुनकर विचार करना चाहता था। सुमित्रा को विचलित होता देखकर कहा उसने—'शान्त रहो सुमित्रा। धीरे बोलो। जब तक हम लोग हैं, चिन्ता क्यों करोगी ? और तुम तो बड़ा साहस रखती थी ? अब इतनी जल्दी उसे क्यों खो बैठीं ? पहले सुनने दो।'

सब लोग अपने-अपने स्थान पर बैठ गए थे। प्रसन्न के यह बता चुकने पर कि वह व्यक्ति किस प्रकार आँधी की भाँति आया और अपनी बात कहकर लौट गया, हर्ष ने बताया कि मिरज़ापुर से एक व्यक्ति उसके साथ चला था। मार्ग में उसने 'दर्पण' के सम्बन्ध में पूछा। पत्र के बन्द हो जाने पर उसने बड़ा दुख प्रकट किया। पत्र की नीति, सम्पादकीय टिप्पणियों और निर्भीक समाचारों के प्रकाशन पर उसने बधाई दी। प्रशंसा के पुल बाँधता रहा। फिर पूछा—आगे क्या करने का विचार है ? उत्तर दे दिया कि जीवन का एकमात्र लक्ष्य पत्रकार बने रहना है। बनारस या इलाहाबाद से फिर से 'दर्पण' को प्रकाशित करने का प्रयत्न करना होगा।'

बत्ती के चारों ओर पतंगे घूम रहे थे और छिपकली उनकी घात में थी।

हर्ष आगे कहता गया—'उस व्यक्ति ने पान-सिगरेट का आदर करने के बाद पूछा—इलाहाबाद तो आप पहले भी कई बार जाते रहे हैं। मैंने आपको वहीं देखा है। प्रसन्न बाबू के मेहमान रहते हैं आप ? मैं चौंक पड़ा था। यह व्यक्ति कौन है जो सब-कुछ जानता है ? इतनी दिलचस्पी आखिर उसे क्यों है ? मैं उदासीनता से बोला—आप इन सब बातों को क्यों पूछ रहे हैं ? प्रसन्न को आप कैसे जानते हैं ?'

उसने अभिमान से उत्तर दिया कि जानता वह किसे नहीं है ? और फिर भला प्रसन्न बाबू को—वह तो रेडियो स्टार हैं साहब। उन्हें ही क्या वह तो सुमित्रा को भी जानता है। वह सुमित्रा देवी, जिनका पति उन्हें पाने

के लिए बेचैन है और वह प्रसन्न बाबू के साथ···। वह समझ गया। सारी बात स्पष्ट है। सुमित्रा देवी का पति जीवित है। एक रहस्य उसे बता दे वह आज। उनका पति वास्तव में अयोग्य पति नहीं है, जैसा कि वह विवाह के ठीक बाद पत्र में लिख कर छोड़ गया था। वह एक दल का सदस्य था और उसे ठीक उसी दिन काम से जाने का आदेश दिया गया था। कितना बड़ा संघर्ष का समय था? वह स्त्री के रूप में बँधकर नहीं रह सका। उसके कर्तव्य ने पुकारा। गलत या सही––यह विचारने का भार उसका नहीं था। कौन जाने वह न लौटे? उसने अपने प्रति घृणा के भाव जाग्रत कराने के लिए अपने अयोग्य होने का पत्र लिखकर घर छोड़ दिया। पर अब···अब स्थिति दूसरी है। दल भंग हो गया है। सब लोग अपने-अपने घर लौट गए हैं। सुमित्रा देवी का पति भी···आप बुरा न मानें। ज्ञात हुआ है कि आप भी उससे प्रेम करने लगे हैं। सोचिये, यह सब अनीति है, पाप है। पुरुष क्या इस प्रकार दूसरों की स्त्रियों को बल-पूर्वक अपनी पत्नी और प्रेमिका बनाकर रख सकेगा?'

हर्ष यह सब जैसे रटे हुए पाठ की भाँति कहता गया था। वह उस क्षण को यह भूल गया कि सुमित्रा भी वहीं बैठी है, जिसके चरित्र पर कटाक्ष किया गया है। हठात् उसका ध्यान उसकी ओर गया और उसने जैसे ही दृष्टि फेरी सुमित्रा सिसक कर रो रही थी। सुमति उसे अपने में बाँधे स्वयं भी आँसू बहाने लगी थी। हर्ष को अपने ऊपर बड़ी खीझ आई। वह कितना नासमझ है? इस प्रकार कहीं मुँह पर ही सारी बातें कही जाती हैं? वह तो पत्रकार होने का दम्भ करता है, जिसकी पैनी सूझ होती है और जो अपने बाण निशाना लगाकर ठिकाने पर ही मारता है। फिर यह भूल क्यों? भूल नहीं, इसे तो अपराध कहा जाना चाहिए। नारी के मर्मस्थल पर कहीं इस प्रकार आघात किया जाता है? और फिर वह तो सुमित्रा है, जिसने उसके हृदय में स्थान बनाया है। वह अक्षत नवयौवना न भी होती, तो भी प्रत्येक स्थिति में वह उसका अनुराग पाने के लिए आकुल हो उठता। पर जो-कुछ वह कह गया है, उसे वही क्या सुमित्रा

के आँसू भी नहीं धो सकते। मलिनता की इस छाया को वह कभी दूर नहीं कर सकेगा।

प्रसन्न ने एक बार फिर गम्भीरता से परिस्थिति को सम्भाला। सुमित्रा का उठकर कन्धा पकड़कर हिलाते हुए कहा—'यह सब तो हर्ष ने दूसरे की सारी कही बातें दोहराई हैं सुमित्रा जो हमारे हित में हैं। तुम्हें ही लेकर जो कुचक्र रचा जा रहा है, उस पर और प्रकाश पड़ रहा है। रोने से क्या मिलेगा भला? तुम्हें तो चट्टान की भाँति बनकर सब-कुछ सहना है, अडिग और निश्चल होकर। और सुनो हर्ष, यह एक जाल बिछाया जा रहा है। हम लोगों से भी ये बदमाश मिले थे। हम लोगों को सतर्क रहना है अब।'

सुमति और भी भयभीत थी। उसे तो अकेले ही रहना पड़ता है। गुण्डों के लिए वह भी शिकार बन सकती है। उसने अपनी असमर्थता पर आँसुओं की दो बूँदें टपका दीं जिन्हें हर्ष के सिवा और कोई न देख सका।

हर्ष कभी सुमति और कभी सुमित्रा की ओर देख रहा था। उसकी आत्मा उसे धिक्कार रही थी—मन में आया कि उठकर भाग जाय। सुमित्रा के सामने अब वह अपने को जैसे अपराधी समझने लगा था। उसे जो कुछ कहना था, उसे वह बाद में कह सकता था, पर जो होनी है उसे कौन रोक सका है? कभी-कभी अनिच्छा होते हुए भी वही सब हो जाता है जिसे मनुष्य नहीं चाहता। तब उसे जो आन्तरिक पीड़ा होती है, उसके लिए वह आजीवन दुखी रहता है।

प्रसन्न ने जिस वातावरण को, सारी घटना सविस्तार सुनाने के लिए बाध्य करने के कारण अशोभन और दुर्दमनीय बना रखा था, उसे स्वयं ही संयत और प्रकृतिस्थ बनाने का प्रयत्न करता हुआ बोला वह—'अरे! कहाँ का झगड़ा हम लोग ले बैठे? भूलो उसे। कल सबेरे ही विश्वनाथ जी के दर्शनों को चलना है। सुमति तुम तो चलोगी ही? हर्ष को देवताओं पर आस्था नहीं। वह नहीं जायगा। चलो, सोया जाय अब। यह सब तो जीवन के शतरंजी खेल हैं।' कहकर वह अपनी चारपाई पर आ लेटा और

एकदम-से सोने का बहाना कर खर्राटे लेने लगा।

सुमित्रा को हँसी आ गई। घर में भी प्रसन्न इसी प्रकार के बालकों जैसे खेल करता रहता है। भला कौन मानेगा कि वह सो रहा है? शाल से अपना शरीर ढकते-ढकते वह बोली—'प्रसन्न भैया, तुम्हीं एक दिन पछताओगे। पहले भय का भूत बुलाकर सामने खड़ा कर दिया, फिर विश्वनाथ जी का स्मरण कराकर उसे भगाना चाहते हो, क्यों? पुरुष समर्थ हैं। जो चाहे करें।'

प्रसंग आगे बढ़ सकता था। प्रसन्न ही क्या हर्ष और सुमति भी बोल सकते थे, पर कोई बोला नहीं। जो थोड़ी-सी रात शेष रह गई है उसी में सो लें। आँखें भी उनींदी हो चली थीं।

## २२

सवेरे सुमित्रा सोकर उठी तो देखा कमरे में केवल हर्ष पड़ा सो रहा है। प्रसन्न, सुमति और बिनी कोई नहीं है। उसे अपनी इस नींद पर बड़ी चिढ़-सी लगी। दिन निकल आया है और वह अभी तक पड़ी रही। उसने एक अँगड़ाई ली। उसे लगा कि सर में दर्द हो रहा है। कहीं कुछ ऐसा नहीं है जो वह शान्ति पा सके। रात की सारी बातें एक-एक कर स्मरण आने लगीं। उसने हर्ष की ओर देखा। निर्दोष बालक-सा वह अपने दोनों घुटने सीने में लगाये और मुँह हाथों के बीच ढके बेखबर पड़ा सो रहा था। शायद उसे सरदी लग रही थी। पर शाल आधा चारपाई से नीचे और आधा चारपाई के एक कोने से लगा पड़ा था। वह उसकी ओर देखती रही। पहले चाहा कि सोने दे। ऊपर से शाल ढक दे।

फिर न जाने क्या सोचकर उसे पकड़कर हिलाती हुई बोली—'हर्ष बाबू, उठो न ? देखो धूप निकल आई है ।'

हर्ष उसका स्पर्श पाकर हड़बड़ाकर उठ बैठा । सुमित्रा का वह कोमल स्पर्श कितना रोमांचकारी था ? उसकी रेशमी स्मृति में डूबकर वह आँखें मलता हुआ बोला—'अरे, इतना दिन निकल आया सुमित्रा ! और लोग कहाँ हैं ?'

सुमित्रा ने अपने मुख पर फैली लटों को पीछे बालों में करते हुए कहा—'भूल गये ? वे लोग गंगा नहाकर फिर विश्वनाथ जी के दर्शन कर लौटेंगे ।'

'ओह ! याद आ गया', हर्ष आँखों में मुस्कराकर कहने लगा । हम दोनों को अकेले छोड़ जाने का कारण भी समझ में आ गया । सुमति तो होशियार है ही, प्रसन्न उससे भी बढ़कर है । शायद—हाँ शायद क्या, हम दोनों का एकान्त-मिलन वे लोग जरूरी समझते थे । क्यों, क्या सोचती हो ? रात की बातों के लिए मैं बहुत लज्जित हूँ—बहुत शरमिन्दा । इतना कि तुम्हारी ओर देख सकना भी मुश्किल हो रहा है सुमित्रा । माफ़ी मिलनी तो नहीं चाहिए, पर माँग रहा हूँ ।'

सुमित्रा के शरीर पर बिस्कुटी रंग की महीन साड़ी थी । अलंकार और शृङ्गार-रहित उस युवती का नैसर्गिक सौन्दर्य उस साड़ी से फूटा पड़ रहा है, ऐसा हर्ष को लगने लगा । यह अलसाया और उनींदा पर चित्ताकर्षक यौवन उसके चारों ओर बिखरकर रह गया । उसने शरीर के उस भाग को पकड़-कर बार-बार सहलाया, जहाँ सुमित्रा का स्पर्श मिला था । जीवन में आने वाली तूफ़ानी धारा, तेरी लहरों की हिलोरों से कौन नहीं डगमगाया है ? हर्ष उसे देखता रह गया ।

सुमित्रा ने उसकी दृष्टि पकड़ ली, बोली—'रात की बातें अभी रह गई हैं ? और इस तरह मेरी ओर क्या देख रहे हो ? तुम्हें सोचना चाहिए कि मैं सोने के कपड़े पहने हूँ । तुम्हारी लज्जा……।'

हर्ष ने अपने शरीर से शाल उठाकर लपेट लिया । लुटता-सा बोला—

'बैठो थोड़ी देर। अभी उनके आने में देर है। मुझे यह पूजा-पाठ नहीं करना आता। सब ढोंग है। भुलावा है, सुमित्रा। तुम मत करना कभी। और यह सुमति जाने कैसी औरत है? बदलती जा रही है। अपना शरीर गलाये दे रही है और विश्वास है उधर कि पहचानने में नहीं आता। मोटा होता जा रहा है। अच्छा एक बात बताओगी?'

सुमित्रा प्रसन्न वाली चारपाई पर बैठ गई। शाल उठाकर उसने भी लपेट लिया। बोली—'पूछो, पर पत्रकार की भाँति एक के बाद दूसरी पूछते ही न चले जाना।'

हर्ष स्नेह से बोला—'मेरे हजार प्रश्नों का उत्तर तुम्हारा मौन भी हो सकता है सुमित्रा। याद है इलाहाबाद में······।'

'वह सब मैं भूल चुकी हूँ हर्ष बाबू,' सुमित्रा ने आर्द्र वाणी से कहा—'मेरा नया जीवन प्रारम्भ होने जा रहा है। आज-कल, किसी भी समय से हो सकता है। मेरे पति के सन्देश आ रहे हैं। पता नहीं क्या होगा मेरा? शायद मुझे अपने जीवन का मोह ही छोड़ देना पड़े। यह सारी मुसीबतें स्त्री पर ही क्यों आती हैं? तुमने तो बहुत-कुछ लिखा-पढ़ा है। पुरुष समाज का दम्भ कभी टूटेगा, या यों ही हमारी जाति पर तुम लोग निरंकुशता के साथ पशुवत् व्यवहार करते रहोगे? तुम हर्ष बाबू, मैं जानती हूँ, मुझसे स्नेह करते हो। सुमति को भी तुम मेरे सामने भूलते जा रहे हो, पर क्यों? तुमने जो पवित्रता का सम्बन्ध अब तक उससे रखा है, उसे चलने दो। मैं बीच में आ गई, अभागिनी। शायद मुझे अदालत में जाना पड़े। मैं नहीं सोच पाती किस लिए मेरे पीछे यह षड़यन्त्र रचे जा रहे हैं? क्यों हर्ष, मुझ में क्या है? तुम भी मेरे लिए उतावले हो उठे। आज मैं तुम्हारे प्रश्नों को छोड़कर अपने प्रश्नों का उत्तर चाहती हूँ। मेरा सारा धैर्य, जिसे मैंने अपनी जीवन-गति बदलने के लिए संचित किया था, अब टूट रहा है। मैं स्वयं खड़ी नहीं हो सकूँगी। टूटे कगार की भाँति जिधर ढह पड़ूँगी, उधर हो बहती चली जाऊँगी। कोई ठौर-ठिकाना नहीं रहेगा।'

हर्ष का मन सुमित्रा की वेदना से कराह उठा। वह कितनी असमर्थ और लाचार है, इसे उसने आज अनुभव किया। जैसे भीतर-ही-भीतर वह डूबी जा रही है। वाणी में इतनी व्यथा भरी हुई है कि मन रो उठता है। जीवन से निराश होकर भी उसने संयम का सहारा लिया। मरुभूमि से जीवन को वर्षा की बूँदों से सिञ्चित करने का असफल प्रयत्न किया। किन्तु चैन कहीं नहीं मिला। कहीं उसे बैठने भी नहीं दिया जाता। प्रसन्न उसका भाई है, जिसके साथ उसे···। छिः नारकीय समाज, अन्धा, उच्छृङ्खल और मर्यादाविहीन।

उसने आगे बढ़ आकर सुमित्रा के कन्धे पर हाथ रख दिया। सुमित्रा ने हाथ हटाया नहीं। उसके हाथ को दबाकर वह बोली—'इस सहारे पर विश्वास कर सकती हूँ हर्ष, पर···कुछ नहीं। तुम मेरी बातों पर ध्यान न देना। हाँ मुझसे क्या करने को कहते हो ?'

हर्ष ने सुमित्रा के सर को अपने कन्धे पर रख लिया, फिर अपना मुख उसके कपोलों के पास तक ले जाता हुआ बोला—'इसका उत्तर तुम्हारे हृदय का संगीत देगा सुमित्रा, जो तुम्हारी मन-वीणा के साथ श्वास-श्वास में मुखरित है। बोलो, तुम नहीं चाहतीं ?'

सुमित्रा के नेत्र—अर्द्ध-निमीलित नेत्र—जिनमें संयम और कौमार्य की ज्योति थी, मन्द पड़ने लगे। मिलन के क्षण सुमित्रा और हर्ष दोनों के लिए अमर होकर रह गये।

हर्ष ने उसके होठों का चुम्बन, उसके कपोलों का चुम्बन उसकी एक-एक श्वास का चुम्बन लिया। आज उसकी शुष्क और नीरस जीवन-कविता में मधुरिमा और हर्ष-विलास का वह नया पद जुड़ा था, जिसकी मादक स्वर-लहरी के लिए उसका रोम-रोम आकुल था। उसने आँखों में युगों की संचित अभिलाषा और होठों में रूप-माधुरी की अतृप्त चाह भरकर स्फुट स्वर से कहा—'जीवन-सरिता इसी प्रकार बहती चले सुमित्रा। मैं और कुछ नहीं चाहता। मैं स्नेह का भूखा हूँ। उस प्यार का जिसने तुम्हारे नेत्र से मेरी ओर निहारा था। तुम अपने पति के पास चली जाओ, तो भी मुझे···मैं

और कुछ नहीं चाहता। तुम्हें कलंकित नहीं होने दूँगा सुमित्रा। मुझ पर विश्वास रखना।'

सुमित्रा ने अपने दोनों हाथ उसके गले में डाल दिये थे। पति का नाम सुनकर उसने अपना भाव परिवर्तित कर लिया, बोली—'वह सब अब नहीं सुनना चाहती हर्ष। तुम मेरा साथ दोगे, यह मुझे विश्वास है। 'दर्पण' फिर से निकालो। मैं और सुमति पुरुष समाज के इन कृत्यों को लेकर महा-क्रान्ति मचाएँगी।'

घड़ी ने सात का घन्टा बजाया।

सुमित्रा ने अपने को छुड़ाते हुए कहा—'इसमें आगे नहीं। हटो जी, वे लोग आ ही रहे होंगे।'

हर्ष हट गया। चारपाई से उतरकर वह कमरे में टहलने लगा। सुमित्रा फिर रुकी नहीं। मुँह छिपाती हुई तेजी से बाथ रूम की ओर बढ़ गई। हर्ष ने सुना—वह कोई गीत गुनगुना रही थी। मन नहीं माना उसका। वहीं से जरा ऊँचे स्वर से बोला—'सुना सुमित्रा, आज रात में संगीत-गोष्ठी होगी। यह कहना तो भूल ही गया था।'

'क्या भूल गये थे सम्पादक जी', कहता हुआ उसी समय प्रसन्न भीतर घुसा। उसकी गोद में बिनी थी, जिसके हाथ में सुन्दर फूल थे। सुमति कुछ पीछे रह गई थी, वह बाद में आई। हर्ष उसे निहारता रह गया इस समय। सद्यः स्नात सी उसका रूप बड़ा आकर्षक लगा। मस्तक पर पीले चन्दन की बिन्दी के ऊपर लाल बिन्दी लगी थी। वैसे एकदम सादा वेष था। साड़ी एक रंग की थी। वर्षा के बाद जिस प्रकार पेड़ों की पत्तियाँ धुल कर साफ़ हो जाती हैं, उसी प्रकार स्वच्छ सुमति का पतला शरीर अपनी कमनीयता बिखेर रहा था। उसको अपने साथ चलते देखकर एक बार को प्रसन्न का मन भी अनुराग से भर उठा था। बिनी पैदल चल रही थी। उसने उसे गोद में उठाकर कसकर दाब लिया, फिर प्यार से उसका मुख चूमने लगा था। अपने इस भाव से वह सुमति के प्रति जाग्रत होने वाले मनोविकारों को पराजित करना चाहता था। नारी के शरीर के प्रति उत्पन्न

हो जाने वाले मोह को वह बालिका के मृदुल स्नेह का सहारा लेकर भंग कर देना चाहता था। बिनी इस प्रकार उसको बड़ी सहायक सिद्ध हुई थी। उसे पाकर वह आत्म-तृप्त था।

सुमति ने हाथ की डोलची पृथ्वी पर रख दी फिर उसमें से कुछ निकालने लगी। अपना सर झुकाते समय उसने प्रसन्न की दृष्टि से चोरी कर एक नज़र हर्ष पर डाल ली, जैसे पूछा हो—'क्यों, मेरी ओर ऐसे देख रहे थे जैसे···? और सुमित्रा से कैसी····?'

हर्ष बिनी को बुलाकर उसके फूल देखने का बहाना करता बोला—'भूल क्या गया था, भुला दिया गया था। जो कलाकार हैं, वे जादूगर भी होंगे यह मैं नहीं जानता था। अरे प्रसन्न, ज़रा मुझ नीरस व्यक्ति पर भी रहम करो एक बार। सुमित्रा ने कितना क्या सीख लिया है, यह भी नहीं बताया? आज गोष्ठी करो। मैं अपने दो-चार परिचित मित्रों को भी बुला लाऊँगा। जीवन में कहीं किसी कोने से भी रसोद्रेक होने दोगे या नहीं?'

प्रसन्न थका-सा कुरसी पर पैर फैलाकर लेट गया था। सुमति ने फिर चुटकी ली—'अखबार नवीस मेरी समझ में दूसरों से 'इन्टरव्यू' लेने में जितने कुशल होते हैं, अपना 'इन्टरव्यू' देने में उतने ही कच्चे साबित होते हैं। देखा प्रसन्न भइया, सुमित्रा ने कितना सीखा है, यह हम लोग बतायें? हँसी आती है हर्ष बाबू। कब तक ऐसे ही हारते रहोगे? हम लोग इसीलिए थोड़े ही छोड़कर गये थे कि···?'

'कि···?'

'हाँ, कि इन सारी बातों का उत्तर भी हमीं को देना होगा।'

सुमित्रा वहाँ थी नहीं, इससे बात आगे नहीं बढ़ी। प्रसन्न ने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई। रात में देर तक जगने और सबेरे जल्दी उठ पड़ने के कारण वह अर्द्धनिद्रित-सा पड़ा रहा। वैसे भी वह इस प्रकार के परिहासों में भाग नहीं लेता था।

हर्ष के पास से बिनी छूटकर खिड़की के पास पहुँच गई थी। वह सुमित्रा के सिखाये हुए गीत को खिड़की में बैठकर गुनगुनाने लगी।

हर्ष ने सुमति को और गहराई से देखा-इतनी गहराई से कि सुमति को लगा जैसे वह उसे पी जाना चाहता है। उसकी वह दृष्टि जिसमें भावों की निगूढ़ भाषा प्रवाहित हो रही है और जो उसके हृदय में एक हाहाकार सा मचा रही है, कब तक इसी प्रकार उसे निहारती रहेगी? जीवन के दिन इतने छोटे होते जा रहे हैं कि सब कुछ छूटता जा रहा है। शायद अन्त निकट आ रहा है, आ जाय। नये जीवन की उसे कामना नहीं, पर जो कुछ है उसका अन्त उसे अवश्य चाहिए। वह सब सुमति को स्वीकार होगा—अनुरूप या प्रतिरूप जैसा भी हो, उसे सब कुछ मान्य है।

सुमित्रा बाथरूम में नहा रही थी, यह नल के तेज़ चलने से पता चल गया। प्रसन्न सचमुच सो गया था।

हर्ष बोला—'मेरे पुरुष को चुनौती देती हो, सुमति? मैं बरफ़ की तरह जमता जा रहा हूँ इसलिए न? पर पिघलने की भी अवधि है। पानी बन-कर तुम्हारे सामने ही वह सकता हूँ।'

सुमति ने अपने वक्ष से गिर जाने वाले अंचल को यत्न से कन्धे पर डालते हुए कहा—'यह सब क्या सीख कर आये हो? मैं तो समझी नहीं। तुम्हारे पुरुष को मैं जानती हूँ। मेरी नारी भला उसे क्या चुनौती देगी, जो स्वयं ही परास्त हो चुकी है—कभी की पराजिता है। मेरे पास वैसा कुछ है ही कहाँ?'

'क्या है, क्या नहीं है, इसे हम लोग जानते है।' हर्ष ने कहा।

सुमति डोलची में से प्रसाद निकाल रही थी। उससे बोली—'तुम इतने भोले क्यों बनते हो हर्ष? क्या नारी के मन की बात भी, उसकी भाषा भी नहीं समझते? सुमित्रा ने...?'

'सुमित्रा ने बीच में आकर हम दोनों को दूर-दूर कर दिया है। मैं अनुभव कर रहा हूँ कि वह—मेरे जीवन में तो क्या आई है, हाँ एक उद्दाम उत्पीड़न अवश्य दे रही है।' हर्ष फैलता हुआ-सा कह रहा था। 'तुम मुझे माफ़ न करना सुमति। मैं उससे...।'

सुमति ने कुछ कहना ही चाहा था कि कमरे में सुमित्रा आ गई। वहीं

से बोली—'क्या छिप-छिपकर बातें हो रही हैं ?' अरे प्रसन्न भैया क्या अभी से सो गये हैं ? उनके सामने ही ···क्यों ?'

हर्ष उठकर खड़ा हो गया। सुमति ने डोलची से फूल, प्रसाद और पूजा की सामग्री अलग की, फिर स्वाभाविक रीति से बोली—'चोरी नहीं दीदी, खुशामद की जा रही थी। प्रसाद माँग रहे थे। जिसमें देवता का आशीर्वाद और वरदान है तुम दोनों के लिए दीदी। मैंने घण्टों नतमस्तक होकर यह वरदान तुम दोनों के लिए पाया है। ये कहते रहे कि तुम जान न पाओ और प्रसाद पा लें, पर मैं तैयार नहीं हुई। मुझे तो इनसे बढ़ कर तुम्हारा ध्यान है दीदी और मज़ा यह कि अभी सोकर उठे हैं। जब तक नहा-धोकर नहीं आ जाते मैं प्रसाद नहीं दूँगी।'

सुमित्रा आगे आ गई। हर्ष ने जो उसकी ओर देखा तो उसे लाज लग आई। उसका सर खुला था। बालों को एकत्रित कर जूड़ा बाँध रखा था। मुख पर कहीं-कहीं जल-कण चमक रहे थे। धोती जो उसने बदल कर पहनी थी, वह केवल कमर से बँधी थी और उसका थोड़ा-सा भाग कन्धे से नीचे वक्ष को ढकता हुआ उड़ रहा था। कटि से ऊपर का उसका शरीर का भाग नग्न था। वह सोचती थी कि नहाकर लौट आने के बाद बक्स से धुले कपड़े निकालकर पहनेगी। हर्ष है घर में केवल। उसके आ जाने पर वह बाथरूम में चला जायगा। पर यहाँ तो प्रसन्न और हर्ष दोनों हैं और हर्ष उसकी ओर सुमति के सामने, उसके इस विलक्षण रूप को देख रहा है। सुमति को उत्तर देते हुए उसने केवल इतना कहा—'मैं नहा-धोकर आई हूँ, सुमु लाओ मुझे तो प्रसाद पाने का अधिकार है।' फिर आगे न बढ़कर लजाती, पीछे लौट गई।

हर्ष ने स्थिति समझ ली, बोला—'अब मुझे वहाँ आने दो सुमित्रा। सुमति तुम्हारी ओर से भी पूजा कर आई है। बिन्दी लगवाओ आकर। मैं आँखें बन्द कर उधर चला जाऊँगा।'

सुमित्रा आकर एक कोने में खड़ी हो गई। अपने सारे अंग को उसने इस प्रकार दाब रखा था, जैसे उसके निकल भागने का डर उसे हो रहा था।

## २३

इलाहाबाद से बनारस आने पर प्रसन्न ने सोचा था कि दो-तीन दिन ठहर कर वापस चला जायगा। और वह सुमित्रा के साथ लौट भी जाता यदि उसे हर्ष और रोक न लेता। हर्ष उसके परामर्श से अपने पत्र के प्रकाशित करने के लिए स्थान निश्चित करना चाहता था। इलाहाबाद और बनारस दोनों उसके लिए आकर्षण के केन्द्र थे। इन्हीं में से एक स्थान उसे चुनना था। वैसे इन दोनों ही स्थानों मे अनेक पत्र-पत्रिकाएँ निकलती थीं। तब साधन-हीन हर्ष का 'दर्पण' निकलने के बाद भी जन-प्रिय बन सकेगा, इसमें सभी को सन्देह था। बिक्री के साधन भी सीमित होंगे। प्रेस वालों को कहीं समय पर रुपया न दे सका वह, तो अंक का छपना रुक जायगा। फिर अकेले सम्पादक से लेकर चपरासी तक का काम वह अकेले नहीं कर सकेगा यहाँ। बड़े शहर हैं। समाचारों के संग्रह करने और उनको सम्पादित करने के बाद टिप्पणी लिखने में ही काफ़ी समय बीत जाएगा। मिरजापुर की बात और थी। छोटा-सा शहर था और दूसरा पत्र नहीं निकलता था वहाँ से। सभी उसे जानते थे। कार्यालय में हर समय समाचार देने वाले उपस्थित रहते थे। इसी प्रकार की और भी व्यवस्था-सम्बन्धी कठिनाइयों का हल वह प्रसन्न से चाहता था। सुमित्रा वैसे तैयार थी उसकी सहायता को, किन्तु उस ओर भी गम्भीरतापूर्वक विचारना था। सुमति को वह यथाशक्ति जो आर्थिक सहायता देता था, उसे बन्द कर देने के अर्थ थे कि उसे भी संकट में डाल देना। यह सारी समस्याएँ जटिल रूप में उसके चारों ओर घूम रही थीं।

इन सब पर विचारने और किसी निर्णय तक पहुँचने में एक सप्ताह लग गया।

सबेरे का नाश्ता करने के लिए सब लोग मेज़ के चारों ओर बैठे थे। सुमति ने रात बनाये हुए समोसों को अँगीठी पर गरम कर लिया था। चाय

और बना ली थी। बिनी किसी के पास बँधकर नहीं बैठी। कमरे-भर में चक्कर लगाती घूम रही थी। सुमति के पास आती और चाय का घूँट पीकर भाग जाती। उसी समय अखबार वाला अखबार डालकर चला गया। जब से प्रसन्न और हर्ष आए हैं, अखबार मँगाया जाने लगा है। सुमति ने कहा बिनी—'जा उठा ला।'

बिनी बरामदे की ओर दौड़ गई।

चाय का प्याला समाप्त करते-करते हर्ष ने अखबार पर दृष्टि फैला दी। प्रसन्न ने उसके हाथ से अखबार छीनकर अपने पास रख लिया, बोला—'अखबार नवीसों में सबसे बड़ी बीमारी यही होती है। भले आदमी, यहाँ बैठे हैं चाय पर कि अखबार पढ़ने के लिए? बाद में सारा दिन पड़ा है।'

हर्ष ने बुरा नहीं माना, फिर भी उत्तर दिया—'तुम नहीं जानते प्रसन्न यह बीमारी है कि जागरूकता। संसार की गति-विधि के साथ चलने की उत्सुकता ही अखबार का रूप है। पल-पल पर होने वाले परिवर्तन तो हम जान नहीं सकते, पर जो कुछ सामने है, बासी और पुराना ही सही, वही अविलम्ब ग्रहण करना चाहिए।'

सुमित्रा समोसे का मिर्च खा गई थी, इससे मुँह बना रही थी। सुमति उसे देखकर बोल उठी—'लो, दीदी को तो मिर्च लग गई। क्यों बहुत कड़वी थी? एक चम्मच शकर खा लो दीदी। हर्ष बाबू कल अपनी मरजी से तेज मिर्च लाये थे। न जाने मेरी दीदी को क्यों परेशान करते हैं? इतना भी जब ये नहीं जान पाए कि वह मिर्च खाती हैं या नहीं, तो आगे क्या होगा?'

प्रसन्न ने दोनों प्रसंग सुने थे। सुमित्रा की आँखों से आँसू निकलने लगे थे और मुँह लाल हो गया था। सुमति के परिहास पर उसने कहा—'तुम दोनों बहनों का रिश्ता मैं नहीं समझ सका। सुमित्रा अपनी छोटी बहन का खयाल रखती है, तभी तो नहीं बोलती और सुमति है जो बिना बाण छोड़े रहती नहीं। हर्ष, तुम्हीं को बीच में घसीटा जाता है। पर तुम बोलते जो नहीं? घर बसाने की मन में है तो सीखो इस सब को। हर समय

अखबार, उसके ताजे और बासे समाचार और सम्पादकीय टिप्पणियाँ ही नहीं काम आती हैं। मेरी राय में तुम संगीत भी सीखते चलो थोड़ा-थोड़ा। संवादों का चक्कर छोड़ो। व्यर्थ का मानसिक बोझ बढ़ता है।'

सुमित्रा ने हर्ष की ओर देखा। वह मजे से समोसे खा रहा था, जैसे मिर्च की तेजी उसके लिए कुछ नहीं थी। चाय भी वह काफ़ी फीकी पीता है। एक चम्मच से ज्यादा शकर नहीं लेता।

सुमति ने अपनी प्लेट का बचा समोसा भी उसकी ओर बढ़ा दिया, फिर बोली—'इतनी मिर्च न खायें तो हर्ष बाबू इतना तेज कैसे बोल पायें और कैसे चुटकियाँ ले सकें? और आप प्रसन्न भइया उन्हें म्यूज़िक सीखने को कहते हैं। गले की मिठास और चीज है और तेज बोलना दूसरी चीज। अब तो यह इतने वेग से शर-संधान करते हैं कि मामला एक बार ही में पार हो जाता है। 'दर्पण' को मैंने मनोयोगपूर्वक पढ़ा है, तभी यह कह पा रही हूँ। इससे पहले यह संगीतज्ञ हो सकते थे। मुझे कविताएँ भी सुनाते थे कभी-कभी।'

इस बार मौन तोड़ा सुमित्रा ने। सचमुच उसने मिर्च की तेजी कम करने के लिए एक चम्मच चीनी मुँह में डाल ली थी। जितनी देर वह मुँह में रही वह उसकी मिठास पाती रही। उसके घुल जाने पर फिर मिर्च की तेजी लगने लगी। अन्त में उसने चाय का प्याला फिर भर लिया और उसे जल्दी-जल्दी पीती बोली—'मुझे तो आश्चर्य है कि हमारे देश का पत्रकार स्त्रियों से इतना क्यों डरता है? एक लेख मैं इस बार हर्ष बाबू के ऊपर लिखूँगी। प्रसन्न भइया तुम्हारा सहारा रहेगा। पहले का वृत्तान्त बता देना। उसे भी लिख दूँगी।'

प्रसन्न अखबार लेकर कुरसी छोड़कर उठ आया। बोला—'तुम्हारी-जैसी स्त्रियों से उसे डरना ही चाहिए। वह सोचता है कि कहीं सख्ती से बोला तो नाराजी इतनी बढ़ जायगी कि शायद आज ही भाग जाना पड़े। और फिर मन में तरंगें उठने लगती होंगी तुम लोगों की बातें सुनकर। बुरा तब क्यों उनका माने? इसमें हार-जीत की बात नहीं उठती। जो

गम्भीर है, प्रश्रय उसे ही दिया जाता है। स्त्रियों से तो कोई वैसे भी अनर्गल बातें नहीं करता। और सुनो सुसु, मैं आज खाना नहीं खाऊँगा। इस समय इतना नाश्ता कर लिया है कि बैठा नहीं जाता।'

सुमति ने खाली प्यालों और प्लेटों को ट्रे में रखते हुए सर डाले-डाले कहा—'डरते न होते दीदी तो अब तक किसी को वरण नहीं कर लेते ? इसी प्रकार हम लोगों का मुँह थोड़े ही ताकते रहते ?'

सुमति के इस बार के व्यंग ने हर्ष को मर्माहत कर दिया। सच ही वह इधर इन दोनों स्त्रियों के प्यार का मुहताज बनता गया है। इलाहाबाद जब जाता है तो सुमित्रा का मुँह-ही-मुँह निहारा करता है। तृप्ति नहीं होती। और बनारस आता है तो सुमति की दृष्टि निहारा करता है। जैसे नारी शरीर को, उसके अंगों को और अंगों में समाये मादक प्यार को वह उफ़नाता देखता रहे, बस। इस ओर उसकी सीमा का अन्त यहीं पर हो जाता है। आगे कुछ नहीं है। बड़ा-सा विराम लगा है। तो क्या हर्ष नारी के सामने परास्त है ? उसके अंगों में विहँसता और विलास करता हुआ यौवन उसे स्पर्श करने को आमन्त्रित नहीं करता ? ऐसा कुछ होता तो हर्ष की सारी कामनायें वहीं समाप्त हो जातीं, किन्तु वह ऐसा कुछ तो नहीं करना चाहता जो अमर्यादित हो। जिसके कारण उससे उसकी आत्मा ही घृणा करने लगे। सुमति के यहाँ वह अकेला अनेक बार आया है। रातों रहा है। पर वैसी कलुषित भावना को उसने नहीं उकसने दिया। तभी तो आज सब-कुछ निर्मल है। स्वच्छ सरोवर की भाँति उसका हृदय प्रीति से तरंगित है।

वह कुरसी छोड़ता खिड़की से बाहर देखता बोला—'ठीक तो है सुमति। मुझमें सचमुच किसी को वरण कर लेने का साहस नहीं है। यहाँ पर मैं पराजित हूँ। तुम लोगों का मुँह इसलिए देखता रहता हूँ कि वह सदा इसी प्रकार देखने को मिलता रहे। वैसे बाद में शायद···।'

'चुपो जी हर्ष', प्रसन्न उसका हाथ पकड़कर बोला—'आगे नहीं। सुमति को ठेस मत पहुँचाना। इसी प्रकार अपना मन आनन्दित कर लेती है। उसकी पीड़ा का अनुमान तो कर चुके हो, फिर भी चोट करने को

तैयार हो जाते हो। और वह ठीक कहती है। विवाह क्यों नहीं कर लेते? विवाहिता स्त्री से इस प्रकार मिलने आना, अकेले उसके साथ रहना, उसकी व्यवस्था करना, क्या देखने वाले के मन में संशय नहीं उत्पन्न करता? तुम्हारी आत्मा में जो पवित्रता का रेखा-चित्र खिंचा है, उसे सिवा तुम्हारे कौन जानता है? आओ, अखबार देखो। ये लो, कोरिया की लड़ाई समाप्त हो गई। सन्धि पर हस्ताक्षर हो गये हैं। कम्युनिस्ट, भई अन्त तक डटे रहे। बहुत-कुछ अपना मनवा लिया।'

हर्ष अखबार हाथ में लेता अपनी स्वाभाविक मुद्रा में आकर बोला—'अरे नहीं प्रसन्न, मैं क्या पागल हूँ जो मन में आता है सो बकने लगता हूँ? चलो तुम्हारी सलाह यही है तो घर भी बस जायगा। पर सोच लेना, पहले दोनों का पेट भरने का इन्तज़ाम तुम्हें ही करना पड़ेगा। मुझे तो लगता है अब आवारागरदी करनी पड़ेगी। हाँ देना तो अखबार।'

प्रसन्न ने उसे ऊपर का पृष्ठ दे दिया। दोनों खिड़की के पास अपनी-अपनी कुरसियाँ डालकर बैठ गए। सुमित्रा ने सुमति से धीरे से कहा—'तू सुसु बड़ी प्रबल है। हर्ष बाबू आखिर में ब्याह करने को तैयार हो ही गए। अब तुझे ही लड़की की भी खोज करनी होगी।'

'वह सब मैंने पहले ही कर लिया है', सुमति ने पुलकित हो कहा।

'कौन है? मुझे भी बता।'

'नहीं बताऊँगी। पर ब्याह में तुम्हें जरूर बुलाऊँगी दीदी। अभी से कहती हूँ, तैयार रहना।'

सुमित्रा ने उसके कसकर चुकोटी काट ली, बोली—'बता नटखट, नहीं तो ट्रे नीचे पटक दूँगी।'

'पटक दो दीदी। मेरा क्या है? तुम्हें फिर मंगानी भी तो होगी।'

'सुमित्रा उससे लिपट गई। बिना पूछे उसे आगे नहीं बढ़ने दिया।

सुमति ने एक बार फिर वातावरण में हास्य बिखेर दिया। वहीं से ऊँचे स्वर से बोली—'सुनते हो प्रसन्न भइया, सुमित्रा दीदी क्या कहती हैं?'

प्रसन्न के साथ ही हर्ष ने अखबार से दृष्टि हटाकर उधर देखा। सुमित्रा

सुमति को बोलने से रोक रही थी, पर वह कह गई—'कहती हैं दीदी कि हर्ष बाबू का ब्याह किससे होगा न जाने ? मैंने सान्त्वना दी—दुख न करो दीदी। उनका ब्याह तुमसे ही होगा। तब पूछने लगीं कि कब होगा ? भला बताओ भइया, मैं इस सबको क्या जानूँ ? जब दोनों चाहेंगे हो जायगा। आज ही और अच्छा हो कि अभी हो जाय, इसी घर में। हम तुम भइया, कुछ दिनों के लिए घर छोड़कर गंगा किनारे जा बसेंगे।' कहती वह अपना पल्ला छुड़ाती हुई रसोईघर की ओर बढ़ गई।

सुमित्रा उसे रोकती रही थी, पर सुमति जैसे एक साँस में रटा हुआ पाठ-सा सब कुछ कह गई। भ्रमित और लज्जा से नत सुमित्रा वहाँ फिर खड़ी नहीं रह सकी। प्रसन्न ने कहा—'देखा हर्ष, ईर्ष्या की छाया से दूर कितनी आत्मीयता से सुमति ने यह गठ-बन्धन जोड़ा है। कहीं पर भी कुंठा नहीं है, दुराव नहीं है। निर्झर की भाँति उसके भावों में कितनी एकरूपता है हर्ष ! सुमति तू कितनी अल्हड़ है, कितनी लुभावनी, इसे वह विश्वास क्या समझे ! अरे सुमित्रा, शरमाओ नहीं। शायद यही विधान है तेरे लिये। जो सामने आये—स्वयं से, उसे स्वीकार कर बहन। तेरा सुहाग मलिन न हो, कामना है।'

सुमित्रा केवल 'भइया···' कह सकी। आगे उसने अंचल में अपना मुँह छिपा लिया।

हर्ष बोला—'क्या वाहियात बकते हो जी प्रसन्न ? इन सब बातों का यह समय तो नहीं। यह क्यों भूल जाते हो कि सुमित्रा का पति जीवित है। बदमाशों का दल अलग पीछे लगा है। क्या हम दोनों की भी हत्या करा डालने का मन है ?'

प्रसन्न ने उत्तेजित होकर कहा—'हत्या तो मेरी होगी हर्ष। सुमित्रा को मेरे साथ रहते देखना उन्हें सहन नहीं।'

हर्ष अखबार पर दृष्टि जमाये रहा, टाल दिया—'अच्छा, जिसकी मौत आयेगी वही मरेगा। चुप रहो अब। आशीर्वाद बाद में देना। देखा नहीं तुमने ? काश्मीर की समस्या गम्भीर होती जा रही है। कुछ राजनीति

में भी दिलचस्पी लिया करो। मैं तो सोच रहा हूँ कि बस किसी दल में शामिल हो जाऊँ और नेतागिरी का पेशा अपना लूँ। अखबार द्वारा नहीं, तो भाषणों द्वारा अपने विचारों की स्वतन्त्रता की तो रक्षा कर सकूँगा। अच्छा, आगे मत बोलना।'

प्रसन्न अखबार पर फिर दृष्टि दौड़ाने लगा और सुमित्रा मेज की सफ़ाई करने लगी। चाय की बूँदें पड़ी थीं, उन्हें भीगे कपड़े से पोंछ कर साफ़ कर दिया, फिर मेज का सारा सामान उठाकर यथावत लगाने लगा। विनी चाय पीने के बाद टाफ़ी मुँह में रखकर बरामदे में चली गई थी। वहीं से अपनी भाषा में कुछ गाने लगी थी।

प्रसन्न लखनऊ के समाचार पढ़ रहा था। अचानक उसकी दृष्टि उस समाचार पर अटक गई, जिसमें मदन होटल का काण्ड छपा था। बहुत संक्षेप में यह संवाद छपा था कि शरणार्थी बस्ती के मदन होटल के प्रोप्राइटर को ज़हर देकर मार डाला गया और उसकी जवान लड़की को गायब कर दिया गया। ऐसा अनुमान किया जाता है कि इसमें होटल के मैनेजर का हाथ है। कुछ सूत्रों से इसकी पुष्टि भी हुई है। पुलिस ने शव को 'पोस्ट मार्टम' के लिए भेज दिया है और मैनेजर को गिरफ़्तार कर लड़की की खोज जारी कर दी है। संवाद को समाप्त करते हुए यह भी लिखा गया था कि बदमाशों के एक दल का यह काम बतलाया जाता है, जिसके लोग युवती स्त्रियों को भगाने और उनसे पैसा पैदा करने का पेशा करते हैं। इस प्रकार की घटनाएँ पहले भी हो चुकी हैं।

सहसा प्रसन्न को इस सब पर विश्वास नहीं हुआ। हर्ष के कन्धे को जोर से हिलाता हुआ बोला वह—'देखना हर्ष, यह लखनऊ का समाचार बड़ा अशुभ है। विश्वास मदन होटल ही तो चलाता है। भीषण दुर्घटना घटी है। उसे पुलिस ने हत्या करने के जुर्म में गिरफ़्तार कर लिया है।' उसकी वाणी में घबराहट समा गई थी।

हर्ष के हाथ का अखबार छूट पड़ा, बोला—'एँ, क्या कहा? विश्वास ने हत्या की है? लाओ देखूँ।' कहते उसने तेजी से अखबार ले लिया

और एक साँस में धड़कते हृदय से सारा समाचार पढ़ डाला।

'गज़ब हो गया,' उसके मुँह से निकला और वह प्रसन्न का मुँह देखने लगा। 'दर्पण' में उसने इस प्रकार के हत्या कर देने, जहर देने और स्त्रियों के भगाने के सैकड़ों समाचार प्रकाशित किये थे। उस समय वह इन कृत्यों की अमानुषता और निर्दयता पर टिप्पणी लिखते हुए भी व्यथित नहीं होता था। जैसे अन्य राजनीतिक समाचार वह देता था, जिनमें केवल विचारों की भिन्नता रहती थी, ठीक वैसे ही वह क़त्ल और अपहरण के मामले छाप देता था। प्रेस में दे देने के बाद वह उस घटना को एक प्रकार से भुला ही देता था, किन्तु इस घटना से, जिसका वर्णन अँग्रेजी के अखबार में छोटे-छोटे अक्षरों में दिया गया था, वह जैसे काँप उठा। मदन होटल के प्रोप्राइटर की लड़की हरबंस को वह जानता था। उसने उसे देखा भी था। उसे संशय भी हुआ था कि विश्वास उस लड़की को अपने जाल में फाँस रहा है। पर जहर देकर हत्या करना, छिः बड़ा घृणित काम है। वह विचलित हो उठा।

सुमित्रा मेज पर सामान लगाने के साथ बीच-बीच में इधर देख लेती थी। सुमति बाथरूम में प्याले धो रही थी, जिनकी आवाज़ साफ़ सुनाई पड़ रही थी। सुमित्रा ने जो इस बार उधर देखा तो दोनों को चिन्तित-सा पाया। वह हाथ का काम छोड़कर उनकी ओर दौड़ गई। परेशानी से पूछा—'क्या खबर है भइया?'

प्रसन्न नहीं बोल पाया कि हर्ष कह उठा—'बड़ी बुरी ख़बर है, इतनी बुरी कि हम लोग कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उसे छिपाने से कोई लाभ नहीं दिखाई देता। पर देखो सुमित्रा, सुमति को तुम्हें सँभालना होगा।'

सुमित्रा अधीरता से बोली—'वह सब मैं कर लूँगी हर्ष बाबू, पहले साफ़-साफ़ बताओ, मामला क्या है?'

प्रसन्न ने संयत स्वर से कहा—'विश्वास को पुलिस ने होटल के मालिक को जहर देकर हत्या करने और उसकी लड़की को भगाने के अपराध

में गिरफ्तार किया है। पर यह उसका अकेले का काम नहीं हो सकता और लोग भी जरूर शामिल हैं।'

सुमित्रा कहने को तो सुमति को सँभालने की बात कह गई थी, पर खबर सुनकर वह अपने आश्वासन को भूल गई। वहाँ से दौड़ती हुई जाकर सुमति से घबराहट के स्वर में बोली —'बड़ी बुरी खबर है री सुमु। विश्वास बाबू को पुलिस ने पकड़ लिया है।' फिर तुरंत अपना वचन स्मरण कर अपने कण्ठ से व्यग्रता दूर कर सहज भाव से बोली —'तू अधीर मत हो। मैं अभी किसी को भेजूँगी लखनऊ। सारी बात ठीक से जाननी होगी। अभी तो अखबार की खबर है। कहो भले को निगाह पड़ गई, नहीं तो कुछ पता भी न चल पाता। ऐसी खबरें पढ़ता ही कौन है?'

सुमति के हाथ में जो प्याला था, वहीं का वहीं रह गया। सुमित्रा के मुँह की ओर आश्चर्य से देखती बोली —'गिरफ्तार हो गये, क्यों? बात क्या है? कारण भी तो लिखा होगा?'

'कारण मैं बताता हूँ', कहता हर्ष आगे घुसा बाथरूम में। प्रसन्न बाहर दरवाजे पर खड़ा हो गया। 'कारण, उन पर हत्या व लड़की भगाने का जुर्म लगाया गया है। हो सकता है कि यह ग़लत भी हो। किसी दूसरे ने किया हो और पकड़े ये गये हों। आजकल यह भी मुश्किल नहीं। पर तुम धीरज मत खोना सुमति। मैं लखनऊ जाकर सारा पता लगाऊँगा। गाड़ी का समय अभी है। विश्वास बाबू ऐसा कर सकेंगे, यह मुझे कम-से-कम अभी स्वीकार नहीं है। समय की गति है। अपना घर, अपनी पत्नी छोड़कर भटक रहे हैं।'

सुमति स्तब्ध रह गई थी। घटना से स्पष्ट था कि लड़की के लिए ही मालिक की हत्या की गई है। वह विरोध करता होगा। उसके नेत्रों में आँसू छलक आये, पर वह उन्हें गिरने से रोके रही। विश्वास क्यों उसे छोड़ बैठा है? एक नारी का परित्याग कर दूसरी को पाने के लिए हत्या तक कर डाली? अब फाँसी होगी। वह आगे आने वाली विपत्ति की अमंगल कल्पना से विचलित होकर जैसे भयभीत हो उठी। कुछ देर तक

विक्षिप्त की भाँति चारों ओर देखकर वह हर्ष से लिपटकर रो पड़ी। रुंधे गले से उसने कहा—'हर्ष बाबू, तुम मेरी रक्षा करो। सबसे पहले मेरा हाथ तुम्हीं ने पकड़ा था। मुझे उसी का सहारा है। उन्हें बचा लो। मैं माँग का सिन्दूर पोंछकर कलंकिनी नहीं बनना चाहती।'

सुमित्रा भी रोने लगी थी। सुमति को उसने चुपचाप अपनी बाहों में भर लिया।

प्रसन्न ने सान्त्वना दी—'रोओ मत सुमु, विश्वास बाबू को बचाने का पूरा प्रयत्न किया जायगा। स्त्री के लिए पति का नाम ही बहुत है, यह हमारे समाज की मर्यादा है। पर मैं इसके विरोध में आवाज़ उठाऊँगा। यह अत्याचार···।'

हर्ष ने भारी कण्ठ से उसका हाथ पकड़कर कहा—'चलो प्रसन्न। भावुकता में बहने का समय यह नहीं है। मैं लखनऊ जा रहा हूँ। जैसा कुछ होगा तार से सूचित करूँगा।'

और दूसरे ही क्षण वह अटैची में अपना आवश्यक सामान भरकर सुमति को समझा-बुझाकर स्टेशन आ गया।

## २४

हरबंस के जीवन का पोत पहले घने कुहरे से आवृत्त अन्धकार में धीरे-धीरे समाता गया, फिर उद्दाम तरंगों और उद्धत लहरों के थपेड़े खाता हुआ धीरे-धीरे अतल गर्त में डूबता गया। उससे जो-कुछ कहा गया, उसने किया। अब उसके पास आँसुओं के सिवाय कुछ नहीं बचा था। जो आशाएँ थीं, वे भी कुचल चुकी थीं। केवल रक्त-मांस से भरा शरीर शेष था, जिसे

सब-कुछ मानकर पुरुष उसी को पा जाने में अपना दम्भ और अपनी विजय मानता था। उसकी स्थिति बाजार में बिकने वाले उस खिलौने के समान थी, जिसका बहुत साधारण-सा मूल्य था और जिसे कोई भी मोल लेकर खेल सकता था। बटवारे के समय भीषण लूट-मार में भी उसने जिस वस्तु को सुरक्षित रखा था, वह इस प्रकार चली गई जैसे किसी ने रास्ता चलते बेल से खिला फूल तोड़ लिया हो और बिना किसी मोह के मसलकर सड़क के एक किनारे डाल दिया हो।

बाहर दरवाजे पर खटखट हुई। उसने उठकर खोलते हुए देखा—जो व्यक्ति उसके साथ यहाँ तक आया था, वही था। वेश-भूषा बदली थी। वह जब कभी बाहर जाता था, तो कपड़े बदलकर निकलता था। यहाँ उसे पकड़े जाने का भय था, इससे सबकी दृष्टि बचाकर रहना पड़ता था। हरबंस को वह परदे के अन्दर लाया था।

उसने कुछ रुखाई से पूछा—'क्यों, अभी तैयार नहीं हुई? जाना नहीं चाहती हो?'

हरबंस ने उत्तर दिया—'नहीं, अब तो यहीं मरना होगा।'

'पर मैं औरत का रिश्ता किसी से नहीं जोड़ता,' उसने दरवाजे में चट-खनी लगाते हुए कहा—'मैं आजाद हूँ। किसी को बाँधकर रखना मैंने नहीं सीखा। तुम भी आजाद हो, जहाँ कहो वहीं भेज आऊँ।'

'तुम क्या चाहते हो?' हरबंस ने व्यथा की लकीरें मुँह पर उतारते हुए पूछा।

'अब कुछ नहीं हरबंस। जो चाहता था, मिल गया। तुमने मुझे अपनी तरफ खींचा था, मैं खिंच आया। बस और कुछ नहीं। और विश्वास से हमने एक समझौता तुम्हें लेकर किया था। उसे तुम्हें सौंपना है। उसे सुनना चाहती हो?'

'सुनाओ, सब-कुछ सुनूँगी और सहूँगी,' कहती वह चारपाई पर बैठ गई और उस निर्लज्ज का मुख देखने लगी, जिसने उसके साथ....छिः कैसा पुरुष है वह? पशुओं से भी बढ़कर उतावला और बेसब्र...जंगली...बन्दर।

'विश्वास के साथ तुमने ब्याह करने से इन्कार कर दिया। तेजासिंह भी नहीं राजी हुआ। इस बीच मैं आया होटल में। मुझसे उसने तय किया कि तेजासिंह को मौत के घाट लगा दिया जाय। तुम हम दोनों के बीच रहोगी। आवश्यकता पड़ने पर मैं तुम्हें आकर ले जाया करूँगा, वैसे मदन होटल है। पर विश्वास''''नाम उसका उल्टा है। मैं तो उसे अविश्वास कहूँगा। उसने मुझे पुलिस में पकड़ा देने की युक्ति सोची, परिणाम देखा हरबंस। अखबारों में छपा है। पुलिस ने तेजासिंह की लाश भी डाक्टरी जाँच के लिए कब्जे में कर ली है और हत्या और तुम्हें भगाने के जुर्म में उसे गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया है। हम लोगों की भी खोज की जा रही है। विश्वास हमारे विषय में बहुत कम जानता है। पर बचने के लिए हुलिया आदि तो देगा ही। बस तुमसे मेरा इतने थोड़े समय का सम्बन्ध था हरबंस। तुम्हें मदन होटल के रास्ते पर छोड़कर मैं अपनी जान बचाने के लिए बहुत दूर चला जाऊँगा। तुम भी तो मेरे खिलाफ़ बयान दोगी। हत्या और तुम्हें भगाने का जुर्म मेरे ऊपर भी लगाया जायगा, पर मैं कोई नया खिलाड़ी नहीं हरबंस। सुना, मैं अपने काम में उस्ताद हूँ। चलो, नहीं तो छोड़कर जाना पड़ेगा।'

'तो तुम मुझे भी मार डालो न ?'

'तुम्हें, नहीं हरबंस। अभी तुम्हारी न जाने कितनी बार ज़रूरत पड़ेगी और मैं इतना नीच भी नहीं हूँ कि जिस से सुख पाऊँ, उसे ही मार डालूँ। आखिर मेरे भी दिल है, एक इन्सान का दिल···जैसा तुम लोगों का है, उसमें दर्द···।'

'सब झूठ है, एकदम मिथ्या,' हरबंस तड़प उठी। 'हत्यारों और लुटेरों के कहाँ दिल होता है ? और दर्द तो क्या होगा ? पर उनका अन्त सुना है बड़ा बुरा होता है। तुम क्या सोचते हो कि तुम्हें इन गुनाहों की सजा नहीं मिलेगी ? तुम जिन्दगी-भर पाप करते रहोगे ? तुम्हारी आत्मा अगर है तो वह तुम्हें कभी नहीं माफ करेगी—कभी नहीं और जब तुम मरोगे—क्योंकि मरना तो होगा ही तुम्हें। मौत को तुम नहीं जीत सकते। मरने के बाद

भी तुम्हें अशान्ति घेरे रहेगी। जिनकी तुमने जानें ली हैं, वे भूत बनकर तुम्हारे मांस को क्या हड्डियों तक को खा डालेंगे।'

वह व्यक्ति एक बार को सहम उठा। हरबंस कुछ नहीं है। उसकी क्रूरता के सामने वह टिक नहीं सकती। पर वह उसकी बातें, जिनमें जहर भरा था, सुनता रहा। क्रोध भी नहीं किया। मुस्कराकर बोला—'बड़ी हिम्मत है तुम्हारी। आज तक किसी औरत ने इतना साहस नहीं किया कि मुझसे जबान खोलकर बात कर सके। पंजाब की औरतें जैसी सुनी थीं, वैसी ही तुम हो। डर नहीं लगता मेरा?'

हरबंस निडरता से बोली—'अब डरने को मेरे पास रहा ही क्या है, जिसकी रक्षा करने की चिन्ता करूँ? जो कुछ पूजा की भाँति पवित्र था और जो एक औरत की जिन्दगी होती है, उसे ही तुम ने भ्रष्ट कर डाला, तो अब डरने की क्या बात रह गई? बहुत करोगे तो मुझे बार-बार कलंकित कर दोगे, पर जो वस्तु अपवित्र हो गई और जो फल डाली से तोड़कर गिरा दिया गया वह न तो फिर डाली में लग सकता है और न उसकी पवित्रता लौटाई जा सकती है। अब तुम चाहो तो मुझे हमेशा के लिए ले लो, या सदा के लिए छोड़दो, मेरे लिए दोनों बराबर हैं। मैं अब घर बसाकर रहने के योग्य तो नहीं रह गई? बोलो, तुम इतना जुल्म क्यों करते हो? कब तक करते रहोगे? कभी तुम्हारा मन भरेगा या नहीं? कभी तुम्हारी आत्मा तुम्हें घृणा से धिक्कारेगी नहीं?'

उस व्यक्ति के ऊपर हरबंस की तीव्र वेदना और प्रबल आघात का कोई प्रभाव नहीं हुआ। जैसे वह कोई पत्थर है जिस पर मनुष्य पैर रखकर भी निकल जाय तो भी उसे भान नहीं होगा। यह तो एक कहने की बात है कि उसे भी दर्द होता है, उसके भी इन्सान का हृदय है। उसके पास जो-कुछ है, वास्तव में वह सर्प का दंश है, जो काट खाने पर मनुष्य को जीवित नहीं छोड़ता। अनुराग और स्नेह, प्रीत और ममता उसे कभी जीत नहीं पाती।

कलाई में बँधी घड़ी की ओर देखते हुए उसने जरा तेजी से कहा—

'मेरा क्या होगा, इसकी फिक्र तुम्हें क्यों होती है हरबंस ? कपड़े बदल लो जल्दी से। मैं ज्यादा बातें करने का मौका नहीं देता। एक हद है। उससे आगे मत बढ़ो। और सुनो एक काम की बात कहूँ। विश्वास से ब्याह क्यों नहीं कर लेती ? बुरा क्या है ? तुम्हें चाहता भी है। जानती हो वह अपनी पहली स्त्री को छोड़ चुका है। क्यों, वह भी मैंने जान लिया है। औरतों को ठीक से समझ पाना सचमुच ही कठिन है। वह विश्वास को नहीं चाहती। सुना हरबंस, घर-घर यही फैला है। जिस सफ़ेद पोश के यहाँ भीतरी जाँच करो, तो एक जैसा मिलेगा। किसी की औरत भाग जाना चाहती है तो किसी का पति दूसरी स्त्री के फेर में है। एक कमज़ोरी ने स्त्री-पुरुष दोनों को घेर रखा है। और यह सेक्स की भूख, अतृप्ति एक बेचैनी-सी पैदा किये है। सृष्टि के खिलाड़ी पुरुष और स्त्री अविश्वास की आड़ में अपना-अपना दाँव चल रहे हैं।'

हरबंस जाने के लिए उठ खड़ी हुई, पर आगे नहीं बढ़ी। खड़े होकर बोली—'सबके घर की तुम क्या जानते हो ? उन लोगों के बारे में भले ही जानते होगे, जो दुर्भाग्य से ग़लत ढंग से एक साथ बाँध दिये जाते हैं। वहीं दोनों पक्ष दुर्बलता पर विजय नहीं पा सकते। गिरना जरूरी हो जाता है। तुम्हें जो औरतें मिली होंगी, वे अपनी सरलता के कारण तुम्हारे जाल में फँस गई होंगी। वैसे वे इतनी सस्ती नहीं हैं और न बाज़ारू हैं जो हर समय··।'

'देखता हूँ बहस खूब कर लेती हो। अब तैयार होकर आओ ? बातों में मुझे लगाए रखकर कहीं गिरफ़्तार तो नहीं करा दोगी ? क्या भरोसा है तुम्हारा ?'

हरबंस ने एक तीक्ष्ण बाण और मारा। कहने लगी—'कमज़ोर और डरपोक आदमी ही औरतों का भरोसा नहीं करते ? यही विश्वास का हाल है। उन्हें भी आज़मा चुकी हूँ। उन्हें भी एक बार आदमी से शैतान बनते देर नहीं लगी थी, जैसे तुम बन चुके हो। पर उन्हें तो मैंने ज़रा सी देर में ठण्डा कर लिया। हाँ तुम्हारे सामने मेरी नहीं चली, झुकना पड़ा। असल

में विश्वास की स्त्री ने ही उन्हें छोड़ा है। ऐसे छिछोड़े आदमी को कौन अपना पति बना सकती है? हर समय वही नशा चढ़ा रहता है। इसीलिए सुमति···।'

उस व्यक्ति ने फिर घड़ी की ओर देखा, कहा—'ये बातें मेरे कुछ भी काम नहीं आएँगी। तुम ऐसे नहीं जाओगी कपड़े बदलने। मैं लाता हूँ। यहीं मेरे ठीक सामने बदलने होंगे।' कहता वह भीतर कमरे में घुस गया और खूँटी पर टँगी साड़ी उतार लाया।

हरबंस ने निस्संकोच साड़ी लेते हुए कहा—'मुझे कपड़े बदलते देखना चाहते हो? यह क्यों नहीं कहते कि एक औरत को···देखना चाहते हो। पर कैसे हो जी तुम? मुझे अभी तक देखा नहीं है क्या? उससे आगे भी कुछ और है, या समूचे शरीर को सर से लेकर पैर तक···बोलो न? तुम्हारी आँखें वह सब बेशरमी से देखती रहेंगी। वाह रे आदमी! सुना क्या, पढ़ा है कि मर्द पराई औरतों की तरफ़ आँख उठाकर भी नहीं देखते हैं और एक तुम हो जिसका उनके साथ हरदम खेलने के बाद भी जी नहीं भरता।'

वह इस बार अपनी भवें चढ़ाकर बोला—'यह सब कुछ नहीं। तुम तो बड़ी बेहया लगती हो हरबंस। मैं तुम्हारे जैसा नहीं। लो, मैं जाता हूँ सामने से।' कहकर वह बरामदे के दूसरी ओर निकल गया। चलते-चलते वह यह फिर कहता गया कि दो मिनट से अधिक लगा तो तुरन्त सामने आ जायगा और फिर जो स्थिति उत्पन्न हो जायगी, उसके लिए भी उसे तैयार रहना होगा।

हरबंस साड़ी लेकर कमरे में चली गई। अन्दर से चटखनी लगाकर उसने अपने शरीर को एकदम निरावरण कर लिया। फिर जहाँ तक उसकी दृष्टि पहुँच सकती थी, वह देखती रही और सोचती रही कि यही शरीर है जिसे पाने के लिए विश्वास मचला था और जिसके लिए उसके पिता-तुल्य तेजासिंह की हत्या की गई। अब भी क्या इसका कोई मूल्य है? नहीं, उसके भीतर से किसी ने उत्तर दिया। कौमार्य भंग हो जाने के बाद उसके

शरीर की पवित्रता भी नष्ट हो गई है। वह अब एक बाजारू औरत बन गई है जिससे जो चाहे खेल सकता है। अपना घर बसाने के लिए उसके शरीर का उपयोग कोई नहीं करेगा। उसे यों ही घुट-घुटकर मरना पड़ेगा। वह क्या इतनी खूबसूरत है कि लोग···! नहीं, वह बड़ी भद्दी और बदसूरत है। वैसी ही रहना चाहती है। जीवन में तब किसी एक का प्यार तो मिल सकता है। उसे स्मरण हो आया कि एक नावेल में यही सब दिखाया गया था। खूबसूरती औरत के लिए ज़हर बन जाती है। सभी उसे चाहने लगते हैं। उसे पाने के लिए लड़ाइयाँ होती हैं, मुकदमे चलते हैं और हत्याएँ होती हैं। यह सब कितना घृणित है? केवल शरीर पाने के लिए इतना सब किया जाता है, पर आदमी को उसे पाकर भी मिलता क्या है? वह अतृप्त बना रहता है, वासना की भूख उससे नहीं मिटती। वह दूसरी स्त्री के पीछे दौड़ता है। पहले जमाने में न जाने कितने राज्य स्त्री के कारण नष्ट हो गए। क्यों, हरबंस, तू भी क्या उनमें से एक है? तेरे पीछे भी हत्या हो चुकी है। तुझे चाहने वाले एक नहीं कई हैं। अदालत में और भी पैदा हो जायँगे। पर सब तेरे रूप के भूखे हैं। तू जिसे आत्म समर्पण नहीं करेगी वही तेरे ऊपर अत्याचार करेगा। तब तू मर क्यों नहीं जाती? किस आशा के सहारे तू जीना चाहती है? कौन है तुझसे सच्ची प्रीति करने वाला? क्या तुझे अपने इसी शरीर से बहुत मोह है? इसे आग में जलाने से डरती है? पगली। मर जाने के बाद तो यह शरीर मुर्दा हो जायगा। जो तू इसके भीतर है, जो बोलता है, सोचता है, वह शक्ति नहीं रहेगी। तब शरीर को कोई कष्ट नहीं होगा। वह पड़ा सड़ता रहे तो भी क्या? जो चेतन है वह जब नहीं है, तो रूप क्या हरबंस, वह मिट्टी है।

अनायास ही वह फफक-फफककर रो पड़ी।

दरवाज़े पर फिर खट-खट हुई। बाहर से उस व्यक्ति ने कहा—'यह रोना किसलिये? मेरे मन में दया-ममता कुछ भी नहीं है और अभी तो डटकर मोर्चा ले रही थी। यह दिखावा किसलिये? दरवाज़ा खोलो।'

हरबंस को सम्भलने और स्वस्थ होने में कुछ क्षण लगे। तब तक वह

निरन्तर खट-खट करता रहा। उसने कहा भीतर से—'मेरे आँसुओं का मूल्य तुम नहीं जान सकते। तुम्हारे पास उसे समझने की बुद्धि ही नहीं है। तुम मन की गहराई, भावना की कोमलता, विचारों की आँधी और सम्वेदना की पुकार कुछ नहीं समझ सकते। जुर्म बढ़ा सकते हो बस। कभी तुम्हारे भीतर आदमीयत आए, तो मुझे याद कर लेना।'

'चुप रह', कहकर वह दरवाज़ा बलपूर्वक खटखटाने लगा—'मुझे तेरे उपदेश की जरूरत नहीं औरत। अपना जीवन सुधार पहले।' वह आपे से बाहर हो रहा था। घड़ी की सुई निरन्तर बढ़ती जा रही थी, जिसकी ओर उसका ध्यान था। समय से यदि वह यहाँ से नहीं चला जाता तो मुसीबत आ सकती है। यह औरत उसे फँसा देगी, यह आशंका उसे बार-बार हो रही थी। उसे छोड़कर जाने से उसे भय था कि वह बाहर जाकर यदि चिल्लाने लगी तो उसके पीछे पुलिस लग जायगी। सड़क पर मकान है। इसी मकान में तेजासिंह को लाया गया था। इसका पता वह हरबंस को नहीं देना चाहता था। उसे बुरका पहनाकर लाया था, वैसे ही ले जाना चाहता था।

हरबंस ने संयत होकर कहा—'रुक जाओ जी। उपदेश मैं नहीं देती। जानते नहीं पहले के कपड़े उतार चुकी हूँ, साड़ी पहनने जा रही हूँ। दरवाजा कैसे खोलूँ? तुम तो तब हट गये थे, अब सामने कैसे आओगे? जरा और ठहर जाओ।'

'नहीं, एक सेकेण्ड नहीं', उसने कर्कशता से कहा। 'मैं दरवाजा तोड़ता हूँ। फिर अपने हाथों से तुझे साड़ी पहनाऊँगा, हरबंस की बच्ची! तू समझती है कि तेरा जादू मेरे ऊपर काम कर गया है, तभी मैं नहीं बोल रहा हूँ। सब ग़लत है। तेरी जैसी सैकड़ों औरतों को मैंने इसी कमरे में ........समझी, और उन्हें ले जाकर अड्डे में बिठा दिया है। तू भी वहाँ पहुँचेगी तो देखेगी।' उसके दाँत पीसने और होठ काटने का अनुभव हरबंस ने भीतर से किया।

दरवाजा उसने फिर भी नहीं खोला। अनुनय के स्वर में कहा—'एक

मिनट और नहीं रुक सकते क्या? ब्लाउज़ पहन चुकी हूँ। पेटीकोट पहन रही हूँ, बस साड़ी पहनना रह गया है। जब मोल लाना तो साड़ी स्वयं पहनाना। तुम्हारी यह इच्छा भी पूरी करूँगी। इतने उतावले न बनो।'

वह व्यक्ति झुँझला उठा। अब उसके लिए रुकना कठिन था। विलम्ब उसे सहन नहीं हुआ। उसने सारा बल लगाकर दरवाज़ों में लातें मारनी प्रारम्भ कर दीं।

हरबंस की बुद्धि इस संकट-काल में न जाने कैसे स्थिर हो गई, जो उसने क्षण भर में अपना भविष्य सोच डाला। विश्वास भला आदमी नहीं है, यह ठीक है, पर वह इतना नीच नहीं है, जितना यह राक्षस। अपनी चालों से यह अभी बाज़ नहीं आया है। आगे और न जाने क्या करे? विश्वास को हत्या के अपराध में फँसा दिया है। उसकी पत्नी जीवित है। उसे कहीं फाँसी हो गई तो उसका क्या होगा? नारी स्वभाव की स्वाभाविक कोमलता जहाँ सुमति के प्रति जाग उठी, वहीं इस नारकीय व्यक्ति का अन्त करने का साहस भी उसमें भर गया। अपनी जान पर इस समय खेलना उसे उपयुक्त जँचा। दरवाज़ा खोलते ही वह उस पर भीषण आघात करेगी। उसकी पुष्ट देह एक बार को उत्तेजित हो उठी। जिसने इस देह को उसे बाध्य कर अपने अंक में लिया है, आज वही देह पाषाण का वज्र बनकर प्रतिकार करेगी। उसे अपनी युक्ति पर विश्वास था।

दरवाज़ा हिलने लगा था और इसके पहले कि वह टूटकर गिरे, हरबंस ने उसे तेज़ी से खोल दिया। आवेग से वह मनुष्य सम्भल न पाकर लड़खड़ा गया और ठीक उसी समय हरबंस ने सधकर लकड़ी का स्टूल उसके मस्तक और सर पर भरपूर ज़ोर लगाकर दे मारा। उस बदमाश की आँखें मुँद गईं और रक्त की धारा सर से बहने लगी। निशाना अचूक था। चोट इतनी गहरी लगी थी कि उसका हृदय बैठने लगा। एक बार आँखें खोलकर देखा—हरबंस साड़ी बदन से लपेटे खड़ी है। आँखें लाल हैं और उसी समय उसे लगा कि उसके मुँह पर हरबंस ने एक बार नहीं अनेक बार घृणा से थूका है।

उसने कुछ कहने के लिए मुँह खोला, पर साँस फिर नहीं लौटी। उसकी मृत्यु हो गई। हरबंस की अब संज्ञा लौटी। उसने भी एक हत्या की है—पर पापी की। समाज को नरक बनाने वाले दुष्ट की।

उसने फिर विलम्ब नहीं किया। कपड़े बदलकर और मकान को वैसा ही खुला छोड़कर वह सब की दृष्टि से बचती हुई सड़क की भीड़ में समा गई।

## २५

मदन होटल में पुलिस का ताला पड़ गया था। सारे नौकरों को कहीं और काम कर लेने का आदेश मिल गया था। पुलिस ने अपनी रिपोर्ट में इस होटल को एक बदनाम होटल के नाम से लिखा था और इस घटना का विवरण देते हुये एक स्थान पर यह भी लिख दिया था कि यह बदमाशों का अड्डा था। होटल के मालिक तेजासिंह की हत्या रहस्यमय ढंग से की गई है जिसमें होटल के मैनेजर विश्वास के भी सम्मिलित होने का सन्देह है। अभी जाँच हो रही है। तेजासिंह की लड़की हरबंस के मिलने के बाद इस सम्बन्ध में और भी पता चलेगा। उसकी खोज भी जारी है। ऐसा अनुमान किया जाता है कि शहर में ही कहीं इन बदमाशों के गिरोह का दूसरा अड्डा है, जहाँ हरबंस को छिपाकर रखा गया है। अभी उसे शहर के बाहर नहीं ले जाया गया है। सभी स्थानों पर पुलिस की निगाह है।

विश्वास उस रात-भर हवालात में बन्द रहा था, फिर उसका चालान कर जेल भेज दिया गया। अपने बयान में, जो उसने पुलिस के सामने दिया था, सारे अपराध को अस्वीकार किया था और अपने को निर्दोष प्रमाणित करते हुए उसने इस घटना से एकदम अनभिज्ञता प्रकट की थी। वास्तविक अप-

राधी की सारी योजना का उसने विस्तार से वर्णन किया था, कि किस प्रकार वह हरबंस का नाम सुन कर वहाँ आया, उसे देखकर उसके प्रति आकर्षित हुआ और तेजासिंह से अपने साथ विवाह करने की धमकी दी। यहाँ से उसने घटना को मोड़ दिया था और सीधे अपने से उसकी बातों का सम्बन्ध जोड़ कर हरबंस से जोड़ दिया था। उसने बताया था कि यह सारी बातें उसे हरबंस बतानी थी, जिसे उसने सहायता करने का पूरा आश्वासन दिया था। घटना के दिन वह अपनी चोट के कारण चारपाई पर ही पड़ा था। वहीं से उसने देखा था कि एक व्यक्ति साहबी वेश में आकर उसे ले गया था। उससे बात करते समय तेजासिंह उसे इन्स्पेक्टर साहब कहकर पुकारता था। आगे वह नहीं जानता कुछ। हरबंस कब चली गई और उसे कौन आकर ले गया, इसका उसे पता नहीं। शाम हो जाने के बाद पुलिस की वरदी में एक व्यक्ति आया जो अपने सहारे तेजासिंह को ऊपर तक खींच लाया और शराब के तेज नशे की बात कहकर उसे कमरे में डालकर चला गया। आगे की बात पुलिस की रिपोर्ट में है।

शहर में इस घटना से दो-चार दिन सनसनी फैली रही। शरणार्थी-बस्ती में और भी भय छाया रहा। पुलिस न जाने सन्देह में किसे पकड़ ले? कुछ धनी शरणार्थी इस मामले में दिलचस्पी भी दिखलाने लगे और पुलिस की सहायता करने लगे कि किसी प्रकार अभियुक्तों का पता चल जाय। विश्वास के साथ हरबंस का कोई लगाव नहीं है, इस पर सभी को विश्वास था। बहुत पहले एक-दो बार हरबंस उसके साथ बाहर जाती देखी गई थी। इधर महीनों से वह उससे दूर ही रहती थी। बाहर जाती तो तेजासिंह साथ होता। होटल में जो व्यक्ति चाय पीने आते थे, उन्होंने भी उन दोनों के बीच कोई घनिष्टता नहीं देखी थी। तेजासिंह को तो शायद ही कभी उससे बातें करते देखा गया हो। पर विश्वास निर्दोष है, यह भी एकदम कोई कहने को तैयार नहीं था। और उसका अपना वहाँ कोई था भी नहीं जो दौड़-धूप करता और उसे जमानत पर छुड़वाने का प्रयत्न करता। जेल की कोठरी में बन्द विश्वास सोचा करता—यही भाग्य की विडम्बना है।

तेजासिंह को मार्ग से हटाकर वह हरबंस को पाना चाहता था। उसकी जो युक्ति थी, उसके अनुसार उस बदमाश को जेल में बन्द होना चाहिए था। हरबंस को उसने इसी षड्यन्त्र के आधार पर पाने का संकल्प किया था और उसकेदर्प को चूर करने की कसम खाई थी। किंतु सारा मामला पलट गया। अपराधी उससे भी चतुर निकला और बाहर से ही सारा काम बना लिया। अब उसकी छाया भी नहीं मिलेगी और उसके विरुद्ध सबूत कहीं दे दिया गया तो निश्चय उसे फाँसी पर झूलना पड़ेगा। उस समय उसकी आँखें भर आईं और सुमति की याद हो आई। एक स्त्री को छोड़कर दूसरी स्त्री पाने के लिए उसे जेल में बन्द होना पड़ा है। सुमति सुनेगी तो क्या कहेगी? वह बड़ी सुलझी स्त्री है। उसके दिये दण्ड को उसने सहन कर लिया है। और बिनी···उसका मोह जो उमड़ा तो वह आँसू टार कर रो पड़ा। नन्हीं सी बच्ची—बेगुनाह-निर्दोष, उसके प्रति वह इतना कठोर कैसे बन गया? और हर्ष···तुमने तो जीवन ही चौपट कर दिया। एक परिवार का सर्वनाश करने के तुम्हीं कारण थे। सुमति के विवाह हो जाने के बाद तुम उससे लगाव क्यों रखते रहे? फिर तो बीच में न आते। ज़ुल्मी, अब अपनी इच्छा पूर्ण कर। मैं तो चला, तू सुमति के साथ विलास कर। पर देख, मेरी बिनी को कष्ट न हो, नहीं तो मैं प्रेत बनकर तेरा गला घोट दूँगा। बिनी सुमति की नहीं, मेरी बेटी है, विश्वास की। मुझे हत्यारा चाहे भले ही कह लेना, पर मैंने न तो हत्या की है और न हरबंस का अपहरण। वास्तविक अपराधी कभी-न-कभी जरूर पकड़ा जायगा और तब सारा भेद खुलेगा। एक बार हरबंस से ज़रूर मिल लेना।

बाहर खट से किसी ने आवाज की। विश्वास की निर्जन कोठरी में वह प्रतिध्वनित होकर रह गई। देखा चारों ओर कहीं कोई नहीं था। सामने के पेड़ पर एक डाल सूख गई थी, उसे एक कैदी चढ़ा काट रहा था। कुल्हाड़ी की खट-खट की आवाज़ उसे अपने निकट होती जान पड़ी थी। उसकी विचारधारा बदल गई।

हरबंस हाँफती हुई तेज कदम रखती चली जा रही थी। हत्या का

भूत उसके सर पर सवार था। जरा-से संशय से वह जैसे लड़खड़ाने लगती थी। उसे यह मालूम था कि अब उस मकान में उस व्यक्ति के आने का समय हो गया है, जिससे बदमाशों का सरदार उसे ( हरबंस ) दूर रखना चाहता था। उसने एक हत्यारे से तो बदला ले लिया था, अभी दूसरा बाकी था और यह वही व्यक्ति था जो मकान में आने वाला था। बिजली कौंधने की भाँति उसके मन में आया, क्यों न वह पुलिस स्टेशन जाकर उस हत्या का सारा दोष उस व्यक्ति के सर मढ़ दे और मकान का पता दे दे। सदा के लिए यह झगड़ा मिट जायगा। वह अपनी बचकर निकल भागने की कहानी भी सुना देगी। उसमें एक बार फिर अदम्य साहस भर गया और वह सारा बल लगाकर वेग से पुलिस स्टेशन की ओर बढ़ गई।

जिसकी खोज करने के लिए पुलिस परेशान हो, वह स्वयं ही आकर उपस्थित हो जाय, तो पुलिस-विभाग के उत्साह का क्या ठिकाना? खूब बढ़ा-चढ़ाकर इस सबको लिखा जाता है। उसने जो-कुछ बताया उसके आधार पर पुलिस दल ने जाकर उस मकान को घेर लिया। संयोग से वह व्यक्ति अन्दर मिल गया। अभी आकर और अपने लीडर को मरा पाकर वह अपनी जीवन-रक्षा के लिए बचकर भागना ही चाहता था कि पुलिस दल वहाँ पहुँच गया था। हत्या के अभियोग में उसे रंगे हाथों पकड़ लिया गया। हरबंस गवाह थी, जिसने इस हत्याकाण्ड की सूचना दी थी। पूरा मसाला उसके विरुद्ध था। बचने की कोई आशा नहीं थी। जिस गिरोह की पुलिस तलाश में थी, यह लोग उसी दल के थे। उसके विरुद्ध हरबंस का अपहरण करने का अभियोग भी था। पुलिस ने शव को रिपोर्ट के साथ अस्पताल भेज दिया और अभियुक्त का चालान कर हवालात में बन्द कर दिया।

हरबंस के सामने अब प्रश्न था कि वह कहाँ जाय? पुलिस अफ़सर के पूछने पर उसने कुछ क्षण सोचा फिर बोली—'मैं शरणार्थी बस्ती में पहुँचा दी जाऊँ। वहाँ मुझे कई लोग जानते हैं। मैं वहीं रहकर आगे की बात सोचूँगी।'

पुलिस अफ़सर ने ताँगा मँगवा कर उसे दो कान्स्टेबिलों के साथ भेज दिया।

अभी उसे वहाँ से गये कुछ ही मिनट हुए होंगे कि हर्ष का ताँगा आ रुका। पुलिस अफ़सर से उसने इस घटना के विषय में जानना चाहा।

पुलिस अफ़सर ने उसे सर से पैर तक एक पैनी दृष्टि से देखा, फिर पूछा—'आपका यह सब जानने का मतलब क्या है?'

'मैं 'दर्पण' पत्र का सम्पादक हूँ और विश्वास मेरे मित्र हैं।'

पत्र-सम्पादकों और संवाददाताओं से लोग साधारणतया सशंकित रहते हैं। पुलिस वाले तो और भी अपनी आलोचना के कारण उनसे बचना चाहते हैं। बड़े सम्मान से उसे बिठाकर पुलिस अफ़सर ने सारी घटना का वर्णन विस्तार से किया, फिर पूछा—'आप एक बात बताएँगे?'

'क्या?' कहकर हर्ष उसका मुँह ध्यानपूर्वक देखने लगा।

पुलिस अफ़सर ने चश्मा उतारकर रख दिया, फिर अपनी छोटी-छोटी आँखों को चमकाकर सावधानी से बोला—'विश्वास अपनी स्त्री को साथ क्यों नहीं रखता? दोनों के बीच क्या खटपट थी?'

'मैं उसका मित्र जरूर हूँ, पर उसके घरेलू जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं रखता। आपके इस प्रश्न का उत्तर मैं नहीं दे सकूँगा।' हर्ष ने अपना पक्ष स्पष्ट करते हुए कहा।

पुलिस अफ़सर ने लापरवाही से कहा—'कोई बात नहीं। जब आप जानते ही नहीं, तो भला क्या बता सकते हैं? अच्छा, आपने हरबंस को देखा है?'

'हरबंस', उसने दोहराया पहले, फिर पूछा—'कौन हरबंस? लखनऊ में दो-एक बार विश्वास से मिलने मदन होटल गया जरूर, पर हरबंस को नहीं देखा। यह क्या उसी लड़की का नाम है जो भगाई गई है? कहाँ रहती थी? मैंने तो अखबार में पढ़ा है यह सब।'

पुलिस अफ़सर ने समझ लिया कि इस पत्रकार-जन्तु से वह पार नहीं पा सकेगा। विषय को आगे बढ़ाकर वह गर्व से बोला—'कल के अखबार

में जो पढ़ने को मिलेगा, वह इससे भी 'थ्रिलिंग' होगा। कहो तो बता दूँ ?'

हर्ष उसे जानने को उत्सुक था, किन्तु उससे भी अधिक वह यह जानना चाहता था कि विश्वास की जमानत हो सकती है या नहीं और पुलिस उसे कहाँ तक दोषी मानती है ? अपनी इस तीव्र और बलवती इच्छा को दबाकर उसने आन्तरिक दिलचस्पी उसकी बात में दिखाई, बोला—'क्या कोई इससे भी बढ़कर घटना हुई है ? लखनऊ के लिए यह कोई नई बात नहीं है। मैं अपने अखबार में लखनऊ के समाचारों में अधिकतर ऐसी ही रोमांचकारी घटनाएँ छापता था। यहाँ क़त्ल होते हैं, सो भी निराले ढंग से। इधर पिछले साल से प्रेम-कथाओं-सम्बन्धी कई मामलों में हत्याएँ कर दी गईं।'

पुलिस अफ़सर ने सिगरेट सुलगाई, फिर पूछा—'आप तो समाज-सुधारक लगते हैं, सिगरेट वग़ैरा तो पीते न होंगे ? चलिए, यह भी अच्छा है। हमीं लोगों को नरक में जाने दीजिये। हाँ तो सुनिये, एक ही केस में दो 'मरडर'। तीसरे को तय है फाँसी होगी और अभी गिरोह का पता ही चला है। असली 'कलप्रिट' तो मार डाला गया, नहीं तो और पता चलता। फिर भी धीरे-धीरे सब 'आउट' होता चलेगा। एक 'गैंग' है जो बड़े-बड़े शहरों में औरतों को 'किडनैप' करता है, फिर उन्हें·········
आप समझे न ? बाद में या तो बेच देता है या अड्डों में पहुँचा देता है।'

हर्ष को स्मरण हो आया। इसी दल के लोग उसे घेर ले गये थे और वे ही लोग सुमित्रा का अपहरण करने के लिए पीछे लगे हैं। उसे संतोष हुआ कि अब भय जाता रहा है। जब दल का मुखिया मार डाला गया है और दूसरा फाँसी पायेगा, तो शेष सब भी या तो पकड़े जायँगे, या भाग जायँगे।

उसने आश्चर्य प्रकट करते हुए पूछा—'दूसरी हत्या किसने की ?'

पुलिस अफ़सर मुस्कराया, बोला—'मरडर' जिसने किया है, वह मैं जानता हूँ। वह किया ठीक गया है और बड़ी 'करेज' का काम है। पर फँसा जो आदमी है, वह भी 'अक्यूज़्ड' है। अब तो वही 'मर्डरर' लिखा गया

है। अरे महाशय जी, दौड़ते-दौड़ते थक गया हूँ, पर अभी उसका खात्मा नहीं है।'

हर्ष ने कहा—'तब साफ़ बता दीजिये न ? अखबारों में जब छप जायगा, तब उसे छिपाने से क्या मिलेगा ?'

उसने बता दिया कि हरबंस खोज ली गई है। गिरोह के मुखिया का, जिसने तेजासिंह की हत्या कराई है, 'मरडर' हो गया है। उसका एक साथी, जिस पर हरबंस को भगाने का 'चार्ज' है, लाश के पास मकान में पकड़ा गया है। वह भागने के प्रयत्न में था। आगे अपने 'फ्रेन्ड' के बारे में सुनिये। हरबंस चाहे तो वह बच सकता है।'

'हरबंस कहाँ मिलेगी ?' हर्ष ने उतावली से पूछा।

'वह शरणार्थी बस्ती भेज दी गई है। आपके आने के कुछ पहले ही गई है।'

हर्ष प्रसन्नता से खिल उठा। हरबंस ने अपने बयानों में उसे बचा दिया तो सुमति का भाग्य! विधवा होने से बेचारी बच जायगी। नहीं तो कौन जानता है क्या होगा ? तेजासिंह की हत्या का अभियोग उस पर भी सिद्ध हो गया तो, फाँसी न हुई पर लम्बी जेल-यात्रा भोगनी पड़ेगी। सुमति इस आघात को कैसे सहन करेगी, इसे वह सोचने लगा।

पुलिस अफ़सर ने उसके मन की बात ताड़ ली, पूछा—'क्यों, सोच में पड़ गये ? विश्वास के लिए चिन्ता होने लगी है ? आप छिपाएँ चाहे जितना, पर मैं भी आदमी का 'मूड' समझता हूँ। आप 'जर्नलिस्ट' हैं, तो मैं भी पुलिस का आदमी हूँ। सोचते होंगे कि···।'

हर्ष को बताना पड़ा। उसने यह भी कहा कि सुमति ने ही उसे भेजा है। विश्वास को सब तरह से बचाना होगा।

तभी टेलीफ़ोन की घंटी बज उठी। रिसीवर उठाकर पुलिस अफ़सर उसे सुनने लगा। फिर उसे रखते हुए, खड़े होकर बोला—'जाइए, अपनी पैरवी कीजिए। मुझे सुपरिन्टेण्डेण्ट साहब ने बुलाया है।'

हर्ष पुलिस स्टेशन से बाहर निकल आया। खुली हवा में आकर उसने

अपने बोझ को बहुत हल्का पाया। विश्वास के लिए वह अपनी जान लड़ा देगा।

## २९

मन के अनेक स्रोत हैं, जिनके सहारे वह चञ्चल गति से दौड़ता रहता है। थमने का नाम नहीं लेता। स्रोत के लिए विश्राम नहीं है और न उसका कोई गन्तव्य स्थान ही है। जहाँ जिधर मार्ग पाता है, अपना पथ बना लेता है। मन की क्रिया भी ठीक वैसी ही चलती है। पल-पल पर परिवर्तन और नवीन मार्ग का अनुसरण उसे करना पड़ता है, इसलिए कि वह स्वच्छन्द है - बन्धन-हीन।

हर्ष शरणार्थी बस्ती की ओर क़दम बढ़ाये जा रहा था। पुलिस अफ़सर की बात चाहे झूठ ही हो, पर उसे विश्वास करना पड़ा था। हरबंस चाहे तो विश्वास निश्चय ही बच सकता है। विश्वास निर्दोष भी होगा, ऐसा उसका अनुमान था। हरबंस उसे तब क्यों अपराधी-दल में सम्मिलित करेगी? उससे मिलकर फिर वह जेल-अधिकारियों से भी मिलेगा और विश्वास से जेल में मुलाक़ात करने का प्रयत्न करेगा। हो सका तो जमानत पर छुड़ा भी लेगा। वह यह सब इसलिए करने जा रहा है कि सुमति को दुख न हो। परित्यक्ता होकर भी वह एक भारतीय नारी के नाते अपने पति की कुशल-क्षेम जानने को उत्सुक रहती है और उसे दुखी नहीं देख सकती। जेल में विश्वास बन्द रहे, यह उससे सहन नहीं होगा। उसने हर्ष से कुछ कहा नहीं इस सम्बन्ध में, पर वह उसके हृदय की बात तो जानता है। सुमति कितनी गहरी है, इसे हर्ष भली भाँति समझता है।

किन्तु—

और यह किन्तु एक प्रश्न-चिह्न सा बनकर उन दोनों के बीच आ खड़ा हुआ है। इस बार हर्ष को वह सब पता चल गया जिसे सुमति अब तक छिपाये थी। सुमित्रा ने एक दिन पीछे पड़कर उन दोनों के बीच उठ आने वाली दीवार के विषय में सुमति से पूछा था। सुमति उस व्यथा को दबाये थी। सब कुछ चाहा न बताए, किन्तु सुमित्रा का आग्रह जब आँसुओं का वेग बनकर बह निकला, तो उसे बताना पड़ा। उसने सब कुछ बताया। हर्ष से जो अपार स्नेह था, वह भी भीगती आँखों से बहा दिया और अन्त में उसने उस पत्र की भी चरचा की जिसे विश्वास ने उसे अन्तिम बार सम्बन्ध-विच्छेद करते हुए लिखा था। वह पत्र सुमति के पास नहीं है। उसे वह टुकड़े-टुकड़े कर पढ़ने के बाद ही जला चुकी है। सुमति ने सारी जीवन-गाथा सुनाकर कहा था—'मेरी कोई जिन्दगी बची है दीदी ? बेशरमी से जी रही हूँ। जो सत्य से तपकर प्रखर सूर्य की भाँति ज्योतित है, उसके चरित्र को कलंक लगाना क्या पाप नहीं है ? समाज में सबका उत्तरदायित्व है। उसे निभाना पड़ता है दीदी ! मैं तो सोचती हूँ कि बिनी को तुम्हें सौंपकर मैं अपना मुँह छिपा लूँ। जब कभी उन्हें मेरी याद आएगी और सत्य उन पर प्रकट होगा, तो शायद दो बूँद आँसू निकल पड़ें। बस वही मेरे लिए सब-कुछ होगा।'

सुमित्रा ने उसकी आँखों से बहते आँसू अपने अंचल से पोंछते हुए उसे वक्ष से लगा लिया, जैसे वह कोई अबोध बालिका थी। फिर बोली—'तुम ऐसी बातें करोगी सुमु, तो मैं अभी वापस चली जाऊँगी। मैं और कुछ तो कह नहीं सकती, केवल इतना जरूर कहूँगी कि तुम विश्वास बाबू से एक बार मिलो जरूर। उन्हें सारी स्थिति समझाने का प्रयत्न करो। कहो तो हम लोग भी लखनऊ चलें। उन्हें हर तरह से मनाना होगा। पुरुष तो ज्यादती करते ही रहेंगे सुमु, हम लोग उन्हें रोक नहीं सकतीं। अपने स्वाभि-मान को लेकर बैठे रहने से दोनों का जीवन नष्ट होता है। हमारा समाज विलायत का अनुसरण नहीं कर सकेगा, जहाँ स्त्रियों को आजादी तो है, पर

नारी की स्वच्छन्दता उसकी उच्छृङ्खलता के कारण उसे पतिता बना देती है। जीवन-साथी जहाँ नित्य बदलता रहता है। इसके पीछे भोग और आसक्ति की विषैली भावना व्याप्त है। वेश्यावृत्ति जैसी अपने देश में है...।'

सुमति सान्त्वना का शीतल स्पर्श पाकर नरम पड़ती जा रही थी, पर बीच-बीच में रो पड़ती थी। सुमित्रा के होठों पर उसने हाथ रख दिया, कहा—'बस करो दीदी, एक बात मानो मेरी'

'क्या ?' सुमित्रा ने पूछा।

'तुम हर्ष बाबू को ले लो। दूर ले जाओ मेरे जीवन से—बहुत दूर। मैं उन्हें दूर रहते हुए भी मन से नहीं निकाल पाती। यही मेरी सबसे बड़ी दुर्बलता है। तुम उन्हें ले जा सकती हो।'

'पर मैं भी तो विवाहिता हूँ सुमु।'

'तुम्हारा विवाह दीदी एक सामाजिक अत्याचार है। तुम तो स्वयं कह चुकी हो कि पुरुष ज़्यादती करता रहेगा। तुम उसकी दम्भपूर्ण इच्छाओं के लिए बलिदान तो हो गईं, पर वह दम्भ चूर-चूर हो गया। ऐसा का-पुरुष क्या कभी सामने आ सकता था ? मैं उसे विवाह नहीं मानती दीदी। तुम हर्ष बाबू को ले सकती हो।' कहकर वह सम्भलकर उठ बैठी।

सुमित्रा ने आगे कुछ कहा नहीं, जैसे सोच में पड़ गई।

सुमति ने कहा—'हाँ करो दीदी, मैं बिना कहलाए मानूँगी नहीं।'

सुमित्रा बोली—'और तू भी हाँ कर। लखनऊ जाना पड़ेगा विश्वास बाबू के पास और उन्हें मनाना होगा।'

'हाँ दीदी।' सुमति ने अपनी नारी को संयत कर कहा। बड़ी कठिनाई से उसे यह ग्राह्य हो सका था।

'अब मेरी स्वीकृति के लिए तू हर्ष बाबू से कह सुमु। मैं यह कैसे कहूँगी ?'

सुमति राजी हो गई।

उसी दिन अवसर निकालकर दोनों ने अपनी-अपनी बात हर्ष से कह दी थी। सुमित्रा ने जब यह कहा कि विश्वास ने उसके कारण ही सुमति

का परित्याग कर दिया है और उस पत्र का सारांश बताया, तो वह सिवा पश्चाताप के और कुछ न कर सका था। उसे जो सबसे अधिक क्लेश दे रहा था, वह सुमति का इस स्थिति को अब तक छिपाए रखना था। यों विश्वास की उदासीनता को वह जानता था, पर वह एक पत्र में यह सब स्पष्ट कर देगा, इसकी उसे आशा नहीं थी। सुमित्रा ने उससे शपथ ले ली थी कि वह सुमति से इस सम्बन्ध में कुछ नहीं कहेगा। लखनऊ जाकर सुमति को विश्वास से मिला देने का भार भी उसने ले लिया था। यह निश्चय हुआ था कि एक-दो दिन में सारे लोग लखनऊ जायँगे।

और हर्ष ने जब पूछा कि सुमति ने भी तुम्हारे लिए कुछ कहा है, तो सुमित्रा वहाँ से लजाकर चली गई थी। जाते-जाते एक बार हर्ष की ओर उसने कुछ इस प्रकार देखा था, जिससे वह रोमांचित हो उठा था। 'सुमित्रा—मेरे जीवन की स्फूर्ति सुमित्रा, तुम्हें पाकर मैं कुछ और पाने की अभिलाषा नहीं करता। आओ, मैं अपने पंखों पर बादलों के समूह में उड़ा जा रहा हूँ। तुम भी मेरे साथ स्वच्छन्द आकाश में उड़ चलो···और···अरे! वह क्या कविता करने लगा है? कल्पना का सहारा छोड़कर ठोस धरती पर उतर हर्ष। संघर्ष करना पड़ेगा।

खट। फुटपाथ पर एक उखड़ी हुई ईंट से हर्ष का जूता टकरा गया। जो कुछ व्यतीत था, वही अब तक उसे स्मरण आता रहा था। वह हरबंस से मिलने जा रहा है, विश्वास को बचाने के लिए। और विश्वास है कि उसके कारण सुमति को छोड़ चुका है। उसके विरुद्ध इतना गम्भीर आरोप लगा दिया उसने? मन का कल्मष धोने के स्थान पर और भी गाढ़ा कर लिया। चलो, हरबंस से पता चलेगा। सुमति को परित्याग करने का कारण और भी हो सकता है। वह हरबंस से सारी स्थिति स्पष्ट कर देगा और सुमति की मुलाकात विश्वास से जेल में क्यों न करा दी जाय? इस समय वह भी अपने कृत्यों पर, अपने व्यतीत पर विचार रहा होगा। सुमति को वह भावातिरेक में आकर ग्रहण करने की बात सोच सकता है। अपने अपराध की क्षमा माँग सकता है। नियति ने कुछ ऐसा संयोग उपस्थित किया

है, जो दुरूह तो है पर साहस से काम लेने पर जिसका परिणाम शुभ हो सकता है। फिर रहेगी सुमित्रा, होगा देखा जायगा। तुम अजीब हो जी हर्ष? साथ-साथ अपनी भी बनाते चल रहे हो? तुम्हारी जिन्दगी का तार तो अब जुड़ने वाला है। ज़रा धैर्य से काम लो।

उसने माथे का पसीना पोंछा। यह शरणार्थी बस्ती भी इतनी दूर बसाई गई है, कि जाते-जाते पैर थके जाते हैं। चले चलो भाई, काम सबका है। यह घटना-क्रम सारे तथ्यों को प्रकाशित कर रहा है। जो सत्य है, वह सोने की भाँति खरा होकर निकल आये।

सामने के पेड़ के पास से सड़क मुड़ती थी। मदन होटल इसी सड़क पर था। दिखाई दिया—दरवाजे-खिड़कियाँ सब बन्द हैं। कोई आता-जाता नहीं दिखाई पड़ता। उसके पास से दो व्यक्ति बातें करते निकल गये। 'मदन होटल में पुलिस का ताला पड़ा है। अब तो कोई दूसरा इसे चलाएगा। चलो, हम लोग कोशिश करें लेने की।' हर्ष सुनता हुआ आगे बढ़ गया। पुलिस अफ़सर ने जिसका पता दिया था, उस दरवाजे पर खोजता हुआ वह पहुँच गया।

मकान मालिक के ऊटपटांग और बेढंगे प्रश्नों से हर्ष ऊब उठा। उसने अपना परिचय दिया, अपनी ओर से विश्वास दिलाया और हर प्रकार से अपने आने के कारण का महत्त्व समझाया। तब कहीं वह हरबंस को बुलाने को राजी हुआ। कमरे में दोनों आमने-सामने आकर बैठ गये। हर्ष ने पूछा—'आप तो मुझे पहचान गई होंगी? मैं आपके होटल में कई बार आ चुका हूँ।'

हरबंस ने रुखाई से उत्तर दिया—'मुझे तो ख़याल नहीं पड़ता कि आपको देखा हो। कहिये, क्या चाहते हैं मुझसे?'

हर्ष बड़ी आशा लेकर आया था। हरबंस कम-से-कम उससे ठीक प्रकार से बातें तो करेगी। उसने चाहा कि वह उसके उदासीन होने का कारण पूछे, पर वह सोचने लगा कि कहीं हरबंस और भी खीझ उठी, तो वह उस बात को भी नहीं कह सकेगा, जिसके लिए आया है। उसका

रूखा होना स्वाभाविक भी है। तेजासिंह की हत्या कर डाली गई है। उसका अपहरण कर लिया गया था। वहाँ जो कुछ बीती होगी, इसे वही जानती है। फिर भी वह जीवट की युवती है जो अपना प्रतिशोध ले चुकी है। वह थकी जान पड़ती है। उसे आराम करने की जरूरत है। तभी किसी से मिलना पसन्द नहीं है।

उसने कहा—'आप थकी लगती हैं। मैं पुलिस स्टेशन से आ रहा हूँ। मुझे सारी बातें पता चल गई हैं। मैं निजी रूप से आपको बधाई देने आया हूँ, स्वीकार करें। आप अब आराम करें कुछ दिनों। माता-पिता सदा किसी के नहीं जीवित रहते।'

हर्ष की बातों ने उसे ढाढ़स तो दिया साथ ही हिम्मत भी बँधाई। उसने अपने मस्तक पर पड़ जाने वाले बल को मिटाकर प्रकृतिस्थ होकर कहा—'आप ठीक कहते हैं। पर मैं जाऊँ कहाँ, यह प्रश्न मेरे सामने है। बिना सहारे जो हूँ। पर आपको इस सबसे क्या लेना है? आप अपना मतलब बताइये न?'

हर्ष ने उसे अनुतप्त पाकर सहानुभूति के दो शब्द और कह दिये—'मैं आपकी क्या सहायता कर सकता हूँ, वह बताइये? मेरी राय में आप विवाह कर लें। घर बस जायगा, तो सब ठीक हो जायगा। आपको पिछला जीवन, जिसमें दर्द और व्यथा भरी है, फिर दुखी नहीं करेगा। मैं अपनी बात भी बता दूँगा।'

हरबंस पिघल उठी—'ब्याह—कौन करेगा मेरे साथ ब्याह? अखबारों में सारा मामला छप चुका है और जो बचा है वह अदालत मे खुल जायगा। मुकदमा पूरा चलेगा। सारी बातें भरी अदालत में कहनी पड़ेंगी।' कहकर वह गम्भीर हो उठी।

हर्ष ने उसे और कुरेदना ठीक नहीं समझा। अपनी बात कहता हुआ बोला वह—'मैं विश्वास की भीख आप से माँगने आया हूँ। उसकी पत्नी है सुमति, एक बच्ची है बिनी। उनके जीवन को बरबाद होने से आप रोक सकती हैं। विश्वास को आप अपने बयानों में निर्दोष बता दें। वह अदालत

से छूट जायेगा। आप उस पर दया न भी करें, तो उसकी पत्नी और पुत्री पर करें। वे बेसहारे, अनाथ हो जायँगी।'

विश्वास का नाम लेते ही हरबंस जैसे चिहुँक उठी, बोली—'माफ़ कीजिये मैं आपकी सहायता न कर सकूँगी। विश्वास ठीक आदमी नहीं है। अपनी औरत छोड़कर दूसरी औरतों के पीछे क्यों फिरते हैं? आप नहीं जानते। विश्वास बाबू किस तरह के आदमी हैं। मैं उन्हें कुछ-कुछ समझ गई हूँ।' कहकर उसे वह घटना स्मरण हो आई, जब विश्वास उसे पाने के लिए बेचैन हो उठा था। फिर उसे नाव वाली घटना स्मरण हो आई। उस दिन वह यदि दृढ़ न बनी रहती तो उसका पतन होना निश्चय था। विश्वास एक बार उसे पाकर फिर अनेक बार की कामना करता और उसका जीवन नरक बन गया होता। ऐसे ही कहीं विवाह भी हो जाता तो वह सुमति के समान ही उसे भी एक दिन घर से निकाल देता। जिसका कोई चरित्र नहीं है, जो नारी के रूप का प्यासा है, उसका जीवन ऐसा ही बीतता है। अनेक अप्रत्याशित घटनाएँ घटा करती हैं। और ऐसे ही उसे कमरे वाली घटना भी याद हो आई जब विश्वास को तेजासिंह ने पीटा था।

हर्ष समझ चुका था कि विश्वास ने हरबंस को पाने की चेष्टा की होगी और तभी उसे हैरान भी किया होगा। उसमें प्रतिशोध की भावना जब इतनी बलवती होकर जाग्रत हो चुकी है कि वह तेजासिंह की हत्या का प्रतिकार ले चुकी है तो विश्वास के प्रति वह सदय क्यों बने? फिर भी सारी बातें वह हरबंस से ही सुनना चाहता था, बोला—'विश्वास मेरा मित्र है। मैं उसे बहुत निकट से जानता हूँ। उसके विवाह में मेरा हाथ था। मैं उसे ऐसा जानता तो सुमति से ब्याह न होने देता। पर समय के साथ मनुष्य का स्वभाव, उसका व्यवहार, रुचि सभी बदलती रहती है। उसने वास्तव में आपको परेशान किया है, तो मैं उसकी ओर से आपसे माफ़ी माँगता हूँ। आप चाहें तो सुमति भी आपसे अपने पति की गलतियों के लिए माफ़ी माँग लेगी।'

हरबंस के विचारों की कटुता उसके मुख के भावों में परिवर्तन होने के

साथ विलीन होती जान पड़ी। अपने स्वर में नम्रता लाकर वह बोली—'आप की यह बात मैं माने लेती हूँ हर्ष बाबू। आप अखबार-नवीस हैं। मुझसे बहुत ज़्यादा जानते हैं, पर आप विश्वास से मिलकर पूछिये कि उसके मन में मेरे लिए क्या था? अब मैं आपको उस सबको क्या बताऊँ? उन्होंने मुझे गढ़े में ढकेलने के लिए क्या नहीं किया? आपको औरत के मन की एक बात बताऊँ। हज़ार कोशिशें भी उसे नहीं जीत सकतीं, पर एक मामूली बात उसे अपना सब-कुछ सौंप देने को तैयार कर देती है। इसके लिए जल्दबाज़ी नहीं की जाती हर्ष बाबू, मन टटोलना पड़ता है। मैं नहीं जानती कि आदमी अपने में जो कुछ आता है, उसे तो करने के लिए ज़मीन-आसमान एक कर देता है, पर दूसरे के मन को क्यों नहीं समझना चाहता? औरत इस सबमें आदमी से कम नहीं। बस विश्वास बाबू अपने ऐसे और लोगों की तरह यही गलती करते रहे। अरे, आप कहने लगेंगे कि मैं आपको उपदेश देने लगी। नहीं जी, ऐसा कुछ भी नहीं। आप भला माफ़ी क्यों माँगते हैं? उन्हें तो वैसे भी सज़ा मिल रही है। अपना सब कुछ गँवा दिया, बदनामी उठाई, सच या झूठ यह बाद की बात है। जेल में बन्द होना पड़ा। यह थोड़ा नहीं है। सुमति का नाम एक बार उन्होंने मेरे सामने लिया था। मुझे उनसे मिलकर बड़ी खुशी होगी।'

हर्ष इस अवसर को जाने नहीं देना चाहता था। अभी तक जिस बात के लिए वह आया था, वह पूरी नहीं हुई थी। हरबंस और सब कहती थी, पर यह नहीं कहा कि विश्वास को बचा देगी। अदालत में उसके विरुद्ध कुछ नहीं कहेगी। वहीं पर लौट आकर उसने कहा—'तो आप विश्वास को मुक़दमे से अलग रक्खेंगी न? हम लोग जीवन-भर···।'

हरबंस मुस्करा पड़ी। बोली—'आप बड़े ढंग से अपनी बात कहते हैं। मैं आपको जवाब बाद में दूँगी, पहले यह बता दीजिये कि आप विश्वास और सुमति में से किसे अपना समझते हैं? विश्वास आपका दोस्त है और सुमति·······उससे आपका परिचय है या नहीं?'

हर्ष असमंजस में पड़ गया। क्या उत्तर दे? हरबंस ने उसे ऐसी

स्थिति में ला रखा है कि सहसा उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दिया जा सकता। विश्वास तो एक प्रकार से उसके लिए कुछ भी नहीं है। वह तो उसे अपना प्रतिद्वन्दी मानता है। इसीलिए सुमति का परित्याग कर दिया है और सुमति, उसके जीवन की राशि, उसका उत्साह, उसकी प्रेरणा सब-कुछ थी, पर अब वह पराई है। हर्ष और प्रफुल्लता के स्थान पर वह संकुचित और दुर्निवार दुख-दैन्य से पीड़ित है। उसके शुष्क जीवन में वह सरिता का कलकल निनाद कैसे ला सके, इसीलिये वह घुला जाता है। उसका अपना कहीं घर-द्वार नहीं है। एकदम अकेला है। फिर भी चिन्ता खाये जा रही है। सुमति का यही शिकायत लेकर बैठते मन नहीं भरता।

उसने कुछ क्षण और सोचा, फिर कहा—'आपसे क्या झूठ बोलूँ? मैं सुमति के लिए ही विश्वास की रक्षा की प्रार्थना आपसे कर चुका हूँ। मुझे आशा है कि वह अब रास्ते पर आकर सुमति को फिर स्वीकार कर लेगा। आप इसमें मेरी सहायता भी कर सकती हैं। विश्वास को मैं जमानत पर छुड़ाकर लाने के बाद आप के पास लाऊँगा। आप चाहें तो उससे·······।'

'हर्ष बाबू, मुझे मत घसीटिये उसमें। यह आपस का मामला है और फिर आप तो हैं ही।'

हर्ष ने चाहा कह दे कि उसके कारण ही तो यह मनोमालिन्य पैदा हुआ है, पर कहा नहीं।

हरबंस बोली—'अब आराम करने दीजिए। आप भी थके होंगे। आप जो कहेंगे वही मैं करूँगी।'

हर्ष उठकर चलने लगा। बाहर तक आया तो हरबंस ने पुकारकर कहा—'अरे सुनियेगा। हो सके तो हिन्दी का कोई नावेल भिजवा दीजिएगा। विश्वास बाबू ने मुझे हिन्दी सिखाई थी।'

हर्ष स्वीकृति में सर हिलाकर चला गया।

## २७

होटल में आकर हर्ष सोचने लगा कि उसे क्या करना चाहिए ? बनारस से चलने के बाद से अब तक वह निरन्तर दौड़ता रहा था। हरबंस उसकी बात मानने को तैयार हो गई है, यह आश्वासन पाकर वह अपने ऊपर आए उत्तरदायित्व को जैसे और कम होता अनुभव करने लगा था। उसने आलस्य छोड़कर एक पत्र प्रसन्न के नाम लिखा, जिसमें सारी स्थिति का विस्तार से वर्णन किया और अन्त में लिखा कि उसे तार देने की आवश्यकता पड़ेगी, सब लोग आने को तैयार रहें। सुमति का आना सबसे जरूरी है।

दूसरे दिन दोपहर के बाद प्रसन्न को पत्र मिला। वह खाना खाने के बाद अखबार पढ़ने जा रहा था कि बिनी लिफ़ाफ़ा लेकर दौड़ती हुई चली आई। सुमित्रा पड़ोस में रहने वाली एक बंगालिन के यहाँ चली गई थी। सुमति उसके साथ नहीं गई थी। वह गृहस्थी के काम से फ़ुरसत ही नहीं पाती थी। दूसरे उसका हृदय कह रहा था कि आज हर्ष का पत्र जरूर आएगा। कल सब लोग प्रतीक्षा में रहे। रात में देर तक विश्वास को लेकर बातें होती रहीं। सुमति अपने विवाहित जीवन के अनुभव सुनाती रही। पति-पत्नी के बीच जब मन न मिलने की समस्या आ खड़ी होती है, तो पत्नी को मानसिक क्लेश सहना पड़ता है, उस सबको वह बताती रही। प्रसन्न और सुमित्रा दोनों ही इस अनुभव से शून्य थे। एक की पत्नी नहीं थी और दूसरे ने पति का मुँह भी नहीं देखा था। जीवन के दो पहलू थे उन दोनों के, जो पास आकर भी अलग-अलग थे। नदी के दो किनारों के समान, जो कहीं-कहीं पर निकट आकर भी दूर-दूर बने रहते हैं। सुमित्रा ने पूछा था—'क्यों सुमु, एक बात का उत्तर दोगी ? क्या तुम्हें विश्वास है कि वे हत्या कर सकते हैं ?'

सुमति बड़ी देर तक शान्त बनी रही थी, फिर धीरे से बोली थी—'वे सभी कुछ कर सकते हैं दीदी। उन्हें मैं पहचान गई हूँ।' फिर उसने एक पूर्व-घटना सुनाई थी जिसमें विश्वास ने अपने चारित्रिक पतन का वह चित्र उपस्थित किया था कि उसे सुनकर प्रसन्न और सुमित्रा दोनों ही अवाक् रह गए थे। और वह घटना इस प्रकार थी कि इसी बनारस वाले मकान में एक दिन उनका एक मित्र आया था। बड़ा हँसमुख, सुन्दर युवक था। किसी दवाइयों की कम्पनी का एजेन्ट था। उसकी सेवा-सत्कार में सारा दिन लग गया। वह थककर चूर हो गई थी। शाम को दोनों घूमने चले गये। प्रतीक्षा करते-करते वह सो गई। अब दरवाजे पर खटपट होने से वह जागी। चटखनी खोली—देखा अकेले वह मित्र भीतर घुस आया है। बिनी के पापा नहीं हैं। बिनी तब छः महीने की हो चुकी थी। पूछना पड़ा कि वे कहाँ रह गए हैं? उस युवक ने अपनी लाल-लाल आँखों से उसकी ओर घूरा। वह नशे में था। शायद आपा खो चुका था। कमरे में दोनों के लिए चारपाइयाँ बिछा दी गई थीं। अपने लिए रसोईघर में प्रबन्ध कर लिया था। वह बोला कि विश्वास बाबू नहीं आएँगे। उन्होंने मुझे भेज दिया है। वह अपनी प्रेमिका के यहाँ रहेंगे। फिर दो चारपाइयों को पास-पास बिछा देखकर हँसता हुआ बोला वह,—'बड़ी होशियार हो सुमति, यही नाम है न तुम्हारा? विश्वास ने बताया था। आज की रात···उसे हिचकी आ गई। आज की रात कितनी खूबसूरत है? हम लोग नाव पर सैर कर आए हैं। तुम चलो मेरे साथ। घर में ताला लगा दो। विश्वास सबेरे के पहले नहीं आयेगा। उसने कहा है कि तुम उससे संतुष्ट नहीं हो। हर्ष··· कौन हर्ष है? मुझसे भी बढ़कर सुन्दर?' कहकर वह आगे बढ़ा। उसके पैर लड़खड़ा रहे थे।

प्रसन्न और सुमित्रा मूक चित्रलिखित से एक-दूसरे की ओर और फिर सुमति की ओर देख रहे थे। उनके रोम-रोम में कम्पन व्याप्त हो गया था। सुमति यह आज क्या सुना रही है? विश्वास क्या इतना नारकीय जीव है? उसी से क्षमा-याचना करने के लिए सुमित्रा ने सुमति से शपथ लेने को

कहा है ? हे भगवान् इस धरती पर इस प्रकार के प्राणियों को तू जन्म क्यों लेने देता है ? सदैव के लिए उन्हें जलती आग में क्यों नहीं झोंक देता ?

सुमति निश्चल भाव से आगे कहती गई—'मैंने कहा तुम्हें शरम नहीं आती ? तुम उनके दोस्त नहीं हो। तुमने उन्हें शराब पिलाकर कहीं डाल दिया है और अब मुझे लूटने आए हो। मैं शोर मचाऊँगी।'

'उस युवक ने अपनी पैण्ट की जेब से रिवाल्वर निकाल कर मेरी ओर बढ़ाया। मैं काँप उठी। उसने गिरकर सम्भलते हुए कहा—बोलो, तुम अपने पति की आज्ञा नहीं मानोगी ? मेरी कोई बात मत मानो। शराब के दाम उसी ने दिए हैं। कल पूछ लेना। मैं यहीं रहूँगा।'

सुमति ने कहा कि उसके सामने कोई चारा नहीं था। आत्म-समर्पण करने के लिए वह मजबूर हो रही थी। पर उसे एक युक्ति सूझ पड़ी। जो अकलंकित है, जिसका चरित्र दर्पण की भाँति निर्मल है, उसका विवेक सदैव उसका साथी रहा है। मैंने कहा—'तुम ठहरो थोड़ी देर। मेरी बच्ची है न बिनी, उसे मैं रसोईघर में लिटा आऊँ, फिर आऊँ। नहीं तो वह रात में······आगे मैं नहीं कह सकी। मन मे यही समाया था कि इस पापी के टुकड़े-टुकड़े कर डालूँ। मैं जैसे जलने लगी थी।'

'उसने इस प्रस्ताव को बेहद पसन्द किया। खुशी में वह सम्भल न पाकर चारपाई पर गिर पड़ा और दूर से ही मेरी ओर अँगुलियाँ उठाकर फिर उन्हें चूमने लगा। मैं बिनी को उठाकर कमरे से तत्काल बाहर चली गई। उसे रसोईघर में लिटाकर चुपके से कमरे का दरवाजा बाहर से बन्द कर लिया फिर कसकर चटखनी लगा दी। उसके बाद रसोईघर में जाकर उसका दरवाजा भी भीतर से बन्द कर लिया। मेरी साँस जोर-जोर से चल रही थी और मैं पसीने से जैसे नहा गई थी। कुछ देर बाद मैंने सुना वह चिल्ला रहा है। दरवाजे खटखटा रहा है। मैं नहीं बोली। बोलने का मन नहीं हुआ। रात के सन्नाटे में मुहल्ले वाले उसे सुनते तो क्या होता ? थोड़ी देर बाद वह भी शान्त हो गया।' सुमति यह सब सुनाते समय विच-लित नहीं हुई थी। उसे समाप्त करने के बाद सुमित्रा से लिपटकर एकाएक

रो पड़ी, बोली रुँधे कण्ठ से—'मेरे जीवन की कहानी सुनी दीदी ? कहीं पर भी कुछ है इसमें जहाँ मैं खड़ी हो सकूँ ? आज मैं क्या हूँ ? पुरुष आखिर यह क्यों सोचता है कि वह प्रत्येक स्त्री के लिए उपयुक्त है ? सारी स्त्रियाँ उसे चाहती हैं, उसकी ओर आकर्षित हैं ? और जब तक यह नहीं होता तो बल से किसी की प्राप्ति उसे पाना नहीं है।'

रात गहरी हो चली थी।

सुमति ने अब तक इस घटना की चर्चा हर्ष से भी नहीं की थी। आगे कहा उसने—'अब बोलिए, वे क्या हत्या नहीं कर सकते ? प्रसन्न भइया, पुरुष मे असम्भव क्या है ? जहाँ वह वीरता और साहस के अपूर्व कार्य कर सकता है, वहीं नीचता और पशुता के घोर निन्दनीय कार्य भी कर सकता है।'

प्रसन्न का मुँह सफेद पड़ गया था। उसको लग रहा था कि यह सारा कलंक, यह सारी कालिख उसके ही मुँह पर लग रही है। वह पुरुष समाज का एक अंग है। उसे, जब उस समाज का प्रतिनिधित्व करने का अधिकार है तो वह उस कलंक में भी भागी बनने को बाध्य है। उसके मुख से कुछ भी नहीं निकल सका। सुमति प्रसंग की इति करती हुई बोली—'तुम प्रसन्न भइया सोच में मत पड़ो। तुम-सा व्यक्ति दूसरा कौन हो सकेगा ? तुम्हारे-जैसे लोगों से ही इस पृथ्वी का भार रुका है नहीं तो वह···।'

सुमित्रा ने उसे चुप करते हुए कहा—'अब सोओ सुमु। फिर जन्म पाते समय भगवान् से कहूँगी कि मुझे पुरुष बना, जो मैं सारे समाज का कोढ़ दूर कर सकूँ।'

सुमति लेटते-लेटते बोली—'तब तुम भी दीदी औरों की भाँति जुल्म ढाओगी। अपने मन की तृप्ति पाने के लिए रात-दिन नारी को घसीटोगी, उसे डराओगी, मौत की धमकियाँ दोगी।'

प्रसन्न ने केवल इतना कहा—'मुझे सोचने दो सुमति। मेरी दशा पर दया करो।'

सब लोग फिर चुप हो गए थे।

सबेरे सोकर उठने के बाद प्रसन्न का मन भारी था, पर सुमति वैसी ही चपलता से दौड़-दौड़कर काम कर रही थी। सुमित्रा के मुख पर भी गम्भीरता छाई थी। सुमति ने जानकर भी फिर बात नहीं बढ़ाई। चाय के प्रबन्ध में लगी रही।

प्रसन्न चाय पीकर सुमित्रा के साथ अपने एक संगीतज्ञ मित्र से मिलने चला गया, और सुमति नहा-धोकर रसोई के काम में लग गई। अखबार आया पड़ा रहा। उसे उठाकर देखने का अवकाश नहीं मिला।

प्रसन्न और सुमित्रा फिर दोपहर में लौटे। इच्छा न होते हुए भी संगीत-सभा जुड़ गई थी। समाप्त होते-होते उतना समय बीत गया। खाना खाकर वह खिड़की के पास कुरसी डाल कर बैठ गया था। पड़ोस में रहने वाली बंगालिन कई दिन से सुमित्रा को बुला रही थी। आज आकर पकड़ ले गई थी। फिर वहाँ से उसने मति को भी बुला भेजा। केवल बिनी बरामदे में खेलती रही। प्रसन्न अखबार पढ़े कि हर्ष का पत्र आ गया। अखबार एक ओर रखकर लिफ़ाफ़ा खोलकर वह पढ़ने लगा। तेजासिंह की हत्या के बाद ही जो दूसरी हत्या हुई थी उसका समाचार उसने विस्तृत रूप से दिया था। हरबंस के मिल जाने तथा उससे मिलकर बात करने से जो निर्णय निकला था, उसको भी उसने लिखा था। अखबार के लिए उसने लिखा था कि नियमित रूप से पढ़ने की जरूरत है। दूसरी घटना का समाचार भी प्रकाशित हो चुका है, वह पढ़ले। अब विश्वास से जेल में मुलाक़ात करनी है। हरबंस ने उसे बचाने का वचन दिया है। आदमी विश्वास एकदम बुरा है। हरबंस को भी फाँसना चाहा था। अपनी उमर तो देखता नहीं, बस जहाँ किसी युवती को देखा कि फिसल पड़ा। मन पर काबू पाना मुश्किल हो जाता है। पर इस बार जीवन का सौदा है। हरबंस ने कहीं बयान दे दिये तो लम्बी सजा पा जायगा। मैं इसी शर्त पर बचाने की बात करूँगा कि वह सुधर जाने की प्रतिज्ञा ले ले। सुमति को फिर से ग्रहण कर ले। अभी स्थिति गम्भीर होते हुए भी अधिकार से बाहर नहीं है। तुम भी लखनऊ आकर उसे समझाना। फिर पुनश्च कर लिखा था कि सुमति को

वह समझाता रहे, सुमित्रा उसका मन बहलाती रहे और जब वह उसके साथ आए तो उसके बक्स में से हिन्दी के तीन-चार उपन्यास लेता आए। हरबंस ने माँगे हैं।

पत्र को समाप्त कर उसने लिफ़ाफ़े में रख दिया, फिर अख़बार उठाकर देखने लगा। मुखपृष्ठ पर उसने दृष्टि नहीं डाली। इस समय उसके लिए जो संवाद सबसे अधिक रोचक था और जिसे जानने के लिए वह उत्सुक था, वह लखनऊ की बाद वाली घटना थी। उसने पृष्ठ लौटकर पढ़ा—समाचार इस बार बड़ा था जो पूर्व घटना के प्रसंग सहित दिया गया था। बदमाशों के सरदार की हत्या का वर्णन दिया गया था जिसमें उस मकान का भी पता-ठिकाना था जहाँ से उसका शव पाया गया था। उसी मकान में पुलिस ने रंगे-हाथों उस दल के एक व्यक्ति को भी पकड़ा, जिस पर हत्या करने का सन्देह किया जाता है। अभी इस सम्बन्ध में और भी छान-बीन की जा रही है। आशा है कि दल के सारे लोग पकड़ लिए जायँगे। इनका अड्डा लखनऊ में यह मकान था। और भी शहरों में पुलिस पता लगा रही है। जिस लड़की का अपहरण किया गया था, वह भी मिल गई है। अब तेजासिंह नाम के मदन होटल के प्रोप्राइटर की हत्या का भी पता चलेगा। ऐसा—अनुमान किया जाता है कि जिस व्यक्ति की गिरफ़्तारी की गई है उसका इन दोनों हत्याओं और हरबंस के अपहरण करने में पूरा हाथ है।

प्रसन्न ने बिनी से सुमित्रा और सुमति को बुला लाने के लिए कहा। वह दौड़ गई। उसने हर्ष के पत्र को खोलकर एक बार फिर पढ़ा। उसने एक स्थान पर, जहाँ पर बदमाशों के सरदार की हत्या करने का समाचार दिया था, यह भी लिखा था कि बनारस में जो व्यक्ति उसे पूछने आया था, या जो लोग सुमित्रा को ले जाना चाहते हैं, वे सब इसी दल से सम्बन्धित हैं जिसका सरदार मार डाला गया है और दूसरा व्यक्ति पकड़ लिया गया है। उसने लिखा था कि पुलिस अफ़सर को यह सारी बातें उसने बता दी हैं, और वह बनारस से लेकर इलाहाबाद तक पुलिस की कार्यवाही करवायेगा। ऐसा भी हो सकता है कि मामला सी० आई० डी० को सौंप दिया जाय।

सुमित्रा अब अपने मन से सारा भय निकाल दे।

उसने दूसरी बार पढ़ने पर इस पर ध्यान दिया। पहली बार विश्वास के विषय में जानने की उत्सुकता में उसी से सम्बन्धित अंश पर उसने दृष्टि दौड़ाई थी। पत्र बड़ा था जिसमें हर्ष ने राजनीति, समाज-सुधार, महिला जाग्रति सभी पर अपनी क़लम चलाई थी, और वह शायद यह भूल गया था कि वह पत्र लिख रहा है न कि 'दर्पण' के लिए किसी घटना पर टिप्पणी।

सुमित्रा भागती हुई पहले आई। सुमति विनी के साथ पीछे रह गई थी। उसके पैर वैसे भी उतनी तेज़ी से नहीं पड़ रहे थे जितने सुमित्रा के। विश्वास के विषय में सबसे बड़ा समाचार वह सुन ही चुकी थी। उससे अधिक महत्त्वपूर्ण तो यही हो सकता है कि हत्या के अभियोग में निर्दोष समझकर छोड़ दिया गया है। वास्तविक हत्यारा गिरफ़्तार कर लिया गया है। पर इस पर उसे विश्वास नहीं हो रहा था। उसने अपने हाथों से नहीं, तो दूसरों के द्वारा हत्या करा दी होगी।

उसके आ जाने पर प्रसन्न ने सुमित्रा को हर्ष का पत्र दे दिया, फिर कहा—'पढ़ने के बाद सुमति को दे देना। वह भी पढ़ ले। अखबार भी पढ़ लेना। कभी-कभी कोई घटना ऐसी होती है कि न तो उसकी जटिलता समझ में आती है और न सहज ही उसके विषय में यह अनुमान लगाया जा सकता है कि आगे क्या होगा? कौन जानता था कि तेजासिंह की हत्या के साथ ही बदमाशों के सरदार को भी ठिकाने लगा दिया जायगा, जो इतना दुष्कर कार्य है कि सुनकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। सुमति, तुम तब तक अख़बार पढ़ो। यह देखो, यह रहा संवाद। हर्ष हरबंस से मिल आया है। वास्तव में तो उस बदमाश को उसी ने मारा है, पर दोष उसी के एक साथी के सर मढ़ दिया गया। पाप का घड़ा ऐसे ही फूटता है। भविष्य को कोई जान पाता तो इन अत्याचारियों का अन्त नहीं हो पाता। ईश्वर की······।'

'पत्र पढ़ूँ या तुम्हारा भाषण सुनूँ?' मित्रा ने बीच ही में उसे रोक-

कर पूछ दिया।

प्रसन्न हर्षित मन था, रुका नहीं, बोला—'पगली हो सुमित्रा। पढ़ तो होठों से रही हो, आँखों का सहारा लिए हो और सुन कानों से रही हो। सब का एक मन और मस्तिष्क से सम्बन्ध है, यह मैं जानता हूँ, पर भई मेरी सुने चलो। चाहे दूसरे कान से बाहर निकालती जाओ। हर्ष ने जाते-जाते जादू कर दिया सब पर। पुलिस अफ़सर, हरबंस, जेलर सभी उसकी बातें मान गये। अब विश्वास से जेल में मुलाक़ात कर ले तो आगे का क़दम यह होगा कि हरबंस के बयानों से ही उसे मुक़दमे से अलग कर लिया जायगा। अदालती कार्यवाही होती रहेगी।'

सुमित्रा पत्र का जितना भाग पढ़ चुकी थी, उसका बहुत थोड़ा अंश उसकी समझ में आया था। उसने सुमति से कहा—'चलो जी, हम लोग उधर बैठेंगी चलकर। यहाँ ये बिना बोले चुप नहीं रहेंगे। वाह प्रसन्न भइया, आज तो नेता बन रहे हो। दूसरों की सफलता पर कहो तो मैं भी लम्बा लेक्चर झाड़ दूँ, पर काम वह जो स्वयं करके दिखाया जाय।' कहती वह सुमति को साथ लेकर वहाँ से चली गई।

प्रसन्न ने स्पष्ट समझ लिया कि सुमित्रा ने जो व्यंग किया है वह सीधा उस पर आधारित है। वह यहाँ बैठा-बैठा हर्ष के कार्यों की प्रशंसा कर रहा है और वह लखनऊ में दौड़ रहा है। हर्ष से उसका अपनापा जुड़ गया है, इसीलिए वह इतना कहने में समर्थ हो सकी है। ठीक है। उसका हर्ष सही। कहने दो उसे। हर्ष-विह्वल हो वह जो-कुछ न कह जाय, थोड़ा है। फिर मन में उसने कहा—'तुम सुखी रहो सुमित्रा, यही कामना है। हर्ष तुम्हें पारिवारिक जीवन का वास्तविक आनन्द दे सके, यह मैं सदा चाहूँगा। दो वस्तुएँ जो अपने-अपने स्थान पर अधूरी हैं, मिलकर पूर्ण हो जायँ।' उसने बिनी को पकड़कर गोद में उठा लिया। बार-बार उसका मुख चूमा, फिर पूछा—'मेरे साथ इलाहाबाद चलेगी या अपनी मा के साथ यहीं रहेगी?'

बिनी ने अपने कपोलों पर हथेली मलते हुए अपनी भाषा में कहा कि

वह मा के पास रहेगी। कहीं नहीं जायगी।

प्रसन्न ने आगे पूछा—'पापा के पास नहीं चलेगी? लखनऊ में हैं वह। लखनऊ बड़ा अच्छा शहर है। उनके पास मोटर है।'

बिनी मोटर के लालच में आ गई, बोली कि तो फिर पापा के पास रहेगी, मा के पास नहीं।

प्रसन्न उसे साथ लेकर सुमित्रा के पास आ गया। वह पत्र पढ़कर सुमति को दे चुकी थी और स्वयं अखबार पढ़ रही थी। प्रसन्न ने कहा—'सुनो सुमित्रा, बिनी तो अपने पापा के पास रहेगी लखनऊ में। उनके पास मोटर है इसलिए।'

सुमति ने मुस्कराने का प्रयत्न करते हुए प्रसन्न की ओर देखा, फिर पत्र पर दृष्टि जमा दी। सुमित्रा बोली—'क्यों बकते हो भइया? बिनी बेचारी क्या जाने अभी? बच्ची जो ठहरी। आज नहीं तो कल विश्वास बाबू के पास मोटर भी हो सकती है। आदमी समझकर चले तो क्या नहीं पा सकता?'

प्रसन्न ने कहा—'ठीक है। मैं कौन से बिगड़े रास्ते पर हूँ।' बता सकती हो? पर जो-कुछ चाहता हूँ वह नहीं मिलता।'

सुमित्रा ने देखा कि आज प्रसन्न का विवाद करने का मन है। परिहास भी करना चाहता है वह, पर करे किससे? भीतर जो आह्लाद भरा है, वह फूटा पड़ रहा है। सुमित्रा और सुमति दोनों से उसका बहन का नाता है। उनसे क्या कहे?

सुमित्रा बोली—'मैंने तो किसी प्रकार पत्र पढ़ लिया, अब सुसु को तो पढ़ लेने दो? हर्ष उसका भी कोई है। उसके लिए संदेश भी भेजा है। अच्छा भइया, हम लोगों को आज मिठाई खिलाओ। याद है, इलाहाबाद में एक बार ऐसी ही खुशी के दिन तुमने मिठाई मँगाई थी।'

'खूब याद है सुमित्रा, आज तो उससे भी बढ़कर शुभ सूचना मिली है। मिठाई खाओ। हर्ष के लिए साथ लिए चलना। कल तक तार जरूर मिलेगा।' फिर बिनी को गोद में लेकर वह कमरे में घूमने लगा। बार बार

कहता जाता था—'अपनी बिनी को मोटर ले दूँगा, आज शाम को ही, क्यों री ? मुझे भी बिठाएगी उस में ?'

## २८

विश्वास जेल की छोटी-सी कोठरी में बन्द अपने अतीत पर विचार रहा था। वह अतीत, जो एक दिन वर्तमान था। जिसमें गति थी। चपलता थी। मादक प्यार की उद्दाम लहरें तरंगित होती थीं। विश्वास को सब-कुछ स्मरण है। वह रात-दिन उसी मृग-मरीचिका के पीछे उन्मत्त होकर दौड़ता-फिरता था। अब सोचता है कि हाथ कुछ भी नहीं आया। जो अतृप्ति थी, वह चिर-अतृप्ति ही बनी रही। उस भूख की बेचैनी, ओह! उसमें कितनी गजब की आकुलता थी? उसका रोम रोम सिहर उठा। आज वह सब सुप्त है। मर्यादा ने तो नहीं किन्तु समय के थपेड़ों ने उसे इतना जर्जर करने का प्रयत्न किया है कि वह अब शायद उठ भी न सके? रे मनुष्य! जो त्याज्य है, परिहार्य है, उसे स्वीकार करने के लिए तू कामना ही नहीं करता रहा, उसमें डूबा रहा। आज उसका परिणाम भोग। तू बन्दी बना है। आगे क्या होगा, उसे भी तू देखेगा।

रात की गहरी नीरवता बिखरी थी। विश्वास की कोठरी जिस बैरक में थी, उसमें कई कोठरियाँ और थीं। इस बैरक को सुरक्षित रखने के लिए उसके बाहर एक ऊँची दीवार उठाई गई थी, जो चारों ओर गोलाई के रूप में गई थी। हत्या करने, डकैती डालने या अन्य ऐसे ही भीषण अभियोग में गिरफ्तार किये जाने वाले बन्दी इस बैरक में रखे जाते थे। जिस कोठरी में विश्वास बन्द था, उसमें पहले एक ऐसा अपराधी बन्द रखा

गया था, जिसे बाद में फाँसी दी गई थी।

हल्की-हल्की ठंडक होने लगी थी। रात के नौ बज चुके थे। जेल की दुनिया में बारकों में ताले पड़ जाने के बाद ही सर्वत्र सन्नाटा छा जाता है। केवल पहरेदारों का गर्जन-स्वर और उनके बूटों की खट-खट ही बीच-बीच में सुनाई पड़ जाती है।

विश्वास का मन आज शाम से ही अनमना था। हवालाती क़ैदी होने के नाते अभी उससे काम नहीं लिया जाता था। सारे दिन उस कोठरी में बन्द रहने से वह दुर्बल दिखाई पड़ने लगा था। दाढ़ी बढ़ गई थी। स्वभाव में झल्लाहट और चिड़चिड़ापन आ गया था। स्वर कर्कश होता जा रहा था। आवेश में आकर वह कभी-कभी अपने रूखे बालों को नोचने लगता था। उसका मानसिक-सन्तुलन इतना बिगड़ गया था कि वह उद्विग्नता का शिकार हो जाता था। और तब बाहर निकलने का मार्ग न पाकर वह दीवार से अपना सर टकराने लगता था, या लोहे के सीखचेदार दरवाज़े से बाहर झाँककर अपना सारा बल लगाकर उसे हिलाने का व्यर्थ प्रयास करता था और दाँत पीसकर उग्र रूप से गालियाँ बकने लगता था।

आज रात वह बड़ा बेचैन था। जब से जेल में आया था, वह नहाया नहीं था। नाखून इतने बड़े हो गए थे कि उनमें मिट्टी भर गई थी, जो निकलती नहीं थी। कपड़े उसके पसीने से बदबू करने लगे थे। उन्हें बिना धोये बराबर पहनना पड़ रहा था। कोठरी के फर्श में इतनी सीलन थी कि उससे बैठा नहीं जाता था। मदन होटल-जैसी नई पक्की इमारत में रहने वाला और नौकरों पर अपना शासन करने वाला विश्वास, मैनेजर नहीं क़ैदी था। भीतर कोठरी की गरमी से वह परेशान हो उठा था। बिजली का पंखा—उसकी फर-फर करती हवा—हुश! यह सब यहाँ कहाँ? क़ैदी को आराम दिया जाय तो उसके अपराध का प्रायश्चित कैसे हो? उसने अपनी कमीज़ को पकड़कर फाड़ डाला।

बैरक के दूसरे कोने से खट-खट करता हुआ वार्डर लालटेन का धुँधला प्रकाश लिए चला आ रहा था। बीच में पहुँचकर उसने एकाएक इतने

ज़ोर की आवाज़ लगाई कि विश्वास चौंक पड़ा। वह बड़बड़ाया—'साले, ऐसे चिल्लाते हैं जैसे कोई जान निकाल रहा है। इन तालों के भीतर से भागना क्या आसान काम है ?

खट-खट बढ़कर उसकी कोठरी के निकट आ गई और हल्का प्रकाश सामने फ़र्श पर बिखर गया। वार्डर ने संगीन को कन्धे पर सम्भालकर रुखाई से पूछा—'क्या है जी ? क्यों खड़े हो ?'

विश्वास को उत्तर नहीं आया। वह अपनी बेचैनी को, जो रन्ध्र-रन्ध्र से निकल रही है, कैसे बता सके ?

वार्डर ने एक बीड़ी जलाई, फिर हल्की खाँसी के झटके के साथ उसे पीने लगा। लालटेन भूमि पर रखकर सीखचों के और निकट जाकर उसने फिर पूछा—'जेल की कोठरी में आराम की नींद नहीं आती होगी, क्यों ? होटल के मैनेजर जो रह चुके हो।'

विश्वास ने खीझ से कहा—'ठीक यही बात है। जेल में आदमी को आदमी नहीं समझा जाता। पशुओं से भी गया-बीता वह माना जाता है।'

वार्डर की भवें तन गईं। उसने बोलने के लिए मुँह खोला ही था कि उसे खाँसी आ गई। बीड़ी का कड़वा धुआँ उसके गले में भर गया था। उसने झल्लाकर कहा—'बेईमान हैं साले, बीड़ी की तम्बाकू में भी मिलावट करने लगे हैं।'

वह कुछ देर तक खाँसता रहा, फिर स्वस्थ होकर बोला—'क्या कहते थे, जेल में आदमी जानवर बना दिया जाता है ? पर बताओ, जब हत्या करने के लिए आमादा होते हो, या औरतें भगाते हो, तब कहाँ पर आदमी बने रहते हो ? यह काम क्या भले आदमियों के लिए हैं ? बदमाशों की बात दूसरी है। उनके हृदय नहीं होता और होता है तो भावनाएँ नहीं होतीं। राक्षस होते हैं वे लोग।'

विश्वास ने 'हूँ' कर दिया।

वार्डर ने अपनी 'ड्यूटी' पर उपस्थिति की सूचना फिर ऊँचे स्वर से चिल्लाकर दी। बाद में विश्वास से कहा—'छोड़ो जी इन जेल और

आदमी की बातों को। यह बताओ कि तुम्हारा हाथ इस जुर्म में है या नहीं, जिसके लिए तुम्हें यहाँ लाकर बन्द किया गया है। ठीक-ठीक बताना। हम लोग समझ सभी कुछ जाते हैं। अदालत में तुम जो चाहना कहना, पर यहाँ तो मैं निजी तौर से पूछ रहा हूँ। बता दोगे तो जब तक यहाँ रहोगे, थोड़ी-बहुत आराम देता रहूँगा।'

विश्वास ने छूटते ही उत्तर दे दिया—'मैं बेकसूर हूँ।' पर बेकसूर कहने के बाद ही उसके भीतर संघर्ष मचने लगा। क्या वह वास्तव में निर्दोष है? नहीं, कभी नहीं। उसके विवेक ने तीव्र भर्त्सना की। एक झूठ के लिए सौ झूठों का सहारा लेना पाप है, अधःपतन है। हरबंस को पाने के लिए तुमने बदमाशों के सरदार से मिलकर तेजासिंह की हत्या का षड्यन्त्र नहीं किया? तुम कह सकते हो कि उसके अपहरण में तुम्हारा कोई हाथ नहीं है? तुम इतने चरित्रवान हो कि हरबंस के प्रति आसक्ति की भावना भी नहीं मन में ला सके? तुमने अपना पहला वार खाली जाने पर, जिसमें हरबंस को पतित करने की उत्कट साध थी, क्या उससे प्रतिशोध नहीं लिया? अब उस सबसे पीछे हटना, उसे अस्वीकार करना तुम्हें शोभा न भी दे, किन्तु क्या तुम उसके कलुष से बच सकोगे?

वार्डर ने विश्वास के मुख से केवल तीन शब्द निकलने के बाद उसे चुप देखकर उसके मुख की ओर लालटेन बढ़ाकर बत्ती तेज कर दी, जिसकी रोशनी में उसकी आँखें खुली न रह सकीं। उसने बड़े अपनेपन से कहा—'मुझे जो कुछ बताओगे उससे मुक़दमे पर कोई असर नहीं पड़ेगा। मैं तो हर अपराधी से और विशेषकर संगीन अपराधियों से सच्ची घटना जानना चाहता हूँ। कसम दिलाकर नये क़ैदियों से उनके अपराध के विषय में पूछने का मेरा स्वभाव बन गया है। इसमें मुझे कुछ मिल जाता हो सो बात नहीं, पर न जाने क्यों मैं अपने इस व्यवहार को इसी प्रकार बरतता हूँ?'

विश्वास ने बीच ही में कह दिया—'लालटेन हटा लो दूर।'

उसने लालटेन नीची कर ली, आगे कहता रहा—'मेरे सामने झूठी कसम खाना गुनाह है। मैं भी आदमी को पहचानता हूँ। तेईस साल जेल

की नौकरी में काटे हैं। अब रिटायर होने को बैठा हूँ।' फिर अपने स्वर को कड़ाकर रुखाई से बोला—'और अपराधी को सज़ा जरूर मिलती है, यह मेरा विश्वास है। तुम नये आए हो, इसलिए अपने स्वभाव के कारण तुमसे बातें करने लगा। सोच लो, मैं अभी लौटा आ रहा हूँ। आगे के क़ैदियों को देख लूँ।' कहकर वह लालटेन हाथ में लटकाये, भारी कीलदार बूटों की खट-खट करता हुआ आगे बढ़ गया।

वार्डर की बातों का विश्वास के ऊपर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने जहाँ पर बैरक समाप्त होती थी, वहाँ पर पहुँचकर आवाज़ लगाई जो दूर होने पर भी विश्वास के कानों में घुसती चली गई। फिर उसके नपे-तुले कदम खट-खट करते लौटते सुनाई पड़ने लगे और ज़रा सी देर बाद लालटेन का प्रकाश उसकी कोठरी के सामने पड़ने लगा। विश्वास को मच्छरों के दलों ने इतना परेशान कर दिया था कि वह रो पड़ा। बार बार उन्हें उड़ाने के लिए हाथ चलाने पर वह अपने ही चोट मार बैठा। उसकी मानसिक अशान्ति अब पराकाष्ठा पर थी। वह सीखचों से लगकर ताज़ी हवा पाने के लिए बैठ गया।

उसे संज्ञा-शून्य सा पाकर वार्डर ने उसके ठीक सामने आकर 'खट' की जिससे विश्वास जागते हुए भी जैसे चौंक पड़ा, फिर पूछा—'सो गये क्या?'

'नहीं तो,' विश्वास ने उत्तर दिया।

'जवाब दोगे?'

'हाँ, मैं बेगुनाह हूँ।'

वह अविश्वास से हँस पड़ा, जैसे विश्वास का घोर निरादर किया हो। लोहे की छड़ों पर अपनी संगीन टिकाता बोला—'तुमसे शायद अनजाने में ग़लती हो गई होगी? बेकसूर तो था तेजासिंह, जिसकी जान चली गई है। और हरबंस, तुमने उसे भी गँवा दिया। एकदम कच्चे खिलाड़ी निकले। मैं तुम्हें एक बहुत सनसनीदार खबर सुनाऊँगा, जिसे सुनकर तुम्हें ख़ुशी होगी। पर अपने बचाव के लिए रुपया तो तुम बहाओगे ही? वकील करोगे, मुकदमा लड़ोगे।'

विश्वास उसकी बातों में डूब गया। एक अशिक्षित व्यक्ति जो जिन्दगी-भर चहारदीवारी के भीतर कैदियों के बीच रहा है, कायदा-कानून की बातें करता है। विश्वास ने उसकी ओर गम्भीरता से देखना चाहा, पर आँखें ऊपर नहीं उठ सकीं। कपड़ों के भीतर भरने वाले पसीने की बदबू ने उसको कुछ क्षण के लिए बेचैन कर दिया।

उसे चुप देखकर वार्डर और तीखे स्वर में बोला—'मैं भले आदमियों को भी जानता हूँ, जो छिपकर पाप किया करते हैं। उन्हीं में एक तुम हो। बाहर से साफ़-सुथरे, भीतर मैल भरा है। इतना जहर कि लड़की के पाने के लिए उसके बाप की हत्या करा दी। तुम्हारी आवाज, जब तुम बीच-बीच में झूठ बोलने और अपना अपराध छिपाने का प्रयत्न करते हो, काँप जाती है। भीतर-ही-भीतर इसे तुम भी अनुभव करते हो। क्या कहना चाहते हो? गरमी लग रही है? नहीं तो, बड़ा अच्छा मौसम है। इतनी ठण्डक तो बड़ा आराम देती है। हाँ, यहाँ बिजली के पंखे जरूर नहीं हैं। तो सुनो, मैंने बेगुनाहों को भी देखा है। उनकी आत्मा इतनी प्रबल होती है कि जरा-सी झूठी बात भी वे सहन नहीं कर सकते। पिछले साल ऐसे ही एक बेगु-नाह को हत्या के अपराध में फाँसी दे दी गई थी। यहीं, इसी जेल में दूसरी ओर फाँसी-घर है। वह मर तो गया, पर अपनी स्मृति छोड़ गया। सब उसके आचरण की आज भी तारीफ़ करते हैं', कहकर वह फिर धीरे से खाँस उठा।

जेल के फाटक पर साढ़े नौ का घण्टा बजा।

विश्वास 'फाँसी' के नाम से डरने लगा था। उससे खड़ा नहीं रहा गया। वहीं जमीन पर बैठ गया। उसके चारों ओर जैसे कोई कहने लगा—'जब निर्दोष फाँसी पर चढ़ा दिये जाते हैं, तब तुम तो वास्तव में अपराधी हो। तुमने सबसे बड़ा अपराध यह किया कि तेजासिंह के मारने का षड्यन्त्र बदमाशों के सरदार के साथ मिलकर किया और वह एक लड़की को पाने के लिए नहीं, उसे अपनी वासना का खिलौना बनाने के लिये। सोचो, यह कितना घोर पाप है? तुम विवाहित हो। अधेड़ अवस्था है तुम्हारी।

सुमति, तुम्हारी पत्नी स्वयं सुन्दर है। तुम एक बच्चे के पिता हो। अब तो तुम्हारे ऊपर एक पति से बढ़कर पिता का भार है। पिता का उत्तरदायित्व जानते हो? इस प्रकार का तुम्हारा आचरण सर्वथा अशोभन है। मुकदमा चलना तो दूर तुम्हें पहले ही जनता के सामने चौराहे पर फाँसी पर लटका दिया जाय। छिः तुम्हारी विचार-धारा कितनी कुत्सित, कितनी निन्दनीय है? सब लोग तुम्हारे शव पर बाद में भी घृणा से थूकेंगे—तुम बर्बर···· हिंसक पशु···।'

उसका सर चकराने लगा। उसे उसने लोहे की उन मोटी और मजबूत ठण्डी सलाखों पर टेक दिया। बाहर एकाएक कोई बड़ा-सा पक्षी सामने वाले घने पेड़ की डालों को झकझोरता हुआ उसमें छिप गया और क्षण-भर में चीं-चीं की आवाज के साथ वही पक्षी फड़-फड़ करता हुआ उड़ गया। विश्वास ने यह सब सुना, पर उधर देखने का साहस नहीं कर सका। वार्डर बड़बड़ाया—'साले, ले गया पकड़कर। सारी चिड़ियों को एक-एक कर खाये डालता है।'

विश्वास ने सर डाले-डाले कहा—'शिकारी पक्षी है? चिड़ियों को न खाये तो पेट कहाँ से भरे?'

'पेट कहाँ से भरे?' वार्डर ने दोहराया। तुम लोग भी तो उसी शिकारी पक्षी की तरह हो। तुम लोग औरतों का शिकार करते हो। इस जेल में जितने कैदी हैं, उनमें से बहुत थोड़े चोरी या और छोटे-छोटे जुर्म में सजा पाये हुए हैं। बाकी सब किसी-न-किसी रूप में औरतों से सम्बन्धित हैं। बाहर पाप करते समय वे जितने शेर बनते थे, स्त्री की अस्वीकृति पर उस पर अपना बल दिखाते थे, बहुत मामलों में बेचारी की जान चली जाती थी, यहाँ आकर वे सब भीगी बिल्ली बन जाते हैं। मैं नहीं समझ पाया कि आदमी में इतना पागलपन कहाँ से आ जाता है? क्या सभी पुरुष स्त्री के पीछे इतने दीवाने हो सकते हैं कि उसे न पाने पर अपने मार्ग की बाधा को जैसे हो हटा दें? मैं तो अपनी पत्नी से सन्तुष्ट हूँ। क्यों, पढ़-लिखकर जहाँ और गुण आदमी में आते हैं, वहाँ पराई स्त्रियों के लिए तरसते रहना

और उन्हें हर प्रकार से पाने का दुर्गुण भी उसमें आ जाता है ? एक तुम्हारा क्या, पण्डितों, मौलवियों, वकीलों सभी का यही हाल होगा ?'

विश्वास को उत्तर नहीं आया। जो कुछ वार्डर ने कहा था, अतर्क्य था। शिक्षा का यह अवगुण नहीं है कि मनुष्य का नैतिक पतन हो। वह पापमय बने। वासना का भूत उसे हर समय घेरे रहे। पर उसे अपवाद भी नहीं कहा जा सकता। समाज में जो नैतिकता का ह्रास दिन-प्रतिदिन होता दिखाई पड़ता है, शिक्षा उसके लिए उत्तरदायी न भी हो, किन्तु उसके अव्यवस्थित रूप ने एक माध्यम अवश्य दिया है।

उसने उसे चुप देखकर कहा—'अपराध तो कहते हो कुछ नहीं किया, पर तुम्हारा कम बोलना और जवाब न देना यह बताता है कि तुम पक्के हो। मेरा मतलब समझे न ? यहाँ आकर बड़े-बड़े अपराधी चुपचाप रहते हैं। वे अपना आचरण ऐसा बना लेते हैं जैसे वे, निरीह व्यक्ति हैं—निर्दोष हैं। कुछ भी नहीं जानते। कभी-कभी तो हम लोग भी उन्हें पहचानने में धोखा खा जाते हैं। लगता है, सोने वाले हो। सोओ पड़कर चैन से। मुझे तो 'ड्यूटी' देनी है। जो कुछ तुम्हें बताना चाहता हूँ, वह 'ड्यूटी' से जाते समय बताता जाऊँगा। बस खुश हो जाओगे सुनकर।' कहता वह खट-खट करता आगे बढ़ गया।

ठण्डी हवा का एक झोंका आया। कपड़ों के भीतर का पसीना ठण्डा लगने लगा। उसने सुख का अनुभव किया। उन्हीं ठण्डी सलाखों पर सर को सहारा दिये वह ठण्डी हवा का शीतल स्पर्श बार-बार पाने की लालसा में ऊँघ गया।

जब उसकी आँख खुली तो उसने देखा कि वार्डर सामने खड़ा उसे पुकार रहा है। लालटेन की बत्ती उसने तेज़ कर दी है। विश्वास ने अनुभव किया कि वह भयभीत लग रहा है। कहीं कुछ उसने ऐसा अभी देखा है जो उसे इतना डरा गया है कि वह दरवाज़ा तोड़कर बाहर निकल भागना चाहता है। यहाँ अब वह नहीं रह सकता। पसीना, इतना निकला था कि जैसे वह नहा गया था। जो कुछ उसने अभी देखा है, वह इतना वीभत्स

है कि उसकी कल्पना से ही रोंगटे खड़े हो जाते हैं।

वार्डर ने पूछा—'क्यों चिल्ला रहे थे ? मैं तो उस कोने पर था, भागता आ रहा हूँ। लगा कि जैसे तुम्हारा कोई गला घोंट रहा है। ऐसी बुरी आवाज थी कि क्या कहूँ ? मैंने समझा कि तुम आत्म-हत्या कर रहे हो, या जान नहीं निकल पा रही है, इसलिये छटपटा रहे हो और चिल्ला रहे हो। क्या यह सब मचा रखा है तुमने यहाँ ? मुझे तंग करोगे तो कल ही ऐसी कोठरी मिलेगी जहाँ हवा भी नहीं जायगी। एक तुम्ही तो कैदी नहीं हो ? और कोई नहीं चिल्लाता ? तुम्हारी इसी बैरक में उधर की कोठरियों में फाँसी की सज़ा पाये हुए कैदी बन्द हैं। हुक्म आने वाला है। वे इस दुनिया को छोड़ जायँगे। वे बहुत खुश रहते हैं, गाते हैं, हँसते हैं। ज़िन्दगी का मोह उनका छूट गया है।'

विश्वास को असमर्थता खाए जा रही थी। वार्डर की डाँट सुनकर वह सचेत होकर बोला—'तुम जो कुछ कहो, ठीक है। मेरी तुम्हारी स्थिति में अन्तर है। तुम इस समय दिन भी कह दो तो कुछ नहीं। मैं तो कोई सपना देखने लगा था। देखा—वह बदमाशों का सरदार एक चमचमाता छुरा लेकर मेरी ओर बढ़ रहा है। तेजासिंह का सर उसके एक हाथ में है जिससे खून टपक रहा है। हरबंस उसके साथ है जो मस्ती की अँगड़ाई ले रही है। उसका सारा शरीर जैसे नग्न है। सरदार कह रहा है—अब तेरी बारी है विश्वास-धोखेबाज़। तूने मेरे विरुद्ध तेजासिंह से जो कुछ कहा है, उसे स्वयं सुन ले। अब यह छुरा तेरा खून पियेगा, फिर हरबंस और मैं··· क्यों···? बोल तेजासिंह। और उसका वह अकेला सर बोलने लगा। उसी समय हरबंस ने आगे बढ़कर मेरे एक लात मारी और वह चमचमाता छुरा······। मैं चिल्ला उठा। मेरी हत्या की जा रही थी।'

'चुप रहो जी'। वार्डर ने उसे फिर डाँट दिया। 'यही पाप है जो सर पर सवार होकर बोल रहा है। ऐसा सपना भी कोई देख सकता है ? तुम्हारे भीतर अपराध छिपा सकने की सामर्थ्य नहीं है। तुम अदालत में वकील की बहस के सामने तो टिक ही नहीं सकते।'

जेल के दरवाजे पर दस का घन्टा बजा। दूर से दूसरे वार्डर के ड्यूटी पर आने का खट-खट शब्द निकट आता जान पड़ने लगा। उसी समय शिकारी पक्षी फिर पेड़ में आकर घुस गया। इस बार वार्डर ने एक पत्थर उठाकर पेड़ पर मार दिया। फड़-फड़कर सारी चिड़ियाँ उड़ने लगीं और वह पक्षी न जाने कहाँ विलीन हो गया।

उसने विश्वास के पास आकर फिर कहा—'सुन डरपोक, आज के अखबार में छपा है कि बदमाशों के सरदार की हत्या उसके एक साथी ने कर डाली है। उसे भी रंगे हाथों गिरफ्तार कर लिया गया है और वह हरबंस तेरी प्रेमिका मिल गई है।' फिर आगे बढ़ते हुए मुस्कराकर कहा—'अब शायद बच जाओ, हरबंस चाहेगी तो।'

विश्वास और बहुत कुछ पूछने के लिए तड़प उठा। इस संवाद ने उसके शरीर में जैसे उत्साह भर दिया था। वह कहीं यहाँ से निकल सके? एक बार वार्डर से कुछ पूछ ही ले। पर वह जा चुका था। जिस वार्डर ने ड्यूटी ली थी, वह तेज कदम बढ़ा आ रहा था।

## २६

प्रत्येक व्यक्ति के जीवन के दो पहलू होते हैं। इसीलिए एक स्थल पर यदि वह संकीर्णता से काम लेता है, तो दूसरे पर उदारता की अपरिसीम मात्रा उसके व्यवहार में पाई जाती है।

हर्ष को बड़े प्रयत्न के बाद विश्वास से मिलने की आज्ञा मिली थी। अधिकारियों के यहाँ दौड़ते-दौड़ते वह थक गया था, तब कहीं जाकर उसका प्रार्थना-पत्र स्वीकृत हुआ। जेल के बाहर वह उससे मिलने की प्रतीक्षा में

बैठा रहा। एक घण्टे बाद उसे भीतर ले जाया गया।

विश्वास को हवालातियों की कतार में लाया जा रहा था। विचित्र वेश था। दाढ़ी बढ़ी थी और सर के बाल तेल न मिलने के कारण सूखकर एक-दूसरे में बिंध गए थे। मुख पर गहरी मलिनता व्याप्त थी और आधी धोती जो घुटनों से थोड़ी-सी नीचे थी, मैली हो चली थी। वह अभी तक अपने ही कपड़े पहने था। कमीज भी कहीं-कहीं से फट चुकी थी और पसीने में भीगी रहने के कारण उसका रंग उड़ गया था। उसके पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थीं और एक हाथ हथकड़ी से जकड़ा था। दूसरे खुले हाथ से वह पैरों की बेड़ियाँ पकड़े चल रहा था।

सामने एक लम्बी कतार कैदियों की लगी थी। उसमें सजा पाए हुए और हवालाती सभी प्रकार के कैदी थे। उनके आगे एक मजबूत रस्सी बँधी थी। ठीक उसी प्रकार सामने भी एक रस्सी बँधी हुई थी, जिसके बाहर प्रत्येक कैदी का मुलाकाती बैठता था।

हर्ष ने विश्वास का यह रूप देखा तो उसे पहले तो रोना आ गया। मदन होटल का शानदार मैनेजर विश्वास क्या यही है ? जेल में बेचारे की कैसी दुर्गति हो गई है ? यहाँ तो एकदम पशुता का व्यवहार किया जाता है। आदमी को आदमी नहीं समझा जाता। जो वास्तव में अपराधी हैं, डकैत या चोर हैं, उन्हें सुधरने के लिए कष्ट देना तो ठीक है, पर जो दुर्भाग्य का शिकार है उसके प्रति तो मनुष्यता का व्यवहार होना ही चाहिए। उसने एक बार सारे कैदियों की ओर दृष्टि उठाकर देखा। सब उसे एक-से पीड़ित और दुखी लगे। कुछ ही ऐसे निर्लज्ज थे उनमें, जो हँस-हँसकर बातें कर रहे थे।

विश्वास अब निकट आ गया था। वह अपना सर झुकाए था और अपराधियों की कतार में वही सबसे उदास और आत्म-प्रपीड़ित सा लग रहा था। हत्या और नारी-अपहरण के अपराध मे जेल जाना कलंकित तो होना ही था, साथ ही समाज की दृष्टि में अपना निरादर करना-था। फिर कौन उस पर विश्वास करेगा ? वह एक सांकेतिक पदार्थ-सा बनकर रह जायगा,

जिसकी ओर सभी की दृष्टि होगी और वह तब शान्ति से मरना चाहेगा, तो भी नहीं मर सकेगा। मनुष्य के चरित्र का पतन उसके लिए घोर नारकीय पतन है। नैतिक स्तर से तो उसकी मृत्यु तत्काल हो जाती है, किन्तु वह अपनी निर्लज्जता के कारण, जिसमें उसका अहं जाग्रत हो उठता है और जो उसे पुरुष होने के नाते सब-कुछ करने की छूट दे देता है, फिर उसी शान और अकड़ से समाज में चलता है; दूसरों के कार्यों की आलोचना करता है और उनके चरित्र पर कटाक्ष करता है। यह मानव स्वभाव बन गया है। आत्म-निरीक्षण की भावना यहाँ पर लुप्त हो जाती है।

हर्ष आगे बढ़ा। विश्वास को अन्य कैदियों के साथ और अपनी बैरक वाले एक दूसरे कैदी के साथ जिसके साथ उसका एक हाथ बँधा था, कतार में बिठा दिया गया था। हर्ष भारी कदम चलकर उसके सामने आ बैठा। चारों ओर से चीख-पुकार सुनाई पड़ रही थी। कई स्त्रियाँ भी मुलाकात करने आई थीं, जो अपने छोटे बच्चों को गोद में लिये रो रही थीं। पुरुष जो मुलाकात करने आये थे, वे घर-द्वार, गाँव और पड़ोसियों से लेकर खेत और पशुओं, बागों और फस्लों की बातें कर रहे थे। कुछ निडर कैदी मुलाकातियों को समझा रहे थे कि वे लोग उनके लिए चिन्ता न करें। यहाँ से बाहर निकलते ही वे एक-एक दुश्मन का सफ़ाया कर देंगे। एक बूढ़ा कैदी, जिसका जवान बेटा मर गया था, उसकी खबर सुनकर सिसक-सिसक कर रो रहा था। हर्ष द्रवित हो उठा। जेल का यह दृश्य उसे आज ही देखने को मिला था। हर तरफ़ व्यथा की आह सुनाई पड़ रही थी।

विश्वास ने चोरी से हर्ष की ओर देख लिया था। सामने उससे दृष्टि मिलाने का साहस नहीं होता था। इस समय उसे ग्लानि जैसे डसे जा रही थी। वह भावावेश में अपने को हर्ष के सामने एक क्षुद्र प्राणी समझने लगा। एक वह है जो उसे छुड़ाने के लिए प्रयत्नशील है। उससे जेल में मुलाकात करने आया है और दूसरा वह था जो उसी के कारण बिना किसी प्रमाण के, केवल ईर्ष्यावश और अपने उच्छृङ्खल स्वभाव के कारण अपनी पत्नी और पुत्री तक को छोड़ बैठा है। हर्ष के प्रति जो अशोभनीय विचार

उसके मन में बस गए थे और जो यहाँ जेल आने तक बने थे, वे एक-एक कर स्वतः ही जैसे विलीन होने लगे। हर्ष के हृदय की विशालता का परिचय उसे आज मिला था। वह यदि सुमति के साथ अपनी गृहस्थी बसाकर रहना चाहता तो उसे कौन रोक सकता था? और वह यहाँ क्यों आता उससे मिलने? जब वह जेल में बन्द किया गया था, उसके दो दिन बाद एक हवालाती कैदी ने उससे पूछा था—'तुमसे मुलाक़ात करने कोई नहीं आया? घर में कोई है नहीं तुम्हारे?' तो उसने अवसाद से कहा था—'नहीं, मैं अकेला हूँ।'

उसने सुना हर्ष ने उसे नमस्ते किया है। दोनों हाथ जोड़कर उसका सम्मान किया है। तब वह किसी प्रकार कह सका—'तुमने क्यों तकलीफ़ की हर्ष बाबू? मेरे भाग्य में जो लिखा होगा, वही होगा। वैसा ही वातावरण बन जाता है, और वैसी ही परिस्थिति उत्पन्न हो जाती है। मुझे रोने के लिए छोड़ दो।'

हर्ष ने सान्त्वना दी, धैर्य बँधाया—कहा—'निराश न हो विश्वास बाबू। मेरा मन कहता है कि तुम्हारा कुछ नहीं होगा। तुम साफ़ छूट जाओगे। मनुष्य को सँभलने के लिए ठोकरें लगनी ही चाहिए।'

विश्वास ने कृतज्ञता से कहा—'ठीक है। जो ऊपर बीतेगा, सहना पड़ेगा। हम तुम या कोई भी उसे रोक नहीं सकता।' इस समय उसके मन में आ रहा था कि बिना पूछे ही हर्ष सुमति की कुशल-क्षेम के साथ-साथ बदमाशों के सरदार की हत्या के विषय में भी शीघ्र बताये। हरबंस कहाँ मिली, यह जानने को उसकी उत्सुकता जैसे बाहर निकली पड़ रही थी।

हर्ष ने पहले उससे जेल के कष्टों के विषय में पूछा, जिसे विश्वास ने सतर्कता से जेल के कर्मचारियों से छिपकर बताया। हर्ष ने फिर बताया कि किस प्रकार उस बदमाश की हत्या कर डाली गई और कैसे उसका दूसरा साथी अपराध करने के सम्बन्ध में गिरफ़्तार किया गया है। वह यहाँ जेल में होगा। हरबंस के साहस की प्रशंसा करता हुआ बोला वह—'मैंने उसे समझा-बुझाकर राज़ी कर लिया है। वह अपने बयानों में सारा अपराध

उस मृतक बदमाश और उसके पकड़े गये साथी के ऊपर रख देगी। तुम्हें निर्दोष सिद्ध कर दिया जायगा। कोशिश की जा रही है कि उसके बयान मजिस्ट्रेट के यहाँ करा दिए जायँ और फिर उन्हीं के आधार पर तुम्हें जेल से छुड़वा लिया जाय।'

विश्वास का रोम-रोम खिल उठा। जहाँ और कैदी व्यथित लगते थे, वह प्रसन्नता से भर गया था। उसने पूछा—'और 'दर्पण' तो चल रहा होगा? तुम्हारे वे इलाहाबाद वाले दोस्त कहाँ हैं, जिनसे एक-दो बार ही मुलाकात हो सकी थी?'

हर्ष उसकी बातें सुनने के साथ ही उसके मन के भाव भी पढ़ना चाहता था। विश्वास ने 'दर्पण' के विषय में जानना चाहा है, उसके मित्र [illegible] के सम्बन्ध में पूछा है, हरबंस के लिए वह व्याकुल है, पर सुमति और [illegible] के लिए कुछ नहीं पूछा? अभी तक उसके मन में क्या वही कलुष भरा है? उसने कहा—'सब अच्छे हैं। 'दर्पण' बन्द हो गया है। अब उसे इलाहाबाद या बनारस से निकालने का विचार है। पर एक व्यक्ति की दशा शोचनीय है जिससे तुमने मेरे कारण सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया है।'

विश्वास जैसे लज्जा से गड़ा जा रहा था। हर्ष ने देखा उसकी आँखों में आँसू भर आए हैं, जो टपक पड़े हैं। उसने आगे पूछा—'सच कहना, तुम्हें क्या विनी से भी द्वेष था? उस निर्दोष बच्ची के प्रति भी तुम्हारे मन में दया-ममता नहीं रही?'

विश्वास ने मुँह से कुछ न कहकर केवल हाथ से उसे चुप रहने का संकेत कर दिया।

पड़ोस में उसके हाथ से बँधा जो दूसरा कैदी बैठा था, उसकी स्त्री अपने बच्चे को लेकर उससे मिलने आई थी। उस कैदी ने गाँव की एक दूसरी औरत से सम्बन्ध कर लिया था। इस पर उसके पति ने उसकी हत्या कर डाली थी। इसी हत्या के सम्बन्ध में उसकी गिरफ्तारी हुई थी। स्त्री बार-बार बच्चे को सामने कर उसका मोह बढ़ा रही थी और रोकर कह रही थी—'तुम्हें भला क्या मिल गया उससे? मुझसे अधिक उसने तुम्हें क्या दे

दिया ? अपने इस बच्चे की ओर देखो न ? तुम्हें कहीं कुछ हो गया तो हम लोग किसके सहारे रहेंगे ?'

वह देहाती स्त्री हर्ष के बिलकुल पास बैठी थी। उसने सब कुछ सुना। उसे लगा कि क्या शहर हो, क्या गाँव, सभी जगह मनुष्य नैतिक पतन के गढ़े में गिरा है। समाज में चरित्र के उत्थान की जो महत्ता कभी अनुकरणीय समझी जाती थी, उसके स्थान पर चरित्र का गिराव सर्वत्र ग्रहण किया जा रहा है।

मुलाक़ातियों का मिलने का समय लगभग समाप्त हो चला है, इसकी सूचना एक घण्टी द्वारा दी जा चुकी थी।

हर्ष ने कहा—'अपने मन को स्वस्थ करो। सुमति-जैसी तुम्हारी पहले थी, अब भी है। उसे अस्वीकार कर जो भूल की है, उसे सुधार लो विश्वास। हरबंस भी सुमति से मिलना चाहती है। नाम से वह उसे जानती है। एक बार उसे तुमने उसका नाम बताया था।'

विश्वास ने कुछ क्षण सोचकर कहा—'इन सब बातों के लिए फिर समय मिलेगा, हर्ष। इस समय मुझे और दुखी मत करो। हाँ, एक काम कर सकते हो ?'

'क्या ?'

विश्वास ने सहसा अपना विचार बदल दिया, बोला—'कुछ नहीं। मैं छूट गया तो स्वयं उसे करूँगा।'

हर्ष ने सब-कुछ उसके विषय में जानना चाहा, पर विश्वास उसे गोपनीय ही बनाए रहा। उसने इतना जरूर कहा—'होटल के काम से मेरा मन भर गया है। 'दर्पण' का प्रकाशन प्रारम्भ करो, तो मैं उसमें आ सकता हूँ।'

हर्ष मुस्कराकर बोला—'दर्पण' के लिए तुम्हारे सहयोग की आवश्यकता पहले भी जरूरी थी, अब भी रहेगी। मुझे एक और साथी भी मिल गया है, जो धन तो नहीं लगा सकेगा, पर अपनी अमूल्य सेवाएँ देगा।'

'कौन है वह ?'

'एक नारी है, पुरुष नहीं ।'

'नाम बताओ ।' विश्वास को आशंका हो रही थी कि हो न हो यह सहायता देने वाली नारी सुमति ही होगी । तभी वह उसका नाम नहीं बताना चाहता है । उससे सम्बन्ध-विच्छेद के बाद हर्ष निरन्तर उससे मिलता रहा होगा । उसके रहने-खाने की सारी व्यवस्था भी करता होगा । तब क्या यह एक पुरुष के लिए सम्भव है कि वह...वह अपने को फूस में जलने से रोक सके, जब आग निकट हो...और तभी उसे उस देहाती क़ैदी की घटना स्मरण हो आई । जिस स्त्री की हत्या उसके पति ने की थी, वह अपने पति के होते हुए भी पर-पुरुष से सम्बन्ध रखती रही । नारी-चरित्र दुरूह है । एक ऐसी उलझी पहेली है जिसको आज तक कोई सुलझा नहीं सका है । और सुलझाना तो दूर समझ भी नहीं सका है । सुमति भी...उसके मन में फिर विपरीत विचार जाग्रत हो उठे, जो दब गए थे । सुमति को वह निष्कलंक क्यों मान ले ? असम्भव है । नारी की तृप्ति-अतृप्ति को भी वह जानता है । सुमति के विरुद्ध कोई प्रमाण न भी हो, किन्तु यही क्या कम है कि विवाह के पूर्व से हर्ष उसके निकट रहा है । दोनों का विवाह होने वाला था, फिर नहीं हुआ । सुमति उसे ब्याह दी गई । दोनों इसके बाद भी मिलते रहे । सुमति ने उसे ( विश्वास ) हृदय से ग्रहण नहीं किया । परिणाम फिर वही हुआ जो होता है ।

हर्ष ने घड़ी की ओर देखा । घण्टी बजने ही वाली थी । कहा—'नाम यों नहीं बता सकूँगा । बाहर आकर स्वयं देख लेना । पर एक बात फिर कह रहा हूँ । मेरे ऊपर निष्ठा रखना । यही पहले भी कहता रहा था, पर तुम निष्ठुर बन गए थे । नाम तुम्हारा विश्वास है, पर अविश्वास तुम में कूट-कूटकर भरा है । नामकरण ग़लत रहा और देखो, अन्यथा मत समझना । मैंने जितना कुछ कहा है सत्य-भाव से । उसे वैसे ही ग्रहण करो ।'

विश्वास हर्ष के प्रति जो स्नेह उत्पन्न कर सका था, वह सब फिर कटुता में बदल गया । उसने कहा —'तुम लोगों को, तुम्हारी जाति को खूब

जानता हूँ संन्यासी जी। देश को तुम्हीं कुछ सदाचारी लोग तो सम्भाले हो। अपनी क्षुद्र-बुद्धि के अनुसार मैं खूब पहचानता हूँ तुम्हें, सुमति को भी। इसीलिए तो विवाह नहीं किया अपना तुमने ? अरे, मेरा तो बिगड़ा नहीं कुछ, सुमति के जीवन का सर्वनाश क्यों कर दिया ?'

'ओह ! फिर वही सब, मैल धुला नहीं। एक ज़रा सी बात पर पुरानी गाँठ जो खोल चुके थे, फिर बाँध ली। लो सुनो, उस नारी का नाम सुमित्रा है। सुमति और सुमित्रा दो नारियाँ अलग-अलग हैं, एक नहीं। विश्वास तो नहीं करोगे, पर देख लोगे तब फिर मेरी प्रशंसा करोगे और पश्चाताप प्रकट करते हुए माफ़ी माँगोगे। अच्छा नमस्ते।'

वार्डर ने घण्टी बजा दी। एक बार फिर उस खुले मैदान में शोर मचने लगा। आते समय मुलाकातियों के हृदय में जो हर्ष-विषाद समाया था, उसका स्थान अब बिछुड़ते समय मोह ने ले लिया था। रुदन और सिसकियों के कारण वातावरण फिर दयनीय और करुणोत्पादक हो गया था। वार्डर हाथ पकड़-पकड़कर मुलाकातियों को बाहर जाने के लिए उठा रहे थे और कैदियों को फिर उनकी कोठरियों में ले जाया जा रहा था।

हर्ष ने फिर विश्वास की ओर देखा भी नहीं। विश्वास अवश्य ही मुड़-मुड़कर उसे देखता रहा। फाटक के बाहर आकर उसने देखा--मुलाकातियों का ताँता अभी लगा है। इसी प्रकार आगे न जाने कितनी बार मुलाकातों की पुनरावृत्ति होती रहेगी।

उसने कहा---'विश्वास, तू अभी भी न सँभला तो जीवन की मरुभूमि तुझे सुखाती ही चली जायगी। तू जलवृष्टि और हरियाली के लिए तड़पता रहेगा और ऐसे ही एक दिन उसी रेणु में, जिसे तू मृग-मरीचिका की भाँति पाने के लिए व्याकुल है, तेरा अन्त हो जायगा·······सदैव-सदैव के लिए।' बाहर सड़क थी। फाटक पर कोलाहल हो रहा था। उसमें हर्ष के शब्द जैसे शून्य में विलीन हो गये।

## २६

मनुष्य जब अपनी जीवन-पुस्तक के पिछले पृष्ठों पर दृष्टिपात करता है तो कभी वह उनके आधार पर एक सुखद भविष्य की कल्पना करता है, और कभी आगे के उन सादे पृष्ठों पर काली रेखाएँ खिंची हुई पाता है, जो किसी अमंगल की सूचना लेकर सारे भविष्य को तमाच्छादित कर देती हैं। उस समय अधैर्य से वह अज्ञानता के पथ पर बढ़कर जो कुछ कर डालता है, उसके लिए उसे जीवन-भर पश्चाताप करना पड़ता है।

हरबंस के सामने भविष्य का प्रश्न एक समस्या बनकर खड़ा था। उसके वापस लौट आने पर शरणार्थी बस्ती के निवासियों ने उसे ग्रहण तो कर लिया था, किन्तु बिना उसकी स्वीकृति के वे आगे का कोई कदम नहीं उठाना चाहते थे। जिस व्यक्ति के यहाँ उसने आश्रय लिया था उसका पूरा परिवार था और वह उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं होने देना चाहता था, किन्तु वह यह अवश्य चाहता था कि हरबंस अपना घर बसाकर सुख से रहे। उसे लेकर सारे लखनऊ शहर में और विशेषकर शरणार्थी बस्ती में जो वार्ता चलने लगी है, वह समाप्त हो जाय। इसी उद्देश्य से उसने हरबंस से पूछा—'मदन होटल में तेरा कितना रुपया लगा था।'

हरबंस यह सब कुछ नहीं जानती थी। तेजासिंह को सारा हिसाब पता था। होटल के जो रजिस्टर आदि थे, वे सब पुलिस अपने साथ ले गई थी। उसे पता लगाना था कि कोई आपत्तिजनक व्यक्ति तो नहीं ठहरा है। उसीके साथ में हिसाब के सारे रजिस्टर भी चले गये थे। तेजासिंह के कमरे से भी पुस्तकों को छोड़कर जो कुछ हाथ का लिखा मिला, सब चला गया था। उसने अपनी अनभिज्ञता प्रकट कर दी।

उस गृहस्थ ने कहा—'तू एक प्रार्थना-पत्र मजिस्ट्रेट के यहाँ दे कि मदन होटल, जिसका मालिक तेरा पिता था तुझे वापस मिलना चाहिए।

अपराधी सभी पकड़ लिये गए हैं, उन पर मुकदमा चलता रहेगा। तू अब निराश्रिता है, इससे होटल तुझे जरूर वापस मिल जायगा। दूसरे घटना तो कहीं और हुई है। यहाँ तो तेजासिंह का शव ही भेजा गया था। तू होटल को ठेके पर उठा दे। अच्छा पैसा मिल जायगा।'

हरबंस की समझ में बात आ गई।

गृहस्थ ने आगे कहा—'एक बात और भी मैं जानना चाहता हूँ कि तेरा ब्याह करने के बारे में क्या विचार है? कानपुर में कहीं बात चल रही थी, यह तेजासिंह कहा करता था। तारीख भी शायद तै हो गई थी। तुझे तो पता होगा। मजबूर होकर यह सब बातें पूछनी पड़ रही हैं। ब्याह हो जाय तो सब काम ठीक हो जायेगा।'

हरबंस कानपुर वालों का पता-ठिकाना नाम आदि सभी कुछ जानती थी। जो तारीख विवाह की निश्चित हुई थी, उसे जरूर वह नहीं जानती थी। तेजासिंह ने विवाह के लिए ही एक अलग मकान लेने का प्रबन्ध किया था, यह भी वह जानती थी। किन्तु यहाँ की घटना क्या वे लोग नहीं जानते होंगे? अखबारों में सभी कुछ छप चुका है। तब उसे वे लोग और लड़का विशेषकर क्या स्वीकार करेगा? उसने इस विषय में अपने मन की बात कहनी चाही, पर नहीं कह सकी।

वह अधेड़ अवस्था का गृहस्थ, जो विभाजन के थपेड़े खा चुका था, और अपने परिवार के आधे व्यक्ति इस राजनीतिक खेल में गँवा चुका था, गम्भीरता से बोला—'मैं तेरे मन की कमजोरी समझ रहा हूँ हरबंस। हर शरीफ़ लड़की को अपनी इज्जत-आबरू सबसे प्यारी होती है। पर हो क्या? गुण्डों पर तेरा क्या, पुलिस का भी वश नहीं चल पाता। जो हो चुका है, उस पर धूल डाल दे। उसे भुला दे। यहीं अपनी बस्ती में पाकिस्तान से खोजकर निकाली हुई कई औरतें हैं। हम लोग सबको अपने में मिला लेते हैं। अपनी तरफ़ से तो कोई भी इसे पसन्द नहीं करता, पर जिस पर अपना बस नहीं है, उसके लिए हम क्या करें? तू हमें पता बता, मैं उन्हें लिखूँगा। वे नहीं राजी होंगे तो कहीं और बात करूँगा। अकेले

रहने का ज़माना नहीं रहा है।'

हरबंस सुनती रही सब कुछ, फिर उठकर अपने कमरे में पता ढूँढ़ने चली गई। भाग्य की यह कैसी क्रूरता है कि उसे कहीं का नहीं रक्खा? एक लड़की होकर वह अपने विवाह के लिए स्वयं तैयारियाँ करेगी?

अपनी अटैची में खोजते समय उसे कानपुर से आये पत्र मिल गये। तेजासिंह इस बारे में लापरवाह था। हरबंस ही पत्रों को ठिकाने से रख लेती थी। उसने सारे पत्र लाकर गृहस्थ को दे दिये। हरबंस फिर वहाँ से भीतर चली गई।

सब पत्रों को पढ़कर अभी उसने लिखने के लिए कलम उठाई ही थी कि बाहर ताँगा आ रुका। उसमें से एक व्यक्ति उतर आया और उस गृहस्थ का नाम लेकर पूछने लगा। बाहर आकर उसने उसके विषय में दो-चार प्रश्न किये, फिर उसे कमरे में ले गया।

युवक ने विस्तृत रूप से बताते हुए कहा कि वह हरबंस का मंगेतर है। इधर जो घटनाएँ हुई हैं, उन्हें वह अखबारों द्वारा जान गया है। उसने हरबंस को पहले भी देखा है। मदन होटल में वह एक दिन आकर रह चुका है और उसे निकट से समझ चुका है। हरबंस से ब्याह करने का उसका निश्चय दृढ़ है। वह यह भी जानता है कि वह बदमाशों के बीच रह चुकी है और वहाँ उसका चरित्र भी भ्रष्ट किया गया होगा। क्योंकि बदमाश औरतों को इसीलिए ले जाते हैं। पर वह उसे प्रत्येक अवस्था में ग्रहण करेगा। वह यह जानता है कि अब उसका कोई दूसरा नहीं रह गया है और वह अकेली रह गई है। पर उस पर दया दिखाने की अपेक्षा वह उसको और पतित होने के लिए नहीं छोड़ देगा। वह निर्दोष है यह उसे विश्वास है। उसने कुछ क्षण रुकने के बाद कहा—'ब्याह की तैयारियाँ तो रुक गई हैं, पर मैं हरबंस से मिलकर उससे अपनी बात कह देना चाहता हूँ। आप उसे बुला सकें तो मेहरबानी होगी।'

गृहस्थ उठकर भीतर चला गया और कुछ देर प्रतीक्षा करते रहने के बाद हरबंस ने धीरे से कमरे में प्रवेश किया। युवक ने कहा—'आओ मैं

हूँ महेन्द्र। शकल से नहीं तो नाम से तो जानती होगी? आगे आओ, मैं एक जरूरी बात कहना चाहता हूँ।'

हरबंस उसके निकट आई। पहले खड़ी रही, फिर महेन्द्र के हाथ पकड़कर बिठा लेने पर पास बैठ गई। बोली नहीं कुछ।

महेन्द्र ने कहा—'मैंने अखबार में सब कुछ पढ़ा है। तेजासिंह के मरने का बेहद अफ़सोस है। पर जो कुछ होना होता है उसे कोई न तो जानता है और न पहले से उससे बचने की कोशिश ही की जा सकती है। हमारे व्याह की तारीख अब आज ही है। घर वाले राजी नहीं थे। कहते थे लड़की भगाई जा चुकी है। बदमाशों के यहाँ रही है, पर मैंने कहा कि अब इस पर सोचना नहीं चाहिए। उसे तो हमारा ही आसरा है, नहीं तो उसका दिल टूट जायगा। और सुना है कि तुमने बहादुरी दिखाई है? बदमाशों के सरदार को मारा है और उसी के एक साथी को हत्या करने के जुर्म में गिरफ्तार करा दिया है। यह अखबार में नहीं निकला था, यहाँ आकर पता चला। वाह! बहादुर हरबंस, तुझे क्या मैं छोड़ सकूँगा? देख तो मेरी ओर?'

हरबंस ने देखा—पलकें उठीं, फिर दृष्टि-में-दृष्टि समा गई। एक यह दृष्टि थी, प्यार और अनुराग से भरी—जिसमें वह खो जाना चाहती थी। दूसरी वह दृष्टि थी विश्वास की—जिसमें वासना के लाल डोरे तैर रहे थे और जो उसे पी जाना चाहती थी। एक से हृदय को शान्ति और तृप्ति मिली, दूसरी से जलन और घृणा उत्पन्न होती थी। महेन्द्र ने अपने हाथ से उसकी ठोड़ी पकड़कर मुँह ऊपर उठा दिया, पूछा—'मेरी बातों पर विश्वास करती हो?'

हरबंस ने स्वीकृति दे दी। मुँह से नहीं सर हिलाकर। फिर अंचल को सर से सँभाल लिया। महेन्द्र उसका हाथ अपने हाथ में लेकर पहले उसे कुछ देर तक लिए रहा, फिर एक अँगूठी निकालकर उसकी अँगुली में पहना दी।

हरबंस लाल पड़ गई। पहले जहाँ वह अपने को संसार में सबसे

अधिक दुर्भाग्यग्रस्त मानती थी, वहीं अब सबसे सुखी और भाग्यवान मानने लगी।

महेन्द्र ने कहा--'तुम बोलती क्यों नहीं हरबंस ? एक बार मेरे सामने हँसो।'

हरबंस ऐसे अवसर पर क्या कहे ? वह मुस्करा उठी।

महेन्द्र ने कहा—'अच्छा तुम्हें एक कहानी सुनाऊँ, सुनोगी ?'

'हाँ', इस बार हरबंस ने उत्तर दिया।

'वह कहानी इतनी छोटी है कि दुनिया में उससे छोटी कहानी दूसरी नहीं है।'

हरबंस आश्चर्य से उसके मुख की ओर देखने लगी।

'बस कहानी पूरी हो गई हरबंस। मैंने इसीलिए यह कहा था कि तुम अपने से भी मेरी ओर देख सको।'

हरबंस ने कहा—'वाह, यह भी कोई तरीका है ?'

'और यह कौन-सा तरीका है कि तुम किसी से बात भी न करो ? आखिर मैं इतनी दूर से प्यासा आया हूँ, पानी के लिए भी तुम नहीं पूछोगी ?'

बात परिहास से भरी थी, पर हरबंस उसकी वास्तविकता पर पहुँच गई। सचमुच ही उसका कर्तव्य था कि वह उससे खाने के लिए पूछती। यह तो बड़ा बुरा हुआ। वह उठकर जाने लगी। महेन्द्र ने उसे पकड़ लिया। बोला—'कहाँ चली ?'

'अभी लौटी आती हूँ।'

'अरे नहीं ! यह अगूँठी जो पहन रखी है, सब लोग देख लेंगे अभी। मैं तो चला जाऊँगा, तुम्हें ही मुश्किल हो जायगी। सोच लो।'

बात ठीक थी। अभी घर से लेकर बाहर तक बात फैल जायगी। उसका बैठना मुश्किल हो जायगा।

संकोच से बोली—'पर कुछ खाने के लिए....।'

'जी, वह सब तो मैं खा-पी चुका। मैंने तो यों ही मजाक किया था। सोचो न, तुम दूसरों के यहाँ हो। अपने मेहमानों को कैसे खिला-पिला

सकतीं हो ? फिर कभी सही। आज बाकी रहा। मैं माँग लूँगा।'

'पर यह अच्छा नहीं लगता। बिना कुछ खिलाए मैं नहीं जाने दूँगी।'

'और मैं भी यही कहती हूँ। भला बिना खिलाये किसी मेहमान को जाने दिया जाता है ?' कहती हुई एक लड़की अन्दर से परदा उठाकर चली आई, फिर बोली—'ओह, माफ़ कीजिएगा। मुझे मालूम नहीं था जो बिना बुलाए चली आई। वापस लौटी जाती हूँ।'

हरबंस ने उठकर उसे रोक लिया, फिर प्यार से उसके कपोलों पर चपत जमाती हुई बोली—'पहले चली आई, फिर कहती है मालूम नहीं था ? शैतान कहीं की।' उसे फिर अपने पास ही बिठा लिया।

लड़की ने शरारती दृष्टि से पहले दोनों की ओर बारी-बारी से देखा, फिर हरबंस से महेन्द्र की ओर संकेत कर पूछा—'आप की तारीफ़, जी ?'

हरबंस शरमाकर रह गई। उसकी समझ में कोई उत्तर नहीं आया।

महेन्द्र ने इस समय तत्परता से काम लिया, बोला—'जी, मैं आपका मेहमान हूँ। कानपुर में रहता हूँ। महेन्द्र मेरा नाम है। अब जरा अपना नाम और हरबंस से अपना रिश्ता बताइए तो आगे और बताऊँ।'

उस लड़की ने अपना नाम और हरबंस से बहन का रिश्ता बताया।

'तब आप मेरी साली हुईं, सुन लीजिए। मैं आपका जीजा हुआ। अब इनसे मेरी तारीफ़ पूछकर क्या कीजिएगा ? लाइए, आप भी मुझे खिलाने के लिए सिफ़ारिश कर रही थीं। क्या तैयार कराया है ?'

हरबंस कुछ कहने से बच गई। महेन्द्र सीधे उस लड़की से बातें करने लगा।

वह बोली—'देखिए, देखती हूँ अभी। चाय तैयार है।' कहकर वह भीतर दौड़ गई।

महेन्द्र बोला—'तुम तो जवाब भी नहीं दे पातीं हरबंस, ऐसे भला कैसे चलेगा ?'

हरबंस ने धीरे से कहा—'मैं गूँगी नहीं हूँ, यह तो आप जान गए

हैं। आगे बोलने भी लगूँगी, पर डर है कि आप फिर ऊब न जायँ। क्योंकि मैंने नावेल बहुत पढ़े हैं और मुझे बहुत-सी कहानियाँ आती हैं। आपकी तरह मुँह से निकला नहीं कि कहानी हो गई, ऐसा कुछ मैं नहीं करती। मैं जब सुनाने बैठूँगी, तो घण्टों के लिए फ़ुरसत हो जायगी।'

'तुम्हारी वे कहानियाँ भी सुनूँगा। समय आने दो उनके सुनने का।'

लड़की चाय ले आई थी। नमकीन भी था। हरबंस ने चाय बनाई जिसे पीता हुआ महेन्द्र बोला—'मैं इसके लिए किसे शुक्रिया दूँ? चाय बनाने वाले को या चाय लाने वाले को?'

हरबंस मुस्करा उठी। उसकी इस मुस्कान पर महेन्द्र रीझ उठा।

## ३०

मानव-स्वभाव अपने उद्देश्य की सफलता के लिए लालायित रहता है और उसे असफल होता पाकर उसे बड़ी निराशा होती है। वैसे ज्ञानी सदा से यही समझाते आये हैं कि मनुष्य को अपने कर्म में रत रहना चाहिए। फल की प्राप्ति के लिए वह कामना न करे, किन्तु स्वभाव ऐसा बना है कि कार्य करने से पहले ही फल की प्राप्ति की कामना जाग्रत हो जाती है।

हरबंस का बयान मजिस्ट्रेट के यहाँ हो गया था। विश्वास के निर्दोष छूट जाने की पूरी आशा की जाने लगी थी। हर्ष अभी तक किसी प्रेरणा के सहारे निरन्तर दौड़ता रहा था। विश्वास से मिलकर वह सन्तुष्ट हुआ था कि उसने अपनी भूल स्वीकार कर ली है। अब वह सुमति को लेकर फिर अपनी गृहस्थी की टूटी गाँठ जोड़ लेगा और तब जैसी कि सुमित्रा

की योजना है, वह उसके साथ 'दर्पण' के प्रकाशन में उसकी पूरी सहायता करने को स्वच्छन्द होगी। आगे फिर दोनों चलकर एक सूत्र में बँध जायँगे। उसके अव्यवस्थित जीवन की इस प्रकार समाप्ति हो जायगी और वह नारी-सुख पाने के लिए समाज से अधिकार-पत्र प्राप्त कर लेगा।

किन्तु विश्वास के एक क्षण में ही भाव-परिवर्तन से वह विचलित हो उठा था। इस विश्वास को क्या हो गया है कि वह सुमति की ओर से एकदम विमुख होता गया है? जिस डोर को जोड़ने के लिए वह रात-दिन एक-कर दौड़ता रहा है, उसका प्रतिफल उसे यही मिला है कि विश्वास जहाँ पर था, वहाँ से और आगे बढ़ गया है। उस पड़ोसी कैदी की कहानी सुनकर वह यह सोचता रहा कि जिस प्रकार उसका पर-स्त्री से सम्बन्ध हो गया था, उसी प्रकार सभी स्त्रियाँ अपने चरित्र से गिर सकती हैं और सुमति उनमें से एक है। कोई कारण नहीं कि वह उसे एक अपवाद के रूप में स्वीकार करे। हर्ष ने विवाह नहीं किया है और...।

वह झुँझला उठा। पहले उसने सोचा था कि विश्वास से मिलने के बाद ही वह प्रसन्न को तार से सूचित करेगा और उसके अनुसार वह सुमति और सुमित्रा को लेकर लखनऊ आ जायगा। किन्तु फिर उसका मन तार भेजने का नहीं हुआ। खिन्न-मन आकर होटल में लेट गया। जिस व्यवहार से वह क्षुब्ध हुआ था, उस पर विचारता रहा। उसकी योजना अब काम नहीं देगी। आगे उसे क्या करना चाहिए, इसे वह सोचकर भी नहीं निश्चय कर पा रहा था। अन्त में उसने सोचा कि वह बनारस चला जाय। वहाँ जैसा कुछ निश्चय होगा, किया जायगा। जाने से पहले वह हरबंस से मिल लेगा।

शाम की गाड़ी से बनारस जाने का निश्चय कर वह थोड़ी देर तक आराम करता रहा। फिर उठकर खाना खाया और बाजार से तीन-चार हिन्दी के उपन्यास मोल लेकर हरबंस से मिलने के लिए शरणार्थी बस्ती की ओर चल दिया।

हरबंस बाहर वाले कमरे में बैठी कढ़ाई कर रही थी। आवाज देने

पर उसी ने बाहर झाँककर देखा। हर्ष को वह पहचान गई थी, अन्दर बुला लिया। पूछा—'कहिये, किधर से आना हो रहा है?' फिर उसके हाथ में उपन्यासों का बण्डल देखकर कहा—'समझ गई। उपन्यास लाए हैं, शुक्रिया। मैं तो इन्तज़ार में थी।'

हर्ष ने उसकी ओर बण्डल बढ़ा दिया, कहा—'और मैं भी आपको धन्यवाद देता हूँ। आपके बयान ठीक उतरे हैं। ऐसे ही मैं चाहता था। विश्वास जेल से बच जायगा। जमानत दो-एक दिन में हो जायगी। फिर कोई डर की बात नहीं। कोशिश तो यही होगी कि मुकदमे में उसे न घसीटा जाय। फिर जो कुछ होगा देखा जायगा। आपका आगे क्या विचार है?'

हरबंस ने बताया कि उसे यह सलाह दी गई है कि वह मदन होटल को पुलिस के अधिकार से छुड़ाने के लिए प्रार्थना-पत्र दे। उसे पा जाने पर वह उसे ठेके पर उठा दे। मौके पर इमारत बनी है। होटल चलता भी ठीक था। अच्छे दाम मिल जायँगे। इसी से खाना-पीना चलेगा। यहाँ बस्ती में कहीं एक मकान पाने के लिए भी कोशिश करेगी। होटल में अब रहना नहीं होगा।

हर्ष ने आगे पूछा—'पर अकेले क्या रह सकोगी? होटल का हिसाब देखने के लिए भी तो किसी को रखना होगा, नहीं तो जो ठेकेदार होगा, वह घाटा दिखाकर रुपया चुकाने में आना-कानी करेगा।'

हरबंस ने न जाने कैसे छूटते ही कह दिया—'आप तो हैं। मैं जानती हूँ आप मेरी मदद ज़रूर करेंगे।'

हर्ष ने कहा—'मुझसे जो हो सकेगा, करूँगा। पर आप विवाह क्यों नहीं कर लेतीं?'

हरबंस बोली नहीं। विवाह के लिए वह कैसे कह दे कि उसने इस सबको पहले ही पूरा कर लिया है। अब उसे किसी की सलाह की जरूरत नहीं है। महेन्द्र, जो उसका एक प्रकार से पति हो गया है उसे अँगूठी पहना गया है। वह जैसा ठीक समझेगा, करेगा। वह अपनी अँगुली में पहनी

हुई अँगूठी को बार-बार हर्ष के सामने घुमाती थी, जिससे वह देख ले कि विवाह की एक रस्म पूरी हो चुकी है। अब तो चार आदमियों के बीच उसका हाथ पकड़ना रह गया है।

हर्ष समझ नहीं पाया। कहने लगा—'अब आप शरम करेंगी तो कैसे काम चलेगा? आप तो नावेल पढ़ती हैं। लड़कियाँ अपने लिए अपनी इच्छा का पति चुन लेती हैं। माता-पिता नहीं चाहते तो भी विवाह हो जाता है। और आपके सामने तो यह भी अड़चन नहीं है। जिसे आप चाहेंगी, चाहेंगी ही नहीं संकेत कर देंगी, वह आपको पाने के लिए दौड़ पड़ेगा।'

हरबंस को इस समय हर्ष की बातों में रस मिल रहा था। उसे परिहास का रूप देती हुई वह आश्चर्य से बोली—'सच, ऐसी बात है हर्ष बाबू?'

'आपको विश्वास नहीं होता क्या?'

'आपकी बात पर अविश्वास भी नहीं कर सकती। मैं चाहती हूँ कि आप मुझे···।'

हर्ष उसका मुँह देखकर रह गया। यह क्या कह दिया हरबंस ने? वह उसकी परीक्षा ले रही है, या वास्तव में उसके साथ विवाह करना चाहती है, इसे समझने में उसे समय लग गया। अभी तो स्वयं उसने कहा है कि वह जिससे प्रस्ताव कर देगी, वह उसे स्वीकार करने को तैयार हो जायगा और जब उसीसे वह यह कह बैठी है, तो उसका पीछे हटना कहाँ तक उचित है? यह तो किसी को आशा के महल दिखाकर फिर झोपड़ी में ले जाकर रखना है। वह हतबुद्धि-सा किसी निर्णय तक नहीं पहुँच सका।

हरबंस ने अँगूठी को अँगुली से निकाल लिया फिर हर्ष का ध्यान उसकी ओर आकर्षित करती बोली—'क्यों, मुझे स्वीकार नहीं करोगे? मैं इतनी बदसूरत हूँ? सुना है सुमति बड़ी ख़ूबसूरत है। पर सभी तो ख़ूबसूरती नहीं पा सकते? जो जैसा पैदा हुआ है, वैसा ही रहेगा। बनावटी ख़ूबसूरती टिकती नहीं। कहिए तो उसी का सहारा लूँ।'

हर्ष असमंजस में पड़ा रहा। सुमित्रा को उसने वचन दिया है कि विश्वास और सुमति का मिलन कराकर वह उसे अपने साथ रखेगा। वह

तब क्या कहेगी ? उसके प्रति विश्वासघात होगा। एक तो बेचारी वैसे भी छली जा चुकी है। अब यह दूसरी चोट और पड़ेगी। वह उसे सहन नहीं कर पाएगी।

हरबंस ने विषय को गम्भीर बनाते हुए कहा—'क्या सोचा है ? मैं तो आपकी सलाह मान रही हूँ। आपने अभी ब्याह नहीं किया है, यह भी मैं जानती हूँ। आप अखबारनवीस हैं। दुनिया को समझते हैं। मेरी मदद तब भी नहीं करेंगे ?'

हर्ष ने कहा—'कुछ मौका तो दीजिए। मैं इसके लिए तैयार नहीं था।'

'पर मैं तो तैयार हूँ। यह एक मजे की बात है कि औरत अपने साथ ब्याह करने के लिए कह रही है और आदमी है कि सोचने का बहाना ढूँढ़ता है। हर्ष बाबू, मैं वही हरबंस हूँ जिसके लिए मेरे पिता की हत्या हुई है। विश्वास जेल में बन्द है। बदमाशों का सरदार मारा गया है। दूसरा साथी मौत की घड़ियाँ गिन रहा है और उसे ही आप छोड़ रहे हैं ?' हरबंस ने अभिनय के सभी पहलुओं से हर्ष को प्रभावित कर बाँध लिया था।

हर्ष ने कहना चाहा—सुमित्रा एक युवती उसको पा चुकी है। अब वह वचन-बद्ध है। पर नहीं कह सका। अपनी भीरुता पर उसे स्वयं ही लज्जा आ रही थी।

हरबंस ने कहा—'देखिए यह अँगूठी। अभी तक आदमी औरत को पसन्द कर लेने पर उसे अपने प्यार की सौगात देते थे। आप चाहें तो मैं आपको यह अँगूठी पहना दूँ। उलटी रीति सही। हम लोग ही तो इसे जानेंगे ?'

हर्ष ने अँगूठी की ओर देखा, फिर दृष्टि नीची कर ली। इस हरबंस ने उसे निरुत्तर कर दिया है। वह परास्त हो चुका है।

हरबंस ने फिर और अधिक उसे त्रस्त नहीं किया। खिलखिलाकर हँसती हुई बोली—'मैंने आपको परेशान किया है हर्ष बाबू। मुझे माफ़ करें। देखिए इधर, यह अँगूठी जो दे गए हैं, उनसे मेरा ब्याह पहले से ही

तय था। इधर की हलचलों की चिन्ता न कर वे उस रिश्ते को पक्का कर गए हैं। अरे, आप तो सच समझ गए थे ? छोड़िए उसे। कोई और बातें कीजिए।'

हर्ष ने कहा—'उसी की खुशी में तब मुझे बेवकूफ़ बना रही थीं ? खूब रही। चाहिए तो यह था कि मुझे मिठाई मँगाकर खिलातीं। यह अँगूठी तुम्हारे दाम्पत्य-प्रेम को चिरस्थायी रख सके, यह मेरी कामना है। साथ ही मेरी बधाई भी स्वीकार करें।'

हरवंस शोखी से मुस्कराती हुई बोली—'आप तो बड़े सीधे निकले जो मेरी बातों को सच मान बैठे ? इस तरह तो आपको बहुत आसानी से पाया जा सकता है। औरतों से होशियार रहा करें। सभी तरह की होती हैं। जो एक बार अपने रास्ते से हट जाती हैं, उनके लिए फिर कुछ भी मुश्किल नहीं रह जाता। वे वैसा कुछ भी कर डालती हैं, जिसे सुनकर दाँतों तले अँगुली रखनी पड़ती है।'

'तो ब्याह कब होगा, यह बताइये ?'

'आपको नहीं बताऊँगी।'

'क्यों ?'

'सुना है आप अखबार में अपने नाम से नहीं, पर दूसरों के नाम से सच्ची कहानियाँ लिखकर छाप लेते हैं। यह ठीक नहीं है।'

'आपकी कहानी के समय मेरा अखबार बन्द है, यह अफ़सोस है। नहीं तो उसमें आपका फोटो देता और आपकी कहानी छापता।'

हरवंस बोली—'उपन्यास लिखिये। मसाला बहुत मिलेगा। जो कुछ आप चाहेंगे, मैं और दे दूँगी। जैसे विश्वास की मोहब्बत की बातें। उन्हें हम दोनों ही जानते हैं।'

हर्ष ने अनुभव किया कि अब और अधिक रुकना निरर्थक बातों में समय गँवाना है। हाथ में बँधी घड़ी की ओर देखकर बोला वह—'अब चलूँगा। शाम की गाड़ी से बनारस जाना चाहता हूँ। वहाँ कोई पत्र नहीं लिखा है। सोचता रहा तार दूँगा। पर स्थिति फिर बदल गई है। मैंने अनुभव किया

है हरबंस कि सचाई पर लोग ज़रा मुश्किल से विश्वास करते हैं।'

हरबंस को लगा कि हर्ष को किसी ने पीड़ा पहुँचाई है। वह दुखी है। और यह पीड़ा पहुँचाने वाला विश्वास ही हो सकता है, जिसके लिए वह अपनी सामर्थ्य से बाहर दौड़-धूप कर रहा है। उसने चाहा कि वह उस सबको पूछे, पर पूछ नहीं सकी। केवल पूछा तो इतना कि वह बनारस से कब तक लौटेगा ?

'सो कुछ तय नहीं है।' उसने उत्तर दिया। 'जैसा वे लोग कहेंगे, वही होगा। पर आपके ससुराल जाने से पूर्व एक बार सब लोग आपसे मिलेंगे जरूर। हो सकता है हम लोग कल ही आजायँ।' कह कर वह खड़ा हो गया।

हरबंस ने उपन्यासों के लिए फिर धन्यवाद देते हुए कहा—'पढ़कर आपको इन्हें लौटा दूँगी। देखूँ आप मेरी मरजी जानते हैं या नहीं ?'

हर्ष ने दरवाजा पार करते-करते कहा—'वापस मैं उन्हें नहीं चाहता। मेरी ओर से विवाह का उपहार उन्हें समझ लेना। हम सब यहाँ हुए, और आपने आने का मौका दिया तो और...।'

हरबंस ने बीच ही में बात काट दी—'अरे, एक बात तो कहना भूल ही गई थी ? विश्वास बाबू से कह देना कि छूट जाने पर पुलिस के पास से होटल के रजिस्टर ले लें। आपको तकलीफ़ तो होगी, पर आप उन्हें समझकर यहाँ लिए चले आएँ। हम लोग आपसे समझ लेंगे। विश्वास से मैं अब मिलना नहीं चाहती। उन्हीं रजिस्टरों की आमदनी के हिसाब से होटल का ठेका दिया जायेगा।'

हर्ष 'जी, अच्छा', कहकर वहाँ से चला आया।

होटल में जब वह लौटकर आया तो कमरे का दरवाजा खोलने पर उसमें एक लिफ़ाफ़ा पड़ा हुआ पाया। डाक से आया था। उस पर कई मोहरें लगी थीं और मिरज़ापुर से चलकर वह बनारस आया था और वहाँ से पता बदलकर लखनऊ होटल का किया गया था। मूल पता लिखने वाले की लिखावट को पहचानने का वह प्रयत्न करता रहा, पर जान नहीं सका। लिफ़ाफ़ा खोला तो उसके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। उसमें

किसी अनजान व्यक्ति ने उसे मिलने के लिए इलाहाबाद बुलाया था। 'दर्पण' पत्र की प्रशंसा में उसने कई वाक्य लिखने के पश्चात् यह स्पष्ट कर दिया था कि वह उसकी शैली, पैनी सूझ-बूझ और निर्भीकता से प्रभावित हुआ है। 'दर्पण' को पुनः प्रकाशित करने का सारा भार वह लेने को तैयार है। अपना पता देते हुए उसने आने की तिथि की पहले से सूचना माँगी थी।

हर्ष पत्र कई बार पढ़ता रहा। मन में कहा उसने—'इलाहाबाद अब कार्य-क्षेत्र बनेगा। ठीक यही सुमित्रा भी चाहती है। उसे रेडियो के प्रोग्राम भी मिलते रहेंगे और वह 'दर्पण' में उसके साथ काम कर सकेगी। इस सबसे बढ़ कर खुशी की बात यह होगी कि उसे प्रसन्न की छाया से दूर नहीं जाना होगा।'

लिफाफ़ा उसने यत्न से रख लिया। घड़ी देखी—एक घण्टा अभी था। पत्र का उत्तर बनारस जाकर सबकी सलाह से देने का निश्चय कर वह चिनी के लिए फल और टाफ़ी लेने बाजार चला गया।

## ३१

बनारस बहुत सवेरे गाड़ी पहुँचती थी। इतने सवेरे कि उस समय घर जाकर जगाना हर्ष को ठीक नहीं लगा। अचानक उसे आया पाकर वे लोग न जाने क्या सोचें? पर वह इतनी देर निरुद्देश्य-सा घूमे भी तो कहाँ? बहुत-कुछ सोच-विचारकर घर जाना उसने निश्चय किया। रिक्शा पर बैठकर वह पन्द्रह मिनट में पहुँच गया। अभी सड़कों पर बिजली का प्रकाश फैला था। केवल पक्षी जागे थे। मार्ग में कुछ संन्यासी भी भजन गाते हुए गंगा-स्नान करने जाते हुए मिले।

बरामदे में पहुँचकर उसने धीरे से कुण्डी खटखटाई। सुमति की नींद शायद अभी खुली थी, या वह रात में कम सोती है, इसे हर्ष नहीं जान सका। उसने उठकर जब दरवाजे के पास आकर पूछा—'कौन ?' तो उसने 'मैं हूँ हर्ष' उत्तर देने के साथ ही यह भी पूछ लिया—'क्यों सुमति सोती नहीं हो रात में ?'

चटखनी खोलती वह बोली—'यह रात कहाँ है ? हमारे यहाँ तो इतने सबेरे ही जागने की महिमा है। विद्या-बुद्धि सभी मिलती है।' फिर तत्काल पूछा—'और बिना सूचना आगमन कैसे हो गया ? सब ठीक तो है ?'

हर्ष अन्दर आ गया। अटैची रखता हुआ बोला—'यह कहो पहले कि तुम्हें किस संन्यासी की शिक्षा मिल रही है ? गुरू कर लिया है किसी को क्या ?'

सुमति मुस्करा दी। उत्तर में अगुँली से उसकी ओर संकेत कर दिया।

हर्ष ने देखा कि इन थोड़े से दिनों में सुमति आधी भी नहीं रह गई है। गालों की हड्डियाँ उभर आई हैं। रात-दिन उसे लखनऊ की चिन्ता बनी रही होगी। तभी आते ही पूछा—'सब ठीक है ?' कितनी व्याकुलता थी इस प्रश्न में ? उसने अपने को जैसे धिक्कार लिया। उसे आते ही कहना चाहिए था—'सुमति, सब ठीक है। विश्वास अब छूटने वाला है।' सुमति को इसे सुनकर जो सान्त्वना मिलती, इसका अनुभव वही कर सकती थी। विश्वास उसे छोड़ चुका है, पर इससे पति-पत्नी का सम्बन्ध तो जुड़ा है।

उसने कुरसी पर बैठकर अपने बालों में हाथ फेरते हुए कहा—'चिन्ता न करो सुमु, मैंने सब काम ठीक कर लिया है। कुछ जरूरत आ पड़ी तो आना पड़ा। अरे, इन लोगों को तो जगाओ। इतनी खटपट हुई और यह लोग फिर भी नहीं जागे ?'

सुमति ने पानी की बूँदें सुमित्रा के कपोलों पर गिराते हुए कहा—उठो दीदी, पानी बरसने लगा है। अरे, यह घर में कौन घुस आया है ?

जगो प्रसन्न भइया।'

प्रसन्न तो एकदम से उठ बैठा, पूछा—'कौन है सुमु? कहाँ है?' पर सुमित्रा करवट लेती हुई बोली—'क्यों तंग करती है? कमरे में पानी बरस रहा है? झूठ बकती है। सबेरे की नींद तो पूरी कर लेने दे?'

प्रसन्न ने हर्ष को चोर के स्थान पर देखा तो पूछा आँखें मलते हुए—'कब आना हुआ? हम लोग तो तार की प्रतीक्षा में थे। सारी तैयारी किये बैठे थे।'

हर्ष बोला—'अभी चला आ रहा हूँ। सुमति न दरवाजा खोलती तो शायद मुझे दीवार पार कर भीतर आना पड़ता। ऐसे सोया जाता है?' कहता वह उसकी चारपाई पर जाकर बैठ गया और उससे धीरे-धीरे बातें करने लगा।

सुमति ने सुमित्रा के कान के पास मुँह ले जाकर धीरे से कहा—'देखो डाकू आए हैं तुम्हें ले जाने के लिए दीदी। बड़े निर्दयी हैं। उठो, अपना मुँह दिखा दो उन्हें। पहचान तो लें, नहीं तो मेरी भी मुसीबत आएगी।'

सुमित्रा भय से चीखी-चिल्लाई नहीं, बोली—'बक मत, मैं सुन रही हूँ। जो आया है उसे भी देख लिया है। आज तो बिना जगाए नहीं उठने की। क्या मेरा इतना भी अधिकार नहीं है?'

सुमति हट आई। सुमित्रा के पास लाकर उसने बिनी को लिटा दिया, फिर कमरे में जगह करने के लिए उसने अपना बिस्तर समेट लिया और चारपाई ले जाकर बरामदे में खड़ी कर दी। फिर वह बाथरूम की ओर चली गई।

हर्ष ने प्रसन्न को सारी व्यवस्था बताई तथा अन्त में कहा कि विश्वास के विषय में निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता। पहले वह प्रायश्चित करता रहा, फिर एकाएक बाद में बदल गया। जैसा उसका नाम है, ठीक उसके प्रतिरूप है वह।

प्रसन्न गम्भीर मुद्रा बनाकर बरामदे में टहलने लगा। हर्ष बिनी के

वहाने सुमित्रा की चारपाई के निकट जाकर बोला—'बिनी की मौसी, अब तो उठो ।'

सुमित्रा ने एक बार उसकी ओर देखा, फिर कहा—'यों नहीं उठती। हाथ पकड़कर उठाओ ।'

हर्ष ने चारों ओर देखा। प्रसन्न का मुँह दूसरी ओर था। उसने अपने को न रोक पाकर एक चपत उसके कपोलों पर लगा दी, फिर हाथ पकड़कर खींच लिया। सुमित्रा की साड़ी का अँचल भी साथ में खिंचता चला गया। सुमित्रा का अर्द्ध-नग्न वक्ष हर्ष के और निकट आ गया।

सुमित्रा ने अपना हाथ छुड़ाकर कहा—'तुम लोगों के पास यही रहता है बस? क्या मिल गया तुम्हें इसमें? कोई देख लेता तो क्या होता?'

हर्ष बोला—'मुझसे पूछती हो क्या मिल गया? सुमति जगाती रही तो उठी क्यों नहीं? और मैं आया जगाने तो कहा हाथ पकड़कर उठाओ ।'

सुमित्रा को उत्तर नहीं आया।

हर्ष ने बिनी की ओर प्यार से देखा फिर उसका मुख चूम लिया, बोला—'इसे भी जगाओ। अब तो सवेरा हो चला है। मैं इसके लिए कई चीजें लाया हूँ ।'

सुमति बाथ-रूम से लौट आई थी। साबुन से मुँह धोया था इससे भीनी खुशबू आने के साथ ही मुख की स्निग्धता भी बढ़ गई थी। उसे आता देखकर सुमित्रा चली गई। सुमति ने बिनी को जगा दिया। बोली—'देख तो तेरे लिये क्या आया है लखनऊ से?

बिनी आँखें मलती हुई उठकर बैठ गई।

हर्ष ने पूछा—'मुझे पहचानती है, या भूल गई है?'

बिनी ने सर हिला दिया। जानती है।

सुमति ने उसे गोद में उठा लिया। हर्ष बोला—'प्रसन्न चिन्ता में पड़ गया है सुमु, उसे समझा दो। ऐसा कुछ अभी नहीं हुआ है जो हम लोग हिम्मत हार जायें। चाय पर सब लोग बैठकर विचार लो। मैं उस समय

हरबंस से मुलाकात होने की भी बातें बताऊँगा। वह बड़ी सुलझी लड़की है। यों मजबूरी में उसे भ्रष्ट होना पड़ा है और वह भी अनिच्छा से—बलपूर्वक। उसके अपने विचार हैं और उसके विषय में सबसे खुशी की बात तो यह है कि उसका विवाह होने जा रहा है। उसका जीवन जो नष्ट कर दिया गया था, वह उसने सुधार लिया है। बोलो तुम्हीं, आपत्ति काल में जिस प्रकार मर्यादा की रक्षा करनी पड़ती है, वही धर्म बन जाता है। हम लोगों ने इस स्थिति को ग़लत ढंग से समझा था, तभी अपना ह्रास हो गया है। अरे, मैं क्या बकने लगा? कोई भाषण नहीं देना है।'

प्रसन्न कमरे में आ गया। सुमति से बोला—'एक काम करोगी?'

वह उसका मुख देखने लगी। जैसे मूक भाषा में पूछा हो क्या करने को कहते हो?'

उसने जरा सख्ती से कहा—'बहुत हो चुका अब। विश्वास से जब मिलना तो उससे साफ़ कहना कि तुम अपने खर्चे के लिए अदालत में अर्जी दोगी। इसमें बुरा कुछ नहीं है। अपने अधिकार की माँग है।' आखिर इस प्रकार कब तक चलेगा? सुधरने का······।'

हर्ष ने उसे रोक लिया, कहा—'चुप रहो जी, क्या सबेरे से ही बड़बड़ाने लगे? यह सब तय होता रहेगा। सारा दिन पड़ा है।'

सुमति इस वार्ता में भाग नहीं ले सकी। कम-से-कम वह इसके लिए कभी तैयार नहीं होगी कि विश्वास के विरुद्ध अदालत में जाय। उसके संस्कार ऐसे नहीं हैं। कभी नहीं। वह यह सुनना भी नहीं चाहेगी।

हर्ष ने आगे कहा—'तुम प्रसन्न, गंगा-स्नान कर आओ। सुमति को भी लेते जाओ। मैं न भी विश्वास करूँ, किन्तु इतनी आस्था अवश्य है कि जो उस सबको मानता है उसकी बुद्धि में विकार नहीं आता। यों वह इन्द्रिय-जीत तो नहीं कहा जा सकता, पर उसका हृदय शुद्ध अवश्य रहता है।

प्रसन्न तैयार हो गया। उसने शायद इसे दूसरे रूप में समझा था कि हर्ष सुमित्रा से एकान्त में मिलने का अवसर चाहता है, इसीलिये उसकी

धार्मिक भावना की जागरूकता की महत्ता का वर्णन कर रहा है।

सुमति इस अवसर पर भी चूकी नहीं, बोली—'हम लोगों से यहीं क्यों न कह दो कि कुटिया बनाकर जंगल में रहने लगें? क्यों प्रसन्न भइया? ज़रा देखिये तो, गंगा-स्नान का महत्त्व समझा रहे हैं और वह भी उन लोगों को जो उसमें स्वयं ही आस्था रखते हैं। अपने-आप किसी अच्छी बात को न मानकर जो दूसरों को उसे मानने का उपदेश देते हैं, वे लोग किस श्रेणी में आते हैं, यही उस दिन स्वामी जी ने बताया था। जो वस्तु ग्राह्य है, उस पर आचरण करना चाहिए न कि···।'

हर्ष सुमति के तर्क से प्रभावित हो गया था। उसके पास अपने पक्ष के समर्थन के लिए कोई दृढ़ विचार-धारा नहीं थी किन्तु निरुत्तर रह जाना भी उसे उचित नहीं जान पड़ा। उसने पूरी बात समाप्त होने के पूर्व ही अपने मुख पर जैसे रहस्य का-सा भाव लाकर कहा—'ओह, सुमति को तो आज समझ पाया हूँ। बड़ा ज्ञान आ गया है। कौन हैं तुम्हारे स्वामी जी?'

प्रसन्न बोला—'कोई स्वामी जी हों। सुमति ने जो कहा है उसे क्या मिथ्या कह सकते हो?'

'और अगर कह दूँ?'

'वह कहना नहीं होगा हर्ष, ज़िद की बात होगी। तुम इस समय रात कह सकते हो। कोई रोक नहीं सकता है। पर क्या यह वास्तव में रात है, इसे सोचना ही पड़ेगा। जो सत्य है, वह प्रत्येक अवस्था में उसी रूप में रहेगा। हम लोग उसे अपने स्वार्थवश चाहे जो कहें।'

हर्ष ने देखा—विवाद का मैदान सामने है। सत्य-असत्य का सहारा छोड़कर मनुष्य ऐसे अवसरों पर अपनी वाक्-शक्ति का प्रभुत्व स्थापित करता है। यह निश्चित है कि वह जब बोलेगा तो कुछ इतना भ्रमपूर्ण होगा कि भाव समझ न पाकर ये लोग शब्दों में ही डूबते-उतराते रहेंगे। राजनीतिक भाषा का यही सही उपयोग है। एक पत्रकार के होने के कारण वह उससे भिन्न है।

उसने कहा—'तो फिर आज प्रसन्न हम लोग इसी का फ़ैसला कर लें। सुमित्रा को आ जाने दो। वह मेरी तरफ़ रहेगी और तुम दोनों भक्त दूसरी ओर। पर एक बात तो बताओ? दोनों किसी गुरू के शिष्य हैं, या एक गुरू है और दूसरा शिष्य?'

सुमति बिनी को लेकर बाथरूम में चली गई।

प्रसन्न मुस्कराकर बोला—'किसी वकील ने लगता है तुम्हें ठगा है, जिसका बदला तुम हम लोगों से लेना चाहते हो। लखनऊ गये नहीं कि लड़ाई की ठानकर लौटे?''

सुमित्रा बाथरूम में थी, वहीं से बोली—'प्रसन्न भइया, मैं अभी आई। तब तक के लिए झगड़ा बचाये रहना। मिर्ज़ापुरी लठधारी तो होते हैं, पर जबान के भी तेज होंगे यह नहीं पता था।'

प्रसन्न टुथपेस्ट और ब्रुश लेकर बाथरूम की ओर जाने लगा तो दरवाज़े पर ही सुमित्रा मिल गई, पूछा—'क्या बात है?'

'हर्ष का लड़ने का मन हो रहा है। मैं ठहरा सीधा-सादा।'

सुमित्रा ने बताया—'रात-भर जागते रहे हैं गाड़ी में। सर दर्द कर रहा है। अभी कहते थे, सोने का मन हो रहा है। और पत्रकार तो वैसे भी झक्की होते हैं। एक बात पकड़ लें, तो पीछे पड़ जाते हैं। कुछ नहीं तो जो मन में आया बकने लगे। सब लोग अपना काम करो।'

हर्ष प्रसन्न के बिस्तर को खाली पाकर उस पर लेट गया और शाल सर से लेकर पैर तक ढककर जैसे सो गया।

सुमित्रा आई, यह उसने जान लिया। पीछे सुमति भी आ गई। पर वह सोने का बहाना किये पड़ा रहा और कुछ क्षण में सो गया। उसे किसी ने जगाया नहीं।

जब चाय तैयार हो गई, तब उसे पकड़कर हिलाया गया। वह फिर भी उठने वाला नहीं था। बिनी उसका मुँह बार-बार खोल देती थी। अन्त में उसे उठना पड़ा।

चाय पीने सब लोग बैठे तब हर्ष ने सारी बातें विस्तृत रूप से बताईं।

उसने इलाहाबाद से मिले उस पत्र का भी जिक्र किया जिसमें उसे 'दर्पण' का प्रकाशन करने के लिए आमन्त्रित किया गया था।

प्रसन्न ने पूछा—'क्या निश्चय किया तुमने ?'

'जो सब लोग कहें' उसने उत्तर दिया। 'अकेले तो मैं कुछ नहीं कह सकता।'

सुमति अपना मत प्रकट करने जा रही थी कि विनी के रोने का स्वर सुनकर उधर दौड़ पड़ी। वह दरवाजे से टकराकर गिर पड़ी थी। पैर की अँगुली से खून निकलने लगा था जिसे देख-देखकर वह और भी रोती थी। उसे चुप कराने के लिए एक-एक कर सारे लोग वहाँ पहुँच गये और उसकी अँगुली में दवा लगने का प्रबन्ध होने लगा। बात जहाँ-की-तहाँ रह गई।

## ३२

दोपहर का खाना खाकर हर्ष इलाहाबाद पत्र लिखने बैठ गया। उसने अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हुए लिखा कि वह एक सप्ताह के भीतर ही इलाहाबाद आ रहा है और तब उनके दर्शन करेगा। 'दर्पण' यदि इलाहाबाद से निकल सका तो ठीक रहेगा। वह भी ऐसा ही चाहता है। वहाँ उसे कुछ और सुविधाएँ भी प्राप्त होंगी।

पत्र उसने सबको पढ़कर सुना दिया। सुमति का जी नहीं माना, पूछ दिया—'और कौन-सी सुविधाएँ मिल सकती हैं, जरा हम लोग भी जान लें ?'

प्रसन्न ने उसे रोक दिया, बोला—'तुम हर्ष को बहुत परेशान करने

लगी हो सुमु । हर समय एक-न-एक प्रश्न खड़ा कर देती हो ।'

सुमति बोली—'यह तो इन्हीं से पूछो भइया। इधर ये कुछ बदले-से नहीं लगते हैं तुम्हें ?'

उत्तर हर्ष ने दिया। हर बार सुमित्रा पर सीधा व्यंग सुमति करती थी और फिर इस शिष्ट मनोरंजन में सब लोग आनन्द लेते थे। हर्ष ने न जाने कहाँ से बुद्धि के सहारे ऐसा उत्तर दिया कि सुमति को झेंपते ही बन पड़ा। अभी तक वह उससे स्नेह की बातें करता था, अब सुमित्रा के आ जाने के कारण एक-दो बार परिहास भी कर चुका था। आज उसी की पुनरावृत्ति करता बोला—'और सुविधाएँ कई हैं सुमति। एक तो तुम्हें सुनकर आश्चर्य होगा कि विश्वास बाबू होटल का काम छोड़कर 'दर्पण' में काम करेंगे। उन्होंने मुझसे जेल में मुलाकात करने पर यह कहा था। बोलो सुमति, यह क्या कुछ कम सुविधा है ?'

सुमति कुछ क्षण के लिए तो जैसे मात खाकर रह गई। विश्वास, जो उसका प्रारम्भ से विरोधी है और उसी को लेकर परिवार का सर्वनाश कर चुका है, 'दर्पण' में उसके साथ कैसे काम करेगा ? कहीं इसमें कोई छल तो नहीं है ? विश्वास के लिए कोई भी काम कठिन नहीं है, यह सिद्ध हो चुका है। जहाँ उसे इस हत्या के अभियोग में निर्दोष सिद्ध किए जाने का प्रयत्न हो रहा है, वहाँ यह निर्विवाद सत्य है कि वह इस अमानुषिक कृत्य में निश्चित रूप से सम्मिलित है। लगता है वह हर्ष की सहानुभूति से लाभ उठाकर फिर एक दिन उसे भी लेकर डूब जाना चाहता है और कहीं उसे यह पता हो गया कि सुमित्रा नाम की एक सुन्दरी उसके जीवन में आ गई है, तो वह उसका विश्वास प्राप्त कर एक दिन निश्चय ही उसे धोखा देगा और विश्वासघात की इतनी बड़ी घटना उपस्थित करेगा कि सबका जीवन नरक बन जायगा। वह हर्ष से दूर रहे, यह प्रयत्न वह करेगी। उसके छूटने के बाद ही वह कुछ ऐसा प्रयत्न करेगी कि एक पर दूसरे की छाया भी न पड़ सके।

उसने एक क्षण में इस परिहासपूर्ण वातावरण को गम्भीरता में परि-

वर्तित करते हुए कहा—'वे 'दर्पण' में तुम्हारा साथ देंगे ? नहीं, कभी नहीं होगा ऐसा। उनके कहे में आकर तुम अपना भविष्य मत बिगाड़ना हर्ष बाबू, यह मैं बताए देती हूँ। उनसे जितना बच सको, अच्छा है। हाँ तुम्हें सुविधा ही चाहिए तो सुमित्रा दीदी दे सकती हैं। वे समर्थ हैं।'

'और तुम सुमु, तुम क्या सहायता नहीं दोगी अपने हर्ष बाबू को ?' सुमित्रा ने बिनी के केशों में कंघा करते हुए पूछा।

'मुझे तो दीदी फिर उस टूटी किश्ती में सवार कराया जायगा, जिसके लिए सारे लोग जानते हैं कि यह दो गज़ भी आगे नहीं बढ़ सकेगी। उस पार पहुँचने की तो कहे ही कौन ? पर समाज, जो एक नदी है और जिसमें उत्ताल तरंगें उठ रही हैं; उसे हम सबको पार करने के लिए किसी-न-किसी का सम्बल चाहिए। अकेले हम उसे चाहे भले ही पार कर लें, पर हम पर—हमारी शक्ति पर किसी को विश्वास नहीं आता और अविश्वास न करने वाला यह पुरुष समाज है, जिसने पवित्रता की दुहाई देकर स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध को एक धार्मिक रूप दे दिया है। सुनो दीदी, मैं इसे शारीरिक सम्बन्ध से बढ़कर और कुछ नहीं मानती।'

हर्ष ने पत्र को लिफाफे में बन्द कर दिया था। उसमें कोई परिवर्तन नहीं किया। खिड़की के सहारे अपने पैर टिकाता हुआ बोला वह—'इसका प्रमाण दे सकती हो सुमति ?'

'प्रमाण, हः ! प्रमाण तो मैं स्वयं हूँ', उसने अपनी वाणी को असंयत बनाते हुए कहा—'उनसे मेरा विवाह हुआ। बिनी पैदा हुई, फिर सम्बन्ध-विच्छेद हो गया। इन तीन वाक्यों में सारी कहानी निहित है। उनके लिए सर्वत्र छूट है, कोई प्रतिबन्ध नहीं। मुझे ही चरित्र-हीना और चरित्र-भ्रष्टा कहा जाता है। वे उस पवित्रता की मर्यादा को धर्म के आडम्बर में बाँधकर बार-बार विवाह कर सकते हैं। यह यौन-सम्बन्ध-मात्र नहीं तो क्या है ? वासना की भूख, अनेक नारियों के अंग-स्पर्श, कामोद्दीपन की तृप्ति...।'

'चुप रहो सुमु' प्रसन्न बीच ही में बोल उठा। 'यह तुम्हें क्या हो गया है ?'

सुमति अविचल सी बैठी रही, बोली—'सुने लो भइया, जरा-सा और कहूँगी। कितनी बार कहूँ कि तुम इस सबमें अपवाद हो। तुम्हें जो ठेस लगे, उसके लिए मुझे क्षमा न करना। जो चाहे सो दण्ड दे लेना। मैं सब सहन कर लूँगी। मैं तो हर्ष बाबू के सामने उन्हीं से सीखा हुआ पाठ दोहरा रही हूँ। जिनकी यह शिक्षा है, उन्हीं को उस पर चलकर मैं दिखाऊँगी यह मेरा व्रत था, जो इन्होंने मुझसे एक दिन लिया था। मेरे विवाह के बाद ही इन्होंने 'दर्पण' का प्रकाशन प्रारम्भ कर दिया था। उसमें एक स्तम्भ यह केवल मेरे लिए ही बड़े प्रयत्नों से लिखकर तैयार करते थे, जिसे ग्रहण करने की शपथ मुझसे ली थी। उसके एक अंक में इन्होंने विवाह की समस्या पर अपने विचार प्रकट किये थे। इन्होंने लिखा था कि मेरा-इनका सम्बन्ध तो आत्मिक है, जो अटूट है। शरीर से जो सम्बन्ध स्थापित किया जाता है, वह टूट जाता है। मैंने इसी को चिर सत्य मानकर ग्रहण किया है। तभी मुझे उनसे सम्बन्ध टूट जाने का दुख नहीं। शरीर की क्रिया मन से संचालित होती है, जो चंचल है, तृप्ति के लिए लालायित रहती है। आत्मा सर्वोपरि है। वह निर्लिप्त है, वासना और राग-द्वेष मुक्त। निर्मल रूप है। उसी को पहचानने का मैंने प्रयत्न किया है, तभी इनके साथ एकान्त में रहकर भी पिपासा को अशान्त नहीं होने दिया है।'

कमरे में जैसे निस्तब्धता छा गई थी। सुमति ज्ञान की बातें इस अवसर पर करने बैठ जायगी, इसे कोई नहीं जानता था। सुमित्रा तो बिन्नी के केश हाथ में लिए ही रह गई। प्रसन्न दार्शनिक-सा बनकर खिड़की से बाहर आकाश की ओर देखने लगा। हर्ष को बड़ा आनन्द मिला। सुमति ने उसे कहीं पर भी ग़लत नहीं समझा, यही उसे सन्तोष था। वातावरण यदि कटु बन गया तो उसे प्रकृतिस्थ करने में समय लगेगा। उसने विनोद-प्रिय बनकर हँसते हुए सुमति की पीठ थपथपा दी, फिर बोला—'तुमने बिलकुल ठीक कहा है सुमु, शिष्य हो तो ऐसा हो, जैसी तुम हो। अब मैं समझा कि वह स्वामी जी कौन थे, जिनके उपदेश की चर्चा तुमने सवेरे की थी। मुझे गर्व करना-चाहिए कि वह गौरवशाली पद मुझे ही प्राप्त है।

पर एक बात है उसे भी सब लोग सुन लें ।'

उसके मुख की ओर सब लोग निहारने लगे ।

हर्ष ने कहा—'मुझे माफ़ किया जाय। आगे ऐसा न हो कि मैं स्वामी जी के स्थान पर केवल स्वामी रह जाऊँ ।'

सुमति को हर्ष ने फिर परिहास की मोटी चुटकी से आनन्दित करने के लिए यह कह दिया था ।

सुमित्रा को अवसर मिल गया। उसे सुमति हर समय कुछ-न-कुछ कहकर चिढ़ाने का प्रयत्न करती रहती थी। उसने कहा—'बोल सुमु ऐसी ग़लती तो नहीं करेगी ? वाह हर्ष बाबू, क्या बात कही है ? मान गई पत्रकार का दिमाग़ तभी तो सबसे ऊँचा माना गया है। बोलती क्यों नहीं अब, उपदेश और ज्ञान की बातें—आत्मा और शरीर का सम्बन्ध हम सांसारिकों के बीच करने बैठी थी ? कह दे हर्ष तेरे स्वामी हैं। एक स्त्री के दो पति—घोर कलियुग है ।'

प्रसन्न अपनी उपस्थिति ऐसे अवसरों पर, जब सीधे सम्बन्ध स्थापित करने का विनोद चलने लगता था, नगण्य समझकर वहाँ से हट आता था। इस समय भी उसे बैठा रहना ठीक नहीं लगा। बिनी के केश सँवर जाने पर और उसमें फ़ीता लग जाने पर वह उसकी अँगुली पकड़ा कर बाहर लेकर चला गया। अब पूर्ण स्वतन्त्रता थी ।

सुमति पराजित होने वाली युवती नहीं थी, बोली—'दो क्या, एक स्त्री के पाँच पति तक हो चुके हैं। कलियुग नहीं था दीदी, भगवान् कृष्ण का युग था। उस युग का आदर्श हम आज भी मानते हैं और उस काल को भारत का सर्वोन्नत काल मानते हैं। उस पाँच पति वाली महानारी को आज हम मा कहकर स्मरण करते हैं ।'

सुमित्रा को जब और कुछ नहीं समझ पड़ा तो उठकर सुमति के गले से लिपट गई। प्यार से अपने दाँतों से उसके कपोलों को काटती हुई उसे गुदगुदाने लगी। सुमति चीख उठी। दाँत उसके कपोल पर अपना निशान बना चुका था ।

हर्ष ने उधर देखा—जी हुआ देखता रहे, फिर न जाने क्या सोचकर मुँह फेर लिया और मुस्कराता रहा। उनके परस्पर आलिंगन और अंग-स्पर्श आनन्द उसे दूर से मिलने लगा था।

सुमति ने देख लिया कि हर्ष मुँह फेरकर मुस्करा रहा है। उसने सुमित्रा से कहा धीरे से—'दीदी, आज मौका है। सम्पादक जी को जरा छकाया जाय। पर एक शर्त रहेगी। साथ मेरा ही देना होगा। उन पर मैं स्वामी कहकर भी अपना अधिकार नहीं जताना चाहती। मेरे पति जो हैं, अच्छे हों या बुरे, वे ही रहेंगे। यह तो तुम्हारा सौभाग्य है कि तुम हर्ष बाबू को पा रही हो।'

सुमित्रा उसके गले में बाहें डाले थी, और बीच-बीच में उसे गुदगुदा देती थी, बोली—'बहको मत सुमु! मेरा जो कुछ है वह सब तुम्हारा भी है, सदा रहेगा। हाँ, कैसे छकाओगी उन्हें?'

'वह सब मैंने सोच लिया है। मेरा इशारा पाये बिना तुम बोलना मत।'

सुमित्रा राजी हो गई।

सुमति ने बताया कि वह किस प्रकार हर्ष को अपने निकट बुलाकर गम्भीर मुद्रा में प्रसन्न को बुला लाने के लिए कहेगी और तब उसके आ जाने पर हर्ष पर अभियोग लगाएगी कि सुमित्रा की अनुपस्थिति में उसने बलपूर्वक उसका चुम्बन ले लिया है। उसके आपत्ति करने पर भी वह नहीं माना। प्रमाण में अपने कपोल पर बना दाँत का निशान दिखा देगी। कैसा बढ़िया मजाक रहेगा। उसकी बुद्धि का लोहा सब मानेंगे कि नहीं?

सुमित्रा ने उसकी आँखों में देखकर कहा—'इस अवसर पर यह सब शोभा नहीं देती री। तेरा दिमाग़ है कि उसमें फ़ितूर आ गया है? बुद्धि का लोहा तो कोई क्या मानेगा, हाँ तुझे चिढ़ाया करेंगे।'

हर्ष अपना ध्यान अख़बार में लगाना चाहता था, पर लग नहीं रहा था। आज ये दो नारियाँ, परस्पर मिलकर न जाने क्या कर बैठें? वह सतर्क होकर रहने की सोचने लगा।

सुमति भवें चढ़ाकर बोली—'तुम न जाने क्यों भावुक हो जाती हो

दीदी ? समय तो यही ठीक है। फिर हम लोग जाने मिलें-न-मिलें। वे जेल से छूटने वाले हैं। हर्ष बाबू को इलाहाबाद जाना है। प्रसन्न भइया को मैंने इतने दिनों से रोक रखा है। तीन-चार दिन के लिए आये थे। उनका रेडियो-प्रोग्राम भी अगले हफ्ते में है। उन्हीं के कारण तुम्हें भी दीदी रुकना पड़ा। यहाँ आकर तुम्हारी भी तैयारी नहीं हो रही है। हम लोग कहीं लखनऊ चले तो न जाने क्या व्यवस्था हो ? ऐसे दिन, इतने प्यार और खुशी के दिन क्यों जीवन में फिर आ सकेंगे ?' उसकी आँखें डबडबा आईं।

सुमित्रा ने कहा—'धत् पगली, रोती है ? अपने-आप तो भावुकता में बह रही है और मुझे रोक रही है ? इससे अच्छे दिन आयेंगे सुमु, इतने अच्छे कि घर-भर में स्नेह और प्यार की मृदु बयार बहने लगेगी। आज जो दूर है, वह निकट होगा, इतना निकट कि उसकी स्वाँस की गहराई तू नाप सकेगी। तेरी माँग में वे अपने हाथ से फिर सिन्दूर की लाल रेखा खींचेंगे और तू इतनी पुलकित होगी, तेरा रोम-रोम इतना सिहर उठेगा कि तू स्वयं उनसे आबद्ध हो जायगी। जो आज भूल है, वह कल विस्मृति बन जायगी। तब तू होगी, वे होंगे और बिनी, नहीं तेरी गृहस्थी और भी भरी-पूरी होने के लिए मचल उठेगी।'

सुमति के आँसू रुक गये थे। सुमित्रा ने उन बूँदों को अपने अंचल में ले लिया था। आगे बोली—'देख आँसू निकले अब कि गालों को मसल दूँगी। अभी तो काटा ही है और इस बार ऐसी चुटकी लूँगी कि जीवन भर नहीं भूलेगी।' फिर अपने स्वर को मार्मिक बनाकर कहने लगी—मुझे तो सुमु, तूने ही नये प्राण दिये हैं। कृतज्ञता प्रकट करूँ, तो नहीं कर सकती। सोचती हूँ कि जो संगीत अपनी तान छेड़कर स्वर को झंकृत कर गया है, वह आजीवन इसी प्रकार अपनी मादक स्वर-लहरी से मुखरित होता रहे। प्राण-वंशी सदा बजती रहे, जिसकी पुकार हृदय को गुंजारित करती रहे।'

विषय कहाँ से उठा था और कहाँ जाकर समाप्त हुआ, इसकी ओर अब उन दोनों का ध्यान नहीं रह गया था। हर्ष को छकाने की बात न जाने

कहाँ विलीन होती चली गई थी। सुमित्रा उसकी ओर देखने लगी थी।

सुमति ने स्वस्थ होकर पूछा—'इलाहाबाद पहुँचकर प्रसन्न भइया के साथ रहोगी, या अलग मकान लोगी? मैं चाहती हूँ कि तुम उनकी छाया से दूर न रहो। उन्होंने तुम्हें नया जीवन दिया है दीदी। उन्हें तुम कभी मत छोड़ना।'

सुमित्रा सम्भलकर बैठ गई थी बोली—'कैसी बातें करने लगी है सुमु? तू क्या मुझसे दूर जा रही है कहीं? विश्वास बाबू राजी हो गये, तो हम सब पास-पास रहेंगे। तेरी आवश्यकता मुझे हर समय रहेगी। पर तू इन सब बातों को लेकर क्यों बैठ गई? मैं यह सब अब नहीं सुनूँगी।'

'न सुनो दीदी, तो जो कुछ सुना है उसी को स्मरण कर लिया करना।'

'सुमति'!

'मैंने ठीक कहा है दीदी। मेरा क्या होना है मैं जानती हूँ। मेरे भीतर जो हूक है और उसमें जो दर्द है, वह किसी भी क्षण अपनी पीड़ा भूलता नहीं। मैं हँसती हूँ दीदी, क्यों? तुम ग़लत समझती हो। मेरी नारी ने जितना तिरस्कार मेरा किया है, मुझे जितना लांछित और अपमानित किया है, उतना कभी किसी का नहीं किया गया होगा। तभी मैं आत्मा और शरीर की बात करती हूँ। मेरा शरीर अब जो चाहे जैसे स्वीकार करे। मेरा जो सत्य-अंश है और जिसमें मेरी आत्मा का आनन्द निहित है, उसे केवल एक व्यक्ति पा सका है। मैं उसी की हूँ, उसी की होकर मरूँगी। वे, जिनका तुमने अभी नाम लिया है, एक यात्री की भाँति मिले। कुछ दिन तक साथ-साथ यात्रा की। मानवता और शरीर के धर्म के नाते एक-दूसरे ने आवश्यकताओं की पूर्ति में भाग लिया, फिर यात्रा अधूरी छोड़कर एक व्यक्ति तो बीच से ही चला गया और दूसरा—वह उसी यात्रा पर चल रहा है। जब तक साँस चलेगी, चलता रहेगा। पर साँसों की अवधि पूर्ण हो आई है, यह वह जान गया है। उसे दीदी, कोई नहीं—'

'चुप रहो सुमु। क्या हो गया है तुम्हें?' कहकर सुमित्रा ने उसके मुख पर अपना हाथ रख दिया।

सुमति ने बलपूर्वक हाथ हटा दिया—कहने लगी—'मेरी सुन लो दीदी, नहीं तो बाद में पछताना ही हाथ रह जायगा। तब तुम मुझे लेकर रोओगी-चिल्लाओगी, पर मैं एक शब्द नहीं बोल पाऊँगी। आँखें भी नहीं खोल पाऊँगी। बिनी तुम्हें सौंप रही हूँ। उसके पिता से कहना, अभी नहीं मेरे न रहने पर, कि इस दुर्घटना का अभिशाप मुझसे सहन नहीं हो सका। मैं जीवित केवल इस कारण रही कि अन्त तक परिणाम देख लूँ। क्यों, चिन्ता हो रही है दीदी? मुझे पगली बता रही थीं। मैं तो समझती हूँ तुम खुद पागल हो चली हो। अरे, रोने लगीं। यह लो, मुझे भी दुखी कर रही हो। यह ठीक है। मेरे आँसू तुम पोंछो और तुम्हारे मैं।'

सुमित्रा अपने को रोक नहीं सकी, फूट-फूटकर रो पड़ी।

हर्ष ने मुड़कर देखा। सुमित्रा रो रही है और सुमति उसके आँसू अपने अंचल से पोंछ रही है। अखबार फेंककर वह उसकी ओर दौड़कर गया, पूछा—'क्यों रो रही हो सुमित्रा? सुमु क्या हो गया है?'

'कुछ नहीं, मैंने कुछ कह दिया तो रोने लगीं। बताओ हर्ष बाबू, जो पैदा हुआ है वह मरेगा नहीं क्या?'

हर्ष इस अवसर पर, जहाँ अभी कुछ देर पहले प्रगाढ़ आलिंगन हो रहा था, मरने-जीने का अप्रिय प्रसंग आ जाने का कारण नहीं समझ सका कहा—'वह सब तो ठीक है, पर उसे लेकर बात करने की क्या जरूरत आ पड़ी?'

सुमित्रा के आँसू कम हो गए थे, उन्हें पोंछती हुई कहने लगी—'अपनी इस सुमति को समझाओ हर्ष बाबू। इसे न जाने क्या हो गया है? कहती है अब जीना नहीं···।'

'क्या कहा दीदी, जीना नहीं चाहती हूँ, क्यों सुनूँ जरा?' सुमति ने बीच ही में बात काट दी।

सुमित्रा बोली—'जो-कुछ इसने कहा है, मैं उसे दोहरा तो नहीं सकती। पर तुम्हें सब बताऊँगी। तभी यह ज्ञान की बातें करने लगी है।

देखो न, मुझे रुलाकर मुस्करा रही है।'

सुमति ने कहा—'छोड़ो उसे। हाँ देखो हर्ष, दीदी ने कितने जोर से काटा है। जैसे मुझे दर्द नहीं होता।' कहकर वह उसके निकट आकर उसका हाथ पकड़कर अँगुलियाँ अपने कपोल पर फेरने लगी।

सुमित्रा देखती रही। सुमति उसका दूसरा हाथ लेकर उसकी अँगुलियाँ भी अपने दूसरे कपोल पर फेरने लगी। फिर उसके ठीक सामने अपना मुख ले जाकर कहा—'देखो मेरी आँखों में। इनकी ज्योति क्या बुझ रही है? सम्भालो हर्ष मुझे—देखो मैं गिरी। आज तुम्हारा स्पर्श पाया है, कितना उन्मादक—कितना उद्दीप्त···!'

हर्ष ने सम्भाला। सुमति अचेत हो उसकी भुजाओं में बँध गई थी।

## ३३

लखनऊ जाने की बातचीत पक्की हो गई। सुमति ने अत्यन्त उत्साह प्रकट किया। सुमित्रा इस उत्साह के लक्षण अच्छे नहीं समझ रही थी। सुमति की ओर से वह सचेत रहना चाहती थी। उसकी बातों को उसने अवसर पाकर प्रसन्न और हर्ष दोनों को बता दिया था। प्रसन्न ने कहा था—'हर्ष की पराकाष्टा पर ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि बुद्धि की स्थिरता नहीं रहती। सुमति के जीवन का नया अध्याय प्रारम्भ होने जा रहा है। वह विश्वास को पाकर फिर ठीक हो जायगी।'

हर्ष का भी ऐसा ही कुछ विचार था। हर्ष और विषाद की पराकाष्टा का परिणाम एक-सा होता है। सुमित्रा के लिए अब आवश्यक हो गया था कि वह सुमति के साथ रहे। उसकी मानसिक उद्विग्नता की ओर विशेष

ध्यान रखे।

दो दिन बनारस रहकर हर्ष के साथ सब लोग लखनऊ आ गए। होटल में एक कमरा लिया गया, उसी में हर्ष ने सबको ठहराया।

सुमति का मानसिक उद्वेग भीतर-ही-भीतर उसे जैसे जड़ करता जा रहा था। वह निर्जीव होती जा रही थी। हृदय की गति शिथिल होती जान पड़ने लगी थी। बाहर से वह कुछ भी नहीं प्रकट होने देती। मुख पर प्रसन्नता का भाव प्रस्फुटित किए रहती। बीच-बीच में परिहास भी कर लेती। सब कुछ पूर्ववत् चलाने का प्रयत्न करती।

हर्ष ने पूछा—'पहले विश्वास से मिला जाय या हरबंस से ?'

सुमति बोली—'हरबंस से पहले मिलना ठीक होगा।'

हर्ष ने व्यवस्था बताई कि जेल में मुलाकात करने की आज्ञा पाने में अभी दो-तीन दिन लग जायँगे, तब तक हरबंस से मिल लिया जाय। वह मिलना चाहती है। हाँ, उसे ब्याह की बधाई दे देना।'

सुमति बोली—'बधाई तो उसे तब देती जब वे उससे ब्याह कर लेते। उन्होंने तो चाहा था, सारी कोशिश की, पर वही नहीं राजी हुई। उसे तो मैं देवी की साक्षात् प्रतिमा मानकर पूजूँगी जो किसी का दर्प तो चूर-चूर कर सकी है। आज जीवन-रक्षा के लिए हरबंस के सामने हम लोग अंचल फैलाते हैं। भला इसमें किसी का क्या दोष हो सकता है ? सब अपना, अपने भाग्य का और किसी का नहीं।'

हर्ष ने समझाया—'अब जो बीत चुका है सुमु, उसे भूले ही बनेगा। तुम दुख क्यों करती हो ? हम लोग सब बिगड़ा बना लेंगे।'

उसने विषाद से हँसकर कहा—'बिगड़ा किसने बनाया है हर्ष ? चलो, हरबंस से मिलने चलें ? मेरा पागलपन तो अब मुझे काट खाने को दौड़ने लगा है। दीदी ठीक कहती है। मैं पगली हूँ।'

हर्ष ने इधर अनुभव किया कि सुमति अब उससे केवल हर्ष कहने लगी है। पहले बाबू शब्द और जोड़ लेती थी। अब उसे अनावश्यक समझकर निकाल दिया है। इस सम्बन्ध में कुछ न कहकर वह ताँगा लेने

चला गया।

प्रसन्न ने सुमति के निकट आकर स्नेह से उसके सर पर हाथ रखकर पूछा—'तुम्हें क्या हो गया है सुमु? यह बातें जो तुम करने लगी हो, क्या ठीक हैं? अब जब सारा काम बनने वाला है, तब ऐसा क्यों?'

सुमति ने कमरे में चारों ओर दृष्टि डाली। उन दोनों को छोड़कर और कोई नहीं था। सुमित्रा बिनी को लेकर बाहर वाले बरामदे में चली गई थी, और वहाँ से सड़क पर आते-जाते जनसमूह को देखने लगी थी।

उसने उत्तर दिया—'प्रसन्न भइया, तुम तो सब-कुछ जानते हो। मेरा नारी-हृदय चीत्कार कर रहा है। वे इतने भीषण आघात को सहन कर गए हैं, पर मैं उससे दूर रहकर और उसकी छाया से भी बचकर जैसे मरी जा रही हूँ। अपने को सब-कुछ समझाती हूँ, पर कुछ देर बाद लगता है कि मन बैठा जा रहा है। वे विवाहित हैं, मैं उनकी पत्नी हूँ, फिर भी एक हत्या और नारी-अपहरण के मामले में उन्हें जेल में बन्द किया गया है, यह सब मेरे लिए एक पहाड़ गिरने से कम नहीं है। अखबारों में ऐसी खबरें नित्य छपा करती हैं। स्वयं हर्ष ने जेल की दूसरी घटना बताई थी। याद तो होगा न? जिस क़ैदी के हाथ से हथकड़ी के साथ वे बाँधे गए थे, उसका भी ऐसा ही मामला है। वह पराई स्त्री से सम्बन्ध जोड़े था। उसकी भी स्त्री-बच्चा है, जो मिलने आई थी। उस स्त्री के पति ने सन्देह में आकर उसकी हत्या कर डाली, किन्तु ऐसा जाल रचा कि स्वयं बच गया। पकड़ा गया वह व्यक्ति जिसका सम्बन्ध था। प्रेमी द्वारा प्रेमिका की हत्या—यह शीर्षक दिया गया होगा अखबारों में। पर वह स्त्री गाँव की है। उसके लिए यह सब कुछ नहीं। नीची जाति की होने के कारण वह अपने पति के फाँसी पा जाने पर दूसरा ब्याह कर लेगी। प्रसन्न भइया, यह अनपढ़ गाँव की स्त्रियाँ भावुक नहीं होतीं। कठोर धरती पर जीती हैं, इसी से उनका जी हम लोगों से बहुत कठोर होता है। वे कोमल होकर रहना क्या जानें? जब वियोग होता है, तो बड़े ऊँचे स्वर से गा-गाकर रो लेंगी और बाद में फिर घर बसा लेंगी। स्त्री पुरुष के बिना रह नहीं सकती, इस समाज में। यही

नियम है, चलता आया है, चलता रहेगा। पर मैं···मेरी तो स्थिति ही दूसरी है भइया। जो सदैव ताजे फूलों से अपना मन बहलाता रहा है, उसे काँटे लगें तो भी क्या बात है? पर वह बासी फूलों से अपना मन सुवासित नहीं करेगा। कई बार जेल की नहीं, पर और प्रकार की विपत्तियाँ आ चुकी हैं; पर उन्होंने वे सब ऐसे झेली हैं जैसे कोई राष्ट्र-सेवक देश के नव-निर्माण और उत्थान के लिए अनवरत् परिश्रम करके झेलता है। उनके जीवन का एक ही लक्ष्य है कि वे···।'

कमरे में सुमित्रा आ गई थी। बिनी दौड़ी आकर सुमति से लिपट गई और बाजार का हाल अपनी तोतली बोली में बताने लगी। सुमति ने उसे अपने शरीर से इतना कसकर चिपटा लिया कि जैसे वह उसे छोड़ेगी नहीं। फिर उसके गालों का चुम्बन लेने लगी बार-बार।

सुमित्रा ने प्रसन्न को गम्भीर मुद्रा में देखकर पूछा—'क्या बात है भइया? किस सोच-विचार में डूबे हो?'

सुमति बोल उठी—'भइया के सामने हम दोनों बहनें एक पहेली हैं दीदी। देखती नहीं हो, सूखकर आधे रह गए हैं? हम लोग कैसी हत्-भागिनी हैं जो उन्हें सुख देना तो दूर चैन से बैठने भी नहीं देतीं? उन्होंने अपना घर नहीं बसाया, किसी से प्रीति नहीं जोड़ी। जितना स्नेह संचित कर पाया था, हम दोनों पर लुटा दिया। पर आह रे नारी भाग्य! तुझे वे नहीं सुधार सके। तू कितना क्रूर है, इसे वे ही जानती हैं। दीदी, हम लोग ऐसा व्रत लें कि भइया को चिन्ता मुक्त कर दें। उनकी आयु लम्बी हो। इनकी छाया हम पर सदा पड़ती रहे।'

सुमित्रा कुछ भी समझ नहीं सकी। शब्दों के अर्थ तो वह लगा सकी, पर यह नहीं जान सकी कि किस प्रसंग में सुमति अपनी व्यथा व्यक्त कर रही है। वह कहीं फिर बेसुध न हो जाय, इस भय से वह उसके निकट जा बैठी। सुमति जो अभी उसकी अनुपस्थिति में अपने मन की करुणा उँडेल चुकी है और जिससे कमरे का सारा वातावरण विक्षुब्ध हो उठा है, उसे वह कहीं सुन पाती तो वैसा कुछ नहीं सोचती।

प्रसन्न ने कठिनाई से कह पाया—'सुमु, तुम मुझे क्यों इतना दुखित करती हो ? बोलो, क्या चाहती हो ?'

सुमति इसका उत्तर दे पाती कि हर्ष आ गया, बोला—'ताँगा आ गया है। सुमु जो चाहती है वह हम लोग कल्पना में भी नहीं ला सकते। वह मरना चाहती है।' कहते-कहते उसका गला रुँध गया, जिसे साफ कर और अपने स्वर को प्रकृतिस्थ कर बोला—'पर साफ़ सुन लो सुमति, तुम्हारे लिए ही मैं जीवित हूँ। जब तक तुम रहोगी, मेरी भी मृत्यु नहीं हो सकती और तुमने श्वास छोड़ दिया तो मैं भी···।' उसकी आँखें डबडबा आईं, जिनमें तैरते आँसुओं को छिपाकर वह बाहर आ गया।'

सुमित्रा ने सुमति को हिलाकर कहा—'सुमु, तुझे शपथ लेनी पड़ेगी कि तू नहीं मरेगी। हर्ष की ओर देख और फिर मैं हूँ तेरी दीदी। हम दोनों ने कोई समझौता एक दिन किया था, याद है न ? लखनऊ हम लोग आ गए हैं। उसे क्या तोड़ देगी तू निष्ठुर सुमति ? मैं कहती हूँ इतनी कठोर क्यों बनती जा रही है ?'

सुमति के ऊपर मानो हर्ष की वाणी, उसके सजल नेत्र, सुमित्रा की विह्वलता, किसी का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ा। उसने खड़े होते-होते कहा—'चलो दीदी, ताँगा खड़ा है। हरबंस से मिलने चलना है। वहाँ से लौटने पर शपथ लूँगी। मैं ऐसी थोड़े ही हूँ कि कह दिया और मर गई ? चल बिनी, तेरे पापा···छिः, हर्ष ताँगा लाए हैं।'

यह सुमति इतनी दुरूह क्यों होती जा रही है ? स्वयं कहीं और है और मस्तिष्क कहीं और। सब कुछ अस्त-व्यस्त-सा होता जा रहा है। उसकी आन्तरिक दृष्टि जैसे कहीं दूर जाकर अटक गई है, वहाँ से हटना ही नहीं चाहती।

प्रसन्न कमरे से बाहर निकल गया। पीछे सुमति निकली और फिर बिनी को साथ लेकर सुमित्रा। उसने ताला बन्द किया और कुंजी अपने पर्स में रख ली। जीने की सीढ़ियाँ पार करते समय सुमति ने कहा—'दीदी बधाई, हर्ष की चाबी अभी से रखने लगीं ! यहीं लखनऊ में ही अपने

सामने दोनों का विवाह करूँगी। दीदी, तुम्हें इतना सजाऊँगी उस दिन, इतना शृंगार करूँगी तुम्हारा कि विश्व-सुन्दरी भी तुमसे ईर्ष्या करने लगे। सारे अखबारों में इस आदर्श-विवाह के फोटो भेजूँगी।'

सुमित्रा पुलकित हो उठी। विवाह का सुख अब उसके लिए एक मृग-तृष्णा नहीं रहा है; न वह मरीचिका ही है कि भूली-भूली-सी पागल बनी घूमे। अब तो उसे वास्तविक रूप में सब प्राप्त होगा—सब कुछ, जिसे पाने के लिए उसका अंग-अंग विकसित हैं। फिर भी उसने कहा—'चुप री, नहीं तो सीढ़ियों से नीचे गिरा दूँगी।'

'गिरा क्यों दोगी, वैसे भी मार डालो दीदी? तुम्हें अधिकार है।' फिर दीर्घ निःश्वास लेकर अन्तिम सीढ़ी पार करती हुई बोली—'मैं तो वैसे भी अपने सन्ताप से मर रही हूँ। मरे को क्या मारोगी?'

सुमित्रा ने सब सुन लिया। उसकी आँखें भर आईं। जल्दी से उन्हें रूमाल से पोंछ डाला।

ताँगे में सब लोग बैठ गए। हर्ष और प्रसन्न आगे बिन्नी को लेकर बैठे सुमित्रा और सुमति पीछे। ताँगा शरणार्थी बस्ती की ओर चल पड़ा।

सुमित्रा चुपचाप रहना चाहती थी। अभी जो-कुछ सुमति कह गई है, वह उसका प्रलाप है या वह वास्तव में अपनी मृत्यु का आवाहन कर रही है, इस पर वह विचारती आई थी। एक नारी के नाते वह अपने स्वभाव की दुर्बलता से भी परिचित थी। स्त्री जाति का ऐसा स्वभाव होता है कि ईर्ष्या उनमें जन्मजात होती है। तब वह (सुमति) कहीं इसलिए तो निराश नहीं हो गई है कि हर्ष उसकी (सुमित्रा) ओर प्रभावित हो गया है? सुमति समझने लगी हो कि अब उससे स्नेह की डोर टूट रही है। विश्वास के चरित्र पर उसे विश्वास नहीं। वह उसे लेकर फिर अपनी गृहस्थी चलाने लगेगा, इसमें उसे सन्देह है और हर्ष जिसका उसे सहारा था उससे छूट रहा है। तब तो वह एकदम निराश्रिता हो जायगी। हर्ष कभी आ सकेगा तो आया करेगा, अन्यथा पत्र लिखकर कोई बहाना बना दिया करेगा। अब उसको एक आकर्षण जो मिल गया है। और तब उसे लगा कि इसीलिए

उसने अपनी चिर-अतृप्ति और अमिट-साध को मिटाने के लिए हर्ष का आलिंगन किया है। उसे अपने कपोलों का मृदुल स्पर्श दिया है। इतने से उसने सन्तोष कर लिया है। आगे क्या कुछ नहीं चाहिए? सम्भव है वह अवसर पाकर उसके लिए···। नहीं, छिः वह क्या सोच गई है? कितनी कुरूपता उसके विचारों में आ समाई थी? सुमति अपनी मर्यादा को नहीं भंग होने देगी। अपने चरित्र को, जिसे वह अभी तक पवित्र रखती आई है, कलंकित नहीं करेगी। नारी, तू कितनी संकुचित है, कितनी क्षुद्रता है तेरे विचारों में? कहीं भी विशालता नहीं? तनिक उदार बन। आत्म श्लाघा और प्रवंचना से बचकर चल।

सुमति ने बीच में कुछ कहना चाहा, पर देखा कि सुमित्रा खोई-सी कहीं और है, तो नहीं कहा कुछ। बिनो से पूछ उठी—'क्यों री, कैसे मजे में बैठी है? कहाँ जा रही है?'

उसने जो कुछ बताया उससे यह अर्थ निकला कि वह ताँगा में बैठी जा रही है, बस इतना वह जानती है।

ताँगा और तेज चलकर शरणार्थी बस्ती में पहुँच गया था। जब मोड़ पार करने लगा तो हर्ष ने अँगुली के संकेत से बताया कि सामने की इमारत मदन होटल थी। इसी में विश्वास बाबू, हरबंस और तेजासिंह रहते थे। अब पुलिस ने अपना ताला डाल रक्खा है। हरबंस ने उस पर अधिकार पाने के लिए अर्जी दी है और मिल जाने पर उसका पति आनन्द इस होटल को चलाएगा।

ताँगा आगे बढ़कर एक मकान के सामने रोक दिया गया। सब लोग उतर पड़े। हर्ष ने दरवाजा खटखटाया। मकान मालिक की लड़की ने दरवाजा खोला। इतने लोगों को देखकर वह आश्चर्य में पड़ गई। हर्ष ने कहा—'इन लोगों को अन्दर हरबंस के पास ले जाओ। वह इन्हें जानती हैं। हम लोग यहाँ कमरे में बैठे हैं।'

लड़की के पीछे सुमति और सुमित्रा बिनो को साथ ले अन्दर चली गईं। हरबंस अपने कमरे में पड़ी हर्ष का दिया हुआ उपन्यास पढ़ रही थी।

इन लोगों को कमरे में खड़े देखा तो उठकर बैठ गई। उपन्यास बन्द कर एक ओर रखती हुई बोली—'ओह! आप लोग हैं। आइये-आइये। बनारस से कब आना हुआ?'

सुमति ने पूछा—'पहचाना हम लोगों को? परिचय मैं बताती हूँ। मैं हूँ सुमति और यह सुमित्रा। यह छोटी बच्ची बिनी है।'

हरबंस ने उत्तर दिया—'मैंने तो पहले ही पहचान लिया था। हर्ष बाबू से बार-बार कहा था कि मुझसे आप लोगों को मिलायें। सुमति दीदी, आपसे से तो मिलने, आपको देखने का बड़ा मन हो रहा था। आज से नहीं बहुत पहले से।'

सुमित्रा और सुमति दोनों कुर्सियों पर बैठ गई थीं। बिनी मेज पर रखे गुलदस्ते के फूल देखने लगी थी।

हरबंस ने मकान मालिक की लड़की का नाम लेकर उसका परिचय कराया फिर उससे अपनी भाषा में कुछ कहा, जिसे सुनकर लड़की चली गई।

सुमति ने पूछा—'आप मुझे पहले से कैसे जानती हैं?'

हरबंस ने कह दिया कि विश्वास बाबू उसका नाम लेते थे। एक बार यह भी बताया था कि वह उसकी पत्नी है।

सुमति को ग्लानि जैसे काट खाने को दौड़ आई। जी में आया कि उठकर अपना मुँह छिपाकर भाग जाय यहाँ से। यह हरबंस उसके विषय में न जाने क्या सोचती होगी? विश्वास ने यह भी जरूर कहा होगा कि वह चरित्र-भ्रष्टा है। हर्ष से उसका अनुचित सम्बन्ध है, तभी उसने छोड़ दिया है। वह अपनी दृष्टि में आप ही जैसे गिर गई। सामने आँखें मिलाकर बातें करने का साहस नहीं हो सका।

सुमित्रा ने स्थिति समझ ली। उसने बुद्धिमानी से काम लिया। हरबंस की वीरता की प्रशंसा करती बोली—'हम लोगों ने आपके विषय में बहुत-कुछ सुना है। आपका नाम तो अखबारों में छपा था। एक बात आपसे जानना चाहती हूँ, बता सकेंगी?'

'पूछिये ।'

'आपको ले जाने के बाद उन बदमाशों ने आपके साथ क्या किया ?'

'क्या किया ? जो एक औरत के साथ किया जाता है। मुझे जलील किया, साथ में अपना भी मुँह काला किया ।'

'आपने उस सबको सहन कैसे कर लिया ? आप तो सुना है उसे इस दुनिया से भेजकर अपना छुटकारा स्वयं कर आ पाई हैं। उस सबके पहले ही उसे······ ?'

'हाँ सुमित्रा दीदी, हो तभी सकता था सब कुछ, पर मुझे समझ बाद में आई। जब मैं लूटी जा चुकी थी। जब पास कुछ नहीं रह गया तो जान पर खेली। सोच लिया था कि अब आगे मौत है और उसे सहन क्या यों ही कर लिया ? आदमी जब जानवर हो जाता है तो उससे बचना कठिन हो जाता है। वह इन्सान नहीं, भेड़िया था।'

लड़की लौट आई थी और अपनी पंजाबी भाषा में कुछ कह चली गई।

सुमित्रा आगे कुछ और पूछती कि हरबंस बोली—'चलिए बाहर कमरे में बैठें। वे लोग अकेले बैठे ऊब रहे होंगे।'

तीनों बाहर कमरे में आ गईं। प्रसन्न ने कहा—'मेरी बधाई लो हरबंस, अपनी वीरता के लिए और फिर ब्याह के लिये। मेरा नाम प्रसन्न है।'

'जी मैं जानती हूँ। आप सुमित्रा दीदी के गुरू हैं। आज शाम तक आप लोग नहीं जा सकेंगे। मेरी मेहमानी माननी होगी। फिर म्यूज़िक का प्रोग्राम रहेगा। आपको पंजाबी गीत सुनवाऊँगी। यह जो मकान मालिक की लड़की है, बड़ा सुन्दर गाती है और डान्स तो ऐसा करती है कि आप लोग देखते रह जायँगे। देखिये, मैं बहाना नहीं सुनूँगी। आपको मेरी बात माननी पड़ेगी।'

हर्ष ने हरबंस की ओर निहारा। उसने कहा—'आप क्या देखते हैं ? मैं ठीक कह रही हूँ। सुमति दीदी और आपको भी गाना पड़ेगा आज। क्यों सुमति दीदी, विश्वास बाबू के आने की खुशी में क्या नहीं गाओगी ?'

सुमति को लगा कि उसका परिहास किया गया है। हरबंस विश्वास के साथ उसका नाम जोड़कर उसपर कटाक्ष कर रही है। बोली—'मैंने गाना तो आज तक नहीं गाया, हाँ रोने को कहो तो रो घंटों सकती हूँ। क्यों हर्ष, भला मुझे गाना कहाँ आता है?'

हरबंस ने तुरन्त कह दिया—'अरे दीदी, रोना तो है ही हम औरतों की ज़िन्दगी में, पर कभी-कभी रोते-रोते भी गाना पड़ता है। हर समय रोया भी तो नहीं जाता। हर्ष बाबू ने मुझे यही बताया है।'

तो अपने ब्याह की खुशी में आप यह कह रही हैं?'

'नहीं, मिलन की खुशी में।'

सुमित्रा ने फ़ैसला किया—'दोनों में, एक का ब्याह है, दूसरे का मिलन।'

'और तुम्हारा दीदी?'

'चुप बेवकूफ़।'

हरबंस भावपूर्ण नेत्रों से सुमित्रा की ओर देखकर मुस्करा उठी।

## ३४

सुमति इधर इतनी स्पन्दनशील और भाव-प्रवण होती गई थी कि अपने जीवन की निस्पृहता ही उसके पास रह गई थी। अपने कर्मों की मीमांसा करना उसका एकमात्र कार्य रह गया था, पर कहीं पर भी अपने अतीत को विचारने के बाद उसे ऐसा कुछ नहीं मिला था, जिस कारण वह निवृत्ति पाने के लिए छटपटा उठे। यह जो कोई उसके भीतर एक हाहाकार मचा रहा है, वह उसका स्वाभिमान है, जिसे गर्हित जीवन बिताना स्वीकार नहीं।

प्रश्न-चिह्न बनकर चलना उसके अहं को तीव्र आघात पहुँचाना है, जिसे वह त्याज्य समझती है। नारी-जीवन की सहज-सुलभ ममता को भी वह विराग में परिवर्तित कर चुकी है। तब अब शेष क्या रह गया है? जिस पथ पर वह जाना चाहती है, उससे उसे विमुख नहीं किया जा सकता। यात्रा की तैयारी उसने कर ली है। साथ कुछ नहीं ले जाना है, यह शरीर भी नहीं। जो आज उसके भीतर जाग्रत है, चेतन रूप है वह पल-भर में निस्पन्द हो जायगा। सुमति तब नहीं रहेगी। उसका शव पड़ा रहेगा। वह शरीर जो भौतिक तत्वों में मिल कर अपना रूप खो देगा। फिर सारे संसार में ढूँढ़ो, सुमति नहीं मिलेगी। इसी शरीर से विश्वास ने मन की तुष्टि चाही थी, वह उसे नहीं मिली। तभी तो वह भटक रहा है और हर्ष ने···हर्ष ने उसकी अमरता को प्रश्रय दिया था। यों अमर कोई नहीं है। सभी कुछ नाशवान हैं। केवल एक ईश्वर है जो सर्वोपरि है, स्वयं-चालित है। मनुष्य की आत्मा उस महान् विभूति का अंश है, ऐसा ग्रन्थों में कहा गया है। फिर उसका अंश बिनी है। वह क्या उसे छोड़ जायगी? विश्वास का भी तो अंश उसमें विद्यमान है। होगा, वह मोह क्यों करने लगी है? क्या सुन रही है? मन के भीतर कोई कह रहा है—'हर्ष को दुख होगा। झूठ है। उन्हें क्यों होगा दुख? मैंने उनसे दूर-दूर रहकर उन्हें क्या सुख दिया, जो वे दुखी होंगे। उस दिन जरूर उनका आलिंगन चाहा था, पा लिया। सुमित्रा देखती रही थी। उसे जरूर बुरा लगा होगा। नारी स्वभाव से ईर्ष्यालु है। सुमित्रा दीदी, अब सुख भोगो हर्ष के साथ। मैं तुम लोगों के मार्ग में बाधा बनकर नहीं रह सकूँगी। एक दीवार थी जैसे—बालू की जो ठहर ही नहीं सकती थी। हवा के साथ बनी कि ढह गई और यह अतृप्ति—मरु भूमि सी अतृप्ति—इसे लेकर वह जा रही है। तम और धुएँ की घुटन सा यह जीवन बादल बनकर उड़ता जायगा। ऐसा बादल···होगा, उसके लिए वह क्यों सोचे? बादल अनेक प्रकार व रूप-रंग के होते हैं। सूर्य और हवा उन्हें बनाती-बिगाड़ती है। वे बादलों को देखेंगे। रोज देखते होंगे। वे मिलते तो पूछती—क्यों—यह दण्ड आखिर किसलिये? तुम्हारे मन के

आकर्षण को नहीं पा सकी, ठीक है; पर यही क्या सत्य है कि पुरुष का नारी के प्रति आकर्षण-आकर्षण है और उसका प्रतिरूप कुछ नहीं? यह कहाँ का न्याय है? इच्छा तो सभी में है। इच्छा होना स्वभाव है। तब नारी की इच्छा—उसका कोई मूल्य नहीं? एक बार तो सोचना था कि वह जीवन-सहचरी है। उसकी अर्द्धांगिनी है। क्या कहा—पुरुष को चुनौती है यह। ठीक है कह लो—तब इन संज्ञाओं को नष्ट कर दो न? ये प्राचीन ग्रन्थ, जो तुम्हारी संस्कृति के गौरव हैं, प्रतीक हैं, इन्हें भस्म कर दो। इनकी दुहाई क्यों देते हो? अरे मानव! क्यों विडम्बना के खेल खेलता है?'

हर्ष ने उसका कन्धा पकड़कर हिलाया। सुमित्रा प्रसन्न के साथ घूमने चली गई थी। बिनी को भी ले गई थी। अभी वे लोग लौटे नहीं थे। हर्ष अकेला था कमरे में। सुमति का हाथ अपने हाथ में लेकर पूछा—'क्यों चिल्ला रही थीं, सुमु? देखो मैं हूँ हर्ष, आँखें खोलो।'

सुमति ने उसका हाथ पकड़ लिया, फिर विक्षिप्तावस्था में बोली—'ओह! कितना शीतल है तुम्हारा हाथ हर्ष? अब तक क्यों नहीं मुझे इसका स्पर्श दिया? देखो, मैं कितनी गरम हूँ। जली जा रही हूँ। तुमने अभी पूछा था—मैं चिल्ला क्यों रही थी? अरे नहीं, तुम्हारे इसी हाथ का सहारा पाने के लिए तड़प रही थी। सुमित्रा दीदी को तुम जीवन-संगिनी बनाने जा रहे हो—बनाओ। मुझे कोई ईर्ष्या नहीं है। मैं तो विवाहिता हूँ। एक पति के जीते दूसरा पति नहीं कर सकती, पर समाज ने उन्हें इस बन्धन से मुक्त कर दिया है। तो हर्ष मेरे लिये क्या कहते हो? कौनसा आश्वासन है तुम्हारे पास?' फिर कुछ रुककर बोली—'अरे, क्या बक रही थी? तुम दोनों को मैं बहुत तंग कर चुकी हूँ। अब नहीं करूँगी। हाँ, वह हरबंस क्या कहती थी? उन्होंने मेरे विषय में बताया था उसे? वे उसे चाहने लगे थे। अब सुमित्रा दीदी पर निगाह जायगी। हर्ष कहे देती हूँ, बचकर रहना। मैं तो हूँगी नहीं। अपने आप-सम्भल कर चलना होगा। आँखें खोल रही हूँ। जरा सामने आ जाओ। देख लूँ जी भर कर।'

हर्ष ने उसका मुँह अपने ठीक सामने कर लिया, फिर कहा—'यह सब क्या है सुमु ? तुम इतना कैसे बदल गई हो ? अपने साथ ही मुझे भी क्यों मार रही हो ? फिर सुमित्रा भी नहीं बचेगी। मेरी बात सुनो, विश्वास बाबू से मिलने के बाद यह सब सोचना। वे तुम्हें अपनाने को तैयार हैं। सुमित्रा और प्रसन्न आ जायँ, फिर जेल मुलाकात करने चलें। सच मानो, वह तुम्हें देखकर बड़े प्रसन्न होंगे। उनकी सम्पदा उन्हें जैसी-की-तैसी वापस मिल गई है, यह क्या कुछ कम है ? देखो, वहाँ चलकर शान्त रहना। उन्हें समझने की कोशिश करना।'

सुमति ने आँखें खोल दीं। हर्ष के नेत्रों में निहारती हुई बोली वह—आज तुमसे पूछती हूँ, बोलो सच बताओगे ?'

हर्ष ने स्वीकृति से सर हिला दिया।

'तुम मुझे क्या हृदय से प्यार करते हो ?'

'हाँ'

'सुमित्रा दीदी से भी बढ़कर ?'

'यह मत पूछो सुमु। हर प्रश्न का उत्तर नहीं दिया जा सकता।' उसकी वाणी में दर्द था।

'तुम्हें दुख पहुँचा है इससे। ठीक है। प्रश्न गलत था। मुझे नहीं पूछना चाहिए था। एक काम करोगे ?'

'क्या ?'

'मेरा चुम्बन ले सकोगे।'

'सुमति, तुम होश में नहीं हो क्या ?'

'मैं होश में हूँ। यह देखो मेरा गाल। अब भी सुमित्रा दीदी का निशान बना है। मिटा नहीं। ऐसा ही निशान मैं तुम्हारा चाहती हूँ दूसरी ओर। यही एक निशानी—अमिट निशानी मेरे पास रह जायेगी अपने प्रिय-जनों की। लो जल्दी करो।' कहकर उसने अपना कपोल हर्ष के मुख के निकट कर दिया।

हर्ष कुछ निश्चय नहीं कर सका। सुमति क्या सचमुच पागल हो गई

है ? अपने आप में नहीं है ? कहीं आगे वह कोई और प्रस्ताव कर दे, तब क्या होगा ?

सुमति अपना कपोल उसके होठों से लगाकर बोली—'सोचते क्या हो, मेरी जलन का अनुभव नहीं करते ? ओह ! तुम्हारे होठ भी तो गरम हैं। क्यों मुझे तरसाते हो इस प्रकार, निष्ठुर देवता ? मेरा इतना कहना भी नहीं मानोगे ?'

हर्ष ने उसके कपोल को हटाया नहीं। उसे बार-बार चूमा, फिर कस-कर अपने दाँत का चिह्न गड़ा दिया।

सुमति ने अपने होठ उसके होठों से मिला दिए और वे दोनों आलिंगन में आबद्ध तब तक अपनी सुध-बुध खोये रहे, जब तक सुमित्रा कमरे में नहीं आ गई। प्रसन्न के साथ बिनी फल खरीदते समय रुक गई थी। उसने यह देखा तो पीछे लौट पड़ी। हर्ष ने देख लिया उसे। वह झपटकर सुमति से अलग हो गया।

सुमति ने निस्संकोच अपना वह गुलाबी कपोल, जिसमें दाँत के चिह्न पर हल्की गहरी लाली दौड़ चुकी थी, सुमित्रा को दिखाते हुए कहा—'देखो दीदी, ठीक है न ? तुम दोनों का स्मृति-चिह्न। अब तो इसे अपने साथ रख सकूँगी। बुरा मत मानना। मैंने ही हर्ष को इसके लिए मजबूर किया था। दोष सब मेरा है। मुझे क्षमा कभी मत करना, पर हर्ष से इसकी कभी चर्चा मत करना। शायद मन इसे आगे चलकर स्वीकार न करे। आह ! कैसी सुखद पीड़ा है ? मीठा दर्द—ही इसे कह सकती हूँ, क्यों न दीदी ?'

सुमित्रा लम्बी मंजिल तै कर लौटी थी। गोमती के किनारे की सड़क—फिर ब्रिज पार कर यूनिवर्सिटी तक हो आई थी। पैदल ही लौटी थी। थकी थी। सुमति के प्रश्नों का कोई उत्तर नहीं दिया। साथ ही जिस स्थिति में, उसने उन दोनों को देखा था, यह भी उसे अप्रिय लगा था। यह दूसरा अवसर है। पर उसने किसी विपरीत भाव को मुख पर नहीं आने दिया।

प्रसन्न के साथ बिनी भी आ गई। एक हाथ में ताजे खिले फूलों का

गुच्छा था और दूसरे में सेब। सुमति के निकट आकर वह उसे फूल दिखाने लगी, फिर पूछा—'यह खाओगी।'

'नहीं, तू खा बिनी, मेरी प्यारी बच्ची। तू भी ऐसे ही प्रसन्न रहे जीवन भर, जैसे ये हँसते हुए फूल।' उसने उसे गोद में उठाकर आशीर्वाद दिया।

सुमित्रा ने वातावरण को गम्भीर बनाते हुए कहा—''हर्ष बाबू, जेल मुलाकात करने के लिए नहीं चलना है क्या? चलो, नाश्ता कर जल्दी हो आयें। सुना है यहाँ की जेल भी दूर है। आओ सुमु, आज तेरा शृङ्गार मैं करूँगी। कामदेव को परास्त करना है।'

सुमति ने पूछा—'कौन परास्त करेगा? तुम या मैं?'

सुमित्रा उसके इस प्रकार के तर्क से तंग आ गई थी। रोष में भरकर बोली—'हाँ मैं करूँगी परास्त उन्हें। साथ तो चलेगी या वह भी नहीं?'

'चलना होगा इसलिये चलूँगी। एक बार जेल का क़ैदी-रूप जो देखना है? वैसे भी वर्षों से नहीं देखा है।'

प्रसन्न को अब बोलना पड़ा, कहा—'चलो मेज़ पर, फल मैं ले आया हूँ। चाय बनाकर क्या होगा? बिनी के लिए बिस्कुट भी ले आया हूँ।' फिर मेज़ के पास पड़ी कुर्सी पर बैठता बोला—'आज तो भई थक गया। कई मील का पैदल चक्कर लगाना पड़ा। सुमित्रा ने नहीं माना—आगे ही बढ़ती गई। चलो, आधा लखनऊ तो घूम लिया।'

हर्ष उसके पास आ बैठा, कहा—'अभी कहाँ से आधा लखनऊ देख लिया? शाम को मैं ले चलूँगा। इस बार टैक्सी कर ली जाय। आसानी से सब कुछ देखा जा सकेगा।'

सुमित्रा और सुमति भी कुर्सियों पर आ बैठीं। एक बड़ी प्लेट में सारे फल रखे थे, उसी में से उठा-उठाकर सब खाने लगे। बिनी बाहर बरामदे से भीतर कमरे का चक्कर लगाती रही।

हर्ष ने कुरसी छोड़ते हुए कहा—'मैं चलकर ताँगा लेता हूँ, तुम लोग आ जाओ। देखो, पाँच मिनट से अधिक नहीं लगना चाहिए। साढ़े सात

हो गया है। आठ के बाद वहाँ पहुँचेंगे।'

प्रसन्न ने कहा—'हाँ, चलो मैं सबको लेकर आता हूँ।'

हर्ष चला गया। सुमित्रा बैठकर सुमति का शृंगार करने लगी। बक्स खोलकर अपनी रुचि की साड़ी निकाली, उससे मिलता हुआ ब्लाउज़। बालों को बड़ी तन्मयता से सजाया और विनी के लाये हुए फूलों में से दो रंगीन फूल जूड़े में लगा दिए। हिदायत कर दी कि विश्वास के सामने भी सर न ढँके। मुख पर फ़ेस-क्रीम, रूज़, लिपस्टिक सभी का प्रयोग किया। शीशे में अपना रूप देखकर सुमति बोली—'यह क्या किया दीदी? मैं तो अपने रूप पर आज स्वयं ही मोहित हूँ। मेरे पैर धरती पर नहीं पड़ रहे हैं। क्या मैं इतनी सुन्दर हूँ, सच? फिर कपोलों पर हाथ फेरती बोली—'वाह, निशानों को खूब छिपाया है? क्या कोई जान सकेगा? वे कम-से-कम आज तो मुझे पाना ही चाहेंगे। हाँ, तुम क्या पहनोगी दीदी?'

'मैंने पहन लिया है, जो पहनना था। देख न? मुझे कौन अपने प्रीतम से मिलने जाना है? तू अपनी बात कर। तुझे तो उन्हें रिझाना है।'

सुमति ने देखा—और वह देखती रह गई। सुमित्रा ने जार्जेट की फ़ालसई रंग की सादी साड़ी पहनी थी। ठीक उसी रंग का ब्लाउज़ था। कानों में गोल कुण्डल लटक रहे थे। मुख पर अकृत्रिम आभा थी। पाउडर, रूज़, क्रीम कहीं कुछ नहीं था।

प्रसन्न ने देखा—तैयारी हो गई है, बोला—'चलो अब, हर्ष रास्ता देख रहा होगा।'

सब लोग चल पड़े। इस बार प्रसन्न ने कमरे में ताला लगाया। हर्ष सड़क के किनारे ताँगा के पास खड़ा था। उसमें सब बैठ गए। ताँगा को तेज चलाने को कह दिया गया।

रेलवे ब्रिज पार कर सड़क साफ़ मिली। घोड़ा तेज कदमों भागने लगा। बीच-बीच में वह फुरफुराता जाता था। हर्ष को लगा कि जैसे एक ताल पर घोड़े की टापें पड़ रही हैं और संगीत के लय के साथ वे मिश्रित हो गई हैं। उसे एक बहुत पहले का अपना लिखा गीत स्मरण हो आया,

जिसमें उसने प्रियतम से मिलने जाने वाली एक अभिसारिका का चित्र खींचा था। वह उसे गुनगुनाने लगा। चारों प्राणियों में सबसे अधिक उमंग उसी में लग रही थी। विश्वास सुमति को फिर से ग्रहण करने की प्रतिज्ञा कर ले तो वह भी उसके जीवन से हट जाने की प्रतिज्ञा कर लेगा। उसी के कारण तो यह सब हुआ है। आज उसकी परीक्षा है।

ताँगा जेल वाली सड़क के किनारे रुक गया। सब लोग उतर पड़े। हर्ष ने ताँगे वाले से वापस ले जाने के लिए भी कह दिया था। वह निश्चिन्त हो बीड़ी निकालकर फूँकने लगा।

कुछ देर प्रतीक्षा करने के बाद विश्वास से मुलाकात करने वालों के नाम पुकारे गये। सुमति और सुमित्रा दोनों ने आज प्रथम बार जेल देखा था। इतनी लम्बी ऊँची दीवार जिसके भीतर सैकड़ों मानव बन्दी के रूप में रखे गए हैं। बाहर उनसे मिलने आने वालों का ताँता लगा है। अपना नाम बताकर और अपने अँगूठे में निशान लगवाकर ये लोग भीतर घुसे। कैदी-जेल वार्डर सब दो सुन्दर स्त्रियों को जेल में आया देखकर उन्हें देखने लगे। कानाफूसी होने लगी। सुमति को देखकर कुछ बदमाश कैदियों ने भद्दे इशारे किये। वे उत्तेजित हो उठे थे। उनकी वासना, जो जेल की कोठरियों में बन्द रहने से सुप्त पड़ी थी, आज सहसा उद्दीप्त हो उठी। सुमति को एक प्रदर्शनी-सा समझकर सब लोग पास से घूरते हुए निकलते थे। उसे यह सब बड़ा असह्य लग रहा था।

विश्वास को इन लोगों ने लाये जाते देखा। ठीक उसी भाँति हाथ-से-हाथ बँधे उसे लाया जा रहा था। मैले कपड़े थे। दाढ़ी के बाल पहले से छोटे थे। बीच में एक बार बनाई जा चुकी थी। नंगे पैर—घुटनों तक धोती—कैसा भद्दा रूप था? सुमति के आँसू आ गये। विश्वास को लाकर घेरे से बाहर बिठाया गया। आज उसका हाथ दूसरे हवालाती कैदी के हाथ से बँधा था जिसका मिलने वाला अभी तक आया नहीं था। उसने सर उठाकर एक बार सबकी ओर निहारा, फिर दृष्टि नीची कर ली। उसे अपने इस वेश पर बड़ी लज्जा लग रही थी।

हर्ष ने बताया—'ये हैं सुमति, बिनी की माँ। ये सुमित्रा, प्रसन्न बाबू की बहन। यह प्रसन्न बाबू, इन्हें तो जानते होगे, और यह नन्हीं बिनी। मैं हर्ष हूँ।'

विश्वास ने नमस्कार कर लिया। आँखें फिर भी नहीं मिला सका। सुमति यह आज कैसी आकर्षक बनकर आई है? शायद उसे धोखा देने आई है। मन ने कहा—'आ बिनी, तुझे गोद में लेकर चूम लूँ, मेरी बच्ची। अब तो तू बड़ी हो गई है? अपने अभागे पिता की ओर देख एक बार। क्या डर रही है मुझसे? तभी अपनी मा से चिपटी है। प्रसन्न से एक-दो बार भेंट हो चुकी है। पर यह सुमित्रा कौन है? इसे नहीं देखा पहले कभी? साधारण वेश है, फिर भी मनमोहक है। प्रसन्न की बहन है। प्रसन्न हर्ष का मित्र है, घनिष्ट मित्र। सुमित्रा अभी अविवाहिता है। ठीक है। हर्ष तुमने बड़े पुण्य किए हैं। उनका सुख भोगो। एक मैं हूँ जो जेल में सड़ रहा हूँ। अपना-अपना भाग्य है।' उसकी स्वास इतनी गहरी थी कि इन लोगों को साफ़ सुनाई दे गई।

हर्ष ने कहा—'हम लोग उधर हुए जाते हैं, सुमति से बातें कर लो। बिनी की ओर देखो न? अब दो-एक दिन में छूटने वाले हो। मजिस्ट्रेट की आज्ञा आने वाली है। आगे का अपना तय कर लो, कहाँ रहना होगा, क्या करना होगा? सुमति साथ रहेगी बराबर।' कहकर सुमित्रा और प्रसन्न के साथ वहाँ से हट आया।

पड़ोस का क़ैदी रोने के स्वर में कह रहा था—'मेरी स्त्री आने वाली थी, वह नहीं आई। यह पड़ोसी फिर आ रहा है?'

विश्वास सोचने लगा—एक वह है जिसकी स्त्री मिलने आई है, और वह उससे नहीं बोल रहा है और दूसरा वह क़ैदी है, जो अपनी स्त्री के मिलने न आने पर रो रहा है। स्थिति दोनों क़ैदियों की एक-सी है। दोनों हत्या के अपराधी हैं।

उस व्यक्ति ने बिना कुछ सोचे-समझे सीधी भाषा में कह दिया—'तुम्हारी स्त्री ने कहा है कि वह अब तुम्हारा काला मुँह नहीं देखेगी।

तुमने उसे छोड़कर जो पाप किया है, उसी का फल भोगो। वह अपना दूसरा विवाह कर लेगी।'

वह कैदी फूट-फूटकर रोने लगा।

सुमति को बड़ा असह्य लग रहा था यह सब। साहस कर पूछा—'यहाँ तकलीफ़ तो बड़ी रही होगी? कल-परसों तक आशा है छूट जाओगे।'

'मैं नहीं छूटना चाहता।' विश्वास ने रोष से कहा—उसकी आकृति बड़ी भयानक हो गई थी। 'जरा अपनी ओर, घर से चलने के पहले एक बार देखा था? एक मेरा रूप, और दूसरा तुम्हारा। कोई जानेगा तो क्या कहेगा? मुझे जलाने आई हो, क्यों? पति जेल में बन्द है और पत्नी शृंगार कर पर-पुरुषों के साथ घूमती है। अभी तक हर्ष था, अब प्रसन्न और बढ़ गए हैं। हटो, मेरे सामने से। आग लगे तुम्हारे इस रूप में। इसीलिए मैंने तुम्हें छोड़ा था।

सुमति सुनती खड़ी रही। सारे कैदियों और मुलाकातियों के बीच उसे तिरस्कृत और अपमानित किया गया था। सुमति तू डूब मर। अब तेरा जीना निर्लज्जता है। उसका सर चकराने लगा। वहाँ से किसी प्रकार हट आकर हर्ष से बोली—'मुझे चक्कर आ गया है। मैं यहाँ बैठती हूँ। तुम्हें वे बुला रहे हैं। दीदी तुम भी जाओ। प्रसन्न भइया मेरे पास रहेंगे।'

हर्ष घेरे के पास चला गया। सुमित्रा भी पीछे से पहुँच गई। विश्वास का भाव तत्काल परिवर्तित हो गया। हर्ष ने पूछा—'क्या निश्चय किया विश्वास बाबू?'

उसने कहा—'ठीक है। मैं तो तुम्हारे साथ रहूँगा। और सुमित्रा देवी आप क्या पढ़ती हैं?'

'जी नहीं, म्यूज़िक सीख रही हूँ। रेडियो आर्टिस्ट बनूँगी। वैसे अवसर मिला तो राजनीति में भी पड़ने का विचार है।'

'बहुत अच्छा है। मेरा भी विचार 'पालिटिक्स' की ओर है। हाँ, कहाँ रहना होगा?'

'इलाहाबाद।'

'जगह ठीक चुनी है आपने। बड़ा 'स्कोप' है। आपसे मिलना हुआ करेगा। मैं भी वहीं जमने की सोच रहा हूँ। वैसे यहाँ से जाने के बाद प्रोग्राम बनेगा।'

हर्ष के साथ ही सुमित्रा ने भी अनुभव किया कि विश्वास उसकी ओर आकर्षित हो गया है। यही सुमति ने कहा था। उससे बचना कठिन है। सुमति से उसने बात नहीं की होगी और की होगी तो अपमानित और लाञ्छित किया होगा। इसीलिए उसे चक्कर आ गया है। उसने सुमित्रा से कहा—'जाओ सुमति की तबियत खराब हो गई है। उसे सम्भालो। हाँ विश्वास बाबू, बिनी को भी प्यार नहीं करोगे?'

विश्वास—पाषाण हृदय विश्वास—चरित्रहीन और पथ-भ्रष्ट विश्वास ने न तो सुमति की बीमारी पर कोई चिन्ता प्रकट की और न बिनी से स्नेह दिखाने की आतुरता। वह सुमित्रा की ओर टकटकी लगाए रहा।

हर्ष ने घड़ी की ओर देखा—मुलाकात का समय पूरा हो रहा था। एक क्षण वह रुका। घण्टी बज गई। आगे बिना बोले वह नमस्ते कर लौट चला। फिर कुछ ध्यान आ गया। अपने होटल का नाम व कमरे का नम्बर बताकर सुमति की ओर बढ़ गया।

सुमित्रा के साथ सबने देखा—वह उसकी ओर देखता हुआ हवालाती बैरक में वापस जा रहा था। क्षुद्र प्राणी, अभी तेरी आँखें नहीं खुलीं। तेरी कौन गति होगी?

## ३५

मार्ग में कोई किसी से कुछ न बोला। सुमति की अवस्था चिन्ताजनक

हो चली थी। सुमित्रा उसे सम्भाले थी, पर वह जैसे अपना शरीर ही नहीं सारी संज्ञा खो चुकी थी। होटल में लाकर उसे चारपाई पर लिटा दिया गया। उसका मुख मलिन हो गया था और जो भाव बिखर गए थे, उन्हें देखकर यह लगता था कि सुमति को अपार पीड़ा सता रही है जिसे सहन करने में वह असमर्थ होती जा रही है।

हर्ष, प्रसन्न, सुमित्रा सभी चारों ओर बैठे थे। सुमित्रा ने उसे धैर्य बँधाने का असफल प्रयास करते हुए कहा—'हिम्मत क्यों हारती हो सुमु? जीवन में विश्वास करो। साधना निष्फल नहीं जाती। तुमने जो तपस्या की है, उसे अपूर्ण मत छोड़ो। देखो मेरी ओर। मेरा कहना तो न टालो बहन!'

हर्ष ने कहना चाहा—'विश्वास ने जो-कुछ कहा होगा मानसिक उद्विग्नतावश। उसे भूल जाओ। मन पर पत्थर रखकर मनुष्य को, जो-कुछ वह नहीं चाहता सुनना और करना पड़ता है। हरबंस की ओर देखो। उसके पास क्या शेष रह गया? उसने उस स्थिति को भी सहन किया? फिर वह स्थिति भी सामने आई जब उसकी बुद्धि ने असीम साहस दिया और फिर उसी कलंकी को समाप्त कर दिया। दूसरी स्त्री होती तो उसके साथ अड्डे पर जा बैठती।' पर वह अपना मुँह नहीं खोल सका। लगा जैसे किसी ने उस पर जादू कर दिया है और वह बोल भी नहीं पा रहा है।

प्रसन्न की मुद्रा विशेष रूप से गम्भीर दिखाई दे रही थी। वह क्या सोच रहा है, यह कोई नहीं जान सका।

सुमित्रा ने आगे कहा—'एक बार कह चुकी हूँ, अब फिर कहती हूँ। तुमने अपने को कुछ कर लिया तो मैं भी जीती नहीं बचूँगी। विश्वास बाबू को आ जाने दो। मैं वहाँ उनसे क्या कहती? मैं जानती हूँ कि वह मेरी ओर आकर्षित हुए हैं, पर क्या मुझे किसी भी रूप में पा सकेंगे? नहीं सुमति। यों वह मन से चाहे मुझमें ही लिप्त रहें। मैं उन्हें मार्ग पर लाऊँगी। वे निश्चय ही सुधर जायँगे। तुम्हारा सहयोग भी मुझे चाहिएगा।'

सुमति बोली नहीं फिर भी। एक बार दृष्टि उठाकर सबकी ओर देख

लिया, फिर आँखें मूँद लीं। सबसे चले जाने का संकेत कर दिया।

उसके पास से दूर आकर सुमित्रा ने कहा—'हालत ठीक नहीं है। डॉक्टर को लाना होगा।'

हर्ष तुरन्त डॉक्टर को लेने चला गया।

सुमित्रा ने प्रसन्न से अधीर होकर कहा—'क्या होगा अब भइया? सुमति चली गई तो हर्ष को कितना दुःख होगा, इसे क्या कोई जान सकता है? वे उसे बहुत प्यार करते हैं। उसके लिए अविवाहित रहे। बोलो भइया, क्या होगा? मैं उन्हें नहीं समझा पाऊँगी। बेचारी बिनो—उसके लिए मुझसे कह दिया है कि अपने पास रख लूँ। हाय, मेरा तो···।'

''चुपो सुमित्रा।' प्रसन्न ने उसे रोकते हुए कहा। 'अभी क्या हुआ है? फिर दौरा आया है। इस बार जरा तेज़ है। ऐसे क्या मनुष्य मर जाता है? ठीक हो जायगी।'

सुमित्रा ने निरुत्साहित होते हुए अवसाद से कहा—'मुझे तो लक्षण ठीक नहीं लगते। ऐसे ही 'हार्ट-फ़ेल' हो जाता है। उसे प्रसन्न करना चाहिए। किसी प्रकार उसके मानसिक विचारों की गहनता में मनोरंजन उत्पन्न किया जाय।'

प्रसन्न सोचने लगा।

हर्ष डाक्टर को ले आया था। उसने परीक्षा लेकर बताया कि दशा में सुधार भी हो सकता है और एकदम 'हार्ट-फ़ेल' भी हो जाय तो भी सन्देह नहीं किया जा सकता। उसे किसी प्रकार हर्ष का समाचार सुनाइए। सम्भव है वह उसमें डूबकर अपना मौन भंग कर दे।

डॉक्टर चला गया।

सुमित्रा ने बाथ रूम में जाकर उसे भीतर से बन्द कर लिया और वह सिसक-सिसक कर रो पड़ी। सुमति का अन्त क्या इस प्रकार होना है? निरीह और अकिंचन बेचारी का जन्म इसीलिए हुआ था कि जिससे हृदय से स्नेह करे, उसके साथ रहकर भी उसकी छाया से बची रहे। कलंकित होने का भय हर समय मन में रखकर जीवन उत्सर्ग कर दे। उपेक्षित और

तिरस्कृत सुमति, तेरा नारी जीवन वह घटना है, जो अपनी हूक सदैव उठाता रहेगा।

हर्ष डाक्टर को भेज कर लौट आया। उस दिन-भर सुमति की दशा नहीं सुधरी। रात भर सुमित्रा और हर्ष बारी-बारी से उसके पास बैठे रहे। सुमति कभी-कभी आँख खोलती, कुछ अस्फुट स्वर से कहने का प्रयत्न करती, उसके होंठ चलते हुए दिखाई देते, किन्तु सुनाई कुछ नहीं देता। पुकारने पर वह आँखें खोल देती—वे आँखें जो ज्योतिहीन-सी लगने लगी थीं और जिनमें शून्यता छा गई थी। एक दिन में ही ऐसा लगता था जैसे वह महीनों की रोगिणी है और अपनी जीवन-लीला समाप्त कर रही है। अभी सबेरे जो हास बिखरा दिखाई देता था, वह सब विषाद में परिवर्तित हो गया था। मृत्यु नहीं थी, पर उसकी विभीषिका अभी से चारों ओर अपना साम्राज्य बिखेर चुकी थी।

हर्ष अभी जाकर सोया था। सवेरे के चार बज रहे थे। सुमित्रा उसके पास बैठी थी। अचानक उसने अपना हाथ सुमित्रा की गोद में डाल दिया। वह चौंक उठी। देखा—सुमति नेत्र खोले उसकी ओर देख रही है। ऐसी टकटकी लगाए जो पलकें झपकती ही नहीं थी। आँखों की पुतलियाँ चल रही थीं, उनमें आँसू डबडबा आए थे। क्षण-भर में कोरों से आँसू बहने लगे। सुमित्रा घबड़ा गई। वहीं से हर्ष को दो—तीन बार पुकारा। वह जाग गया।

दोनों सुमति की चारपाई से सटकर बैठ गए।

सुमति की आँखों से आँसुओं का वेग अभी चल रहा था। सुमित्रा का सारा अंचल भीग गया और उसके अपने आँसू भी निकलने लगे। हर्ष ने किसी भाँति अपने को संयत कर कहा—'तुम्हारी पीड़ा से हम लोग भी दुखी हैं, सुमति। बोलो हमें क्या करने को कहती हो? मैंने आज तक तुम्हारी कोई बात नहीं टाली है।'

सुमति धीरे से क्षीण स्वर में बोली—'एक बात को छोड़कर।'

'क्या?'

'तुमने मेरे बार-बार कहने से भी अपना विवाह नहीं किया। तुम अपना घर बसा लेते हर्ष तो शायद मैं नहीं मरती, पर जो विधान है होगा वही। हम-तुम उसे बदल नहीं सकते। उसके अनुसार ही चलना होगा।'

हर्ष नीचा सर किए उसके दूसरे हाथ को अपने हाथ में लिए रहा। वह बार-बार उसे दबाता, फिर चाहता कि उसे चूम ले। कोमल अँगुलियाँ—सुन्दर कलाई, अभी उनमें जीवन है।

सुमति ने आगे कहा—'मैं अभी मरूँगी नहीं। एक बार अपने संस्कारों वश उनका दर्शन करके ही मेरे प्राण निकल सकेंगे। वे भी तो इतने सहज चाहने पर नहीं निकल पाते। अपने बस में मरना होता तो कभी की चली गई होती। ओह, सर दर्द से फटा जा रहा है। सीने में रह-रह कर कोई सुई चुभो रहा है। मीरा ने सच कहा था—घायल की गति घायल जाने...। अभी सबेरा होने में देर है। मेरा प्राण-दीपक देखो कब बुझे? अरे, क्या सोच रही थी, और क्या कह रही हूँ। दीदी लाना तो अपना हाथ। हर्ष इसे पकड़ लो ठीक है। अब तुमने मेरी कोई बात नहीं टाली। अब मैं कह सकती हूँ कि तुम्हें मुझसे प्रीति है—सच्ची प्रीति हर्ष, जिसके लिए मैं कलंकिनी पुकारी गई।'

उसने उन दोनों हाथों की अँगुलियों को चूम लिया, फिर उन्हें अपने वक्ष तक ले गई। उसी समय उसके मुख से एक कराह निकल गई।

हर्ष ने पूछा—'क्या है सुमति?'

'कुछ नहीं, यह तो होना ही था। मैं तुम दोनों के मिलन पर बेहद खुश हूँ, इतनी खुश कि प्रसन्नता के स्थान पर पीड़ा से कराह उठी। और कुछ मत सोचना। मन की प्रवृत्ति कभी-कभी उच्छृङ्खल हो जाती है कि बस में नहीं आती। मैं सोचा करती थी कि जिसके कारण मुझे तिरस्कृत किया गया है, फिर एक दिन परित्यक्त भी कर दिया गया, वह मेरा है, सदैव रहेगा। उसकी छाया में मैं जीवन के दिन बिता सकूँगी। पर एक दिन पढ़ा कि वह पराया हो गया है। मेरा तब सोचना सर्वथा गलत था कि वह आजीवन मुझे अपनी आराध्य देवी मानकर पूजता रहे। वह भी तो मनुष्य

है। उसकी भावनाएँ हैं, उमंगें हैं। वह किसी के पीछे, जो उसे प्राप्त नहीं हो सकी, और अब जिसे केवल देखने का अधिकार है, छूने का नहीं, क्यों अपना जीवन मरुभूमि सा तपने के लिए बना दे ? उसे भी लहलहाता हुआ उपवन, सुवासित मलय पवन चाहिए। अपनी इच्छाओं का दमन वह क्यों करे ? भावुकता के पीछे चला नहीं जा सकता। यही स्वाभाविक है कि मनुष्य प्रीति का दान-प्रतिदान ले। फिर उसके तृप्त जीवन में कमल खिलें सुन्दर-आकर्षक, यही जीवन की सार्थकता है, उसका सत्य रूप है। भटकते रहना, अब मैं समझ रही हूँ भीरुता है। मनुष्य पूर्ण होने के लिए जन्मा है। पूर्णता प्राप्त कर वह अपने उद्देश्य को पा सकता है। तुमने ठीक किया हर्ष, यह सब होना अनिवार्य था। दीदी तुमने इन्हें नया जीवन दिया है। कभी दुखी मत करना। समझ गई हो इन्हें, ठीक वैसे ही चलना, जैसे ये कहें। अब तक कोई इनका अपना नहीं था संसार में। मैं थी··· क्या अब भी इनके होने का मोह घेरे है ? रे मन, अब अशान्त न हो। माया-ममता से तेरा पीछा छुड़ा कर तुझे फिर शान्ति की गोद में सुलाने चल रही हूँ।'

'हर्ष रो पड़ा। सुमति के वक्ष पर अपना सर रख दिया।

सुमति अब सँभल गई थी। उसे उठाते हुए कहा—'छिः बच्चों की भाँति रोते हो हर्ष ? चुप हो, मुझे छुओ मत। मेरा मोह न जगाओ। चलते समय मुझे बन्धन तोड़ने की शक्ति दो। दीदी, उठाओ इन्हें। यह तो अवसर था जो इतना कह-सुन सकी। हाँ, दीदी कोई गीत सुनाओगी ? बिनी को हर्ष 'जर्नलिस्ट' बनाना चाहते हैं और तुम म्यूजिक सिखाना चाहती हो। ईश्वर करे, दोनों की साध पूरी हो। पर इतना मेरा भी कहना रख लेना कि उसे मेरे विषय में कुछ मत बताना। कभी नहीं। बड़ी हो जाय तो भी नहीं।'

हर्ष ने सर उठा लिया फिर विह्वलता से उसका हाथ चूमने लगा।

सुमति का हाथ तभी अपने कपोलों पर पहुँच गया। वे दोनों निशान अभी विद्यमान थे। बहुत हल्का-सा दर्द वहाँ पर दबाने से होता था। उस

डीस में सुमति को जो तृप्ति मिलती थी, वह अवर्णनीय थी।

सुमित्रा प्रकृतिस्थ होकर गाने लगी थी।

स्नेह-दीपक बुझ रहा सखि—

बीच में गाते-गाते उसका गला रुँध गया। उसने देखा सुमति अचेत-सी पड़ी है और हर्ष उसे एकटक निहार रहा है। वह 'हाय सुमति' कहकर चीख उठी।

उस समय बाहर पक्षी बोलने लगे थे और रात की नीरवता जन-कलरव से गुंजारित होने लगी थी। पर सुमति का प्राण-दीप विश्वास की प्रतीक्षा में अपनी बाती जलाये जा रहा था।

# ३६

दोपहर में सुमति की दशा शोचनीय लगने लगी थी। अब वह न तो नेत्र खोलती थी और न बोलती थी। बिनी बार-बार उसके पास जाकर रोने लगती थी। अबोध बालिका संसार को नहीं जानती थी, पर यह अवश्य समझती थी कि उसकी माँ को कुछ हो गया है। प्रसन्न उसे बहला रहा था।

उसी समय दरवाजे पर किसी की आहट पाकर हर्ष ने उधर देखा—हरबंस थी, साथ में आनन्द भी था। दोनों मुस्कराते हुए कमरे में घुसे, किन्तु यहाँ का वातावरण देखकर उनके मुख भी अवसाद से व्यथित हो उठे। सुमति की यह दशा कैसे हो गई, यह हरबंस नहीं समझ पा रही थी। पूछा तो हर्ष जो बता सका, बता दिया। एक नारी के स्वाभिमान को जब ठेस लगती है, तब वह जो कुछ भला-बुरा करने पर उतारू हो जाती है,

इसे वह स्वयं ही जान पाती है। उसके भीतर जो प्रतिक्रिया की भावना व्याप्त हो जाती है, उसका परिणाम अशुभ होता है।

हरबंस ने पूछा—'और विश्वास बाबू, वे क्या अभी छूटे नहीं?'

'हाँ, मैं भी आ गया हूँ।' कहता विश्वास कमरे में घुस आया। सब लोग उसकी ओर देखकर रह गये।' कहाँ एक बन्दी का वेश था, और कहाँ अब वह बन-ठनकर आया था। बुश-शर्ट और पैण्ट पहने था। दाढ़ी-मूँछ साफ थी।

हरबंस उससे बोली नहीं। घृणा से उसकी ओर देखकर मुँह फेर लिया।

सुमित्रा ने सुमति के कान में कुछ कहा, जिसे सुनकर उसके हाथ उठे, फिर गिर गये। एक बार उसने पलकें खोलीं, मुँह से कुछ कहना चाहा, पर सब व्यर्थ हुआ। वह चिर-शान्ति पा गई।

हर्ष ने कहा—'विश्वास बाबू……।' आगे वह नहीं कह सका। सुमित्रा के साथ ही फूटकर रो पड़ा। प्रसन्न और आनन्द ने सुमति के शव को पृथ्वी पर लिया, फिर शाल से उसे ढक दिया।

हरबंस और आनन्द, सुमित्रा और हर्ष को चुप करने लगे। विश्वास खड़ा रहा कुछ क्षण। सुमति के शव की ओर भी उसने नहीं देखा। उसके मुख का भाव ज्यों-का-त्यों रहा। जैसे सुमति की मृत्यु उसकी विवाहिता पत्नी की मृत्यु—उसके लिए एक साधारण बात थी। मानो कोई अपरिचित मरा हो जिससे उसका कोई नाता-रिश्ता नहीं था।

उसने सुमित्रा से कहा—'इलाहाबाद में आपसे मुलाकात हुआ करेगी, सुमित्रा देवी। भूलिएगा नहीं।' कहकर वह सारे लोगों को उपेक्षा की दृष्टि से देखता हुआ बाहर चला गया।

उसी समय कमरे की दीवार में लगा दर्पण गिरा और टूटकर टुकड़े-टुकड़े हो गया। सब मौन थे केवल हर्ष और सुमित्रा आँसुओं की सरिता बहा रहे थे। पड़ोस के कमरे से रेडियो गा रहा था—

जगत माया का सपना है।

प्रसन्न ने विश्वास को लौटते देखकर अस्फुट स्वर से कहा—'जा विश्वास, पाषाण हृदय मानव, तू भी जीवन-भर अशान्त रहेगा। अब तू जिसे पाना चाहता है, वह अब तेरे लिए मरीचिका सिद्ध होगी और तू मरुभूमि में अपने जीवन को इसी प्रकार निरुद्देश्य बिताता रहेगा। सोच, सुमति अब नहीं लौटेगी। लाख ढूँढ़ने पर भी उसे नहीं पाएगा तू। जीवित जिसकी उपेक्षा की, मृत्यु के बाद भी तू उसे छोड़कर चला गया—रे निष्ठुर! ......। आज नहीं तो एक दिन तू कर्म-फल में अवश्य विश्वास करेगा।'

रेडियो पर संगीत-ध्वनि अब भी बज रही थी।

'जाओ सुमति, तुम्हारी चिर-शान्ति भंग न हो। तुम सारे भौतिक संतापों से मुक्त हो। तुमने नारी-स्वाभिमान की रक्षा की। जैसा कुछ ठीक समझा किया। तुम्हारी स्मृति हमें......। सुमित्रा आगे नहीं कह सकी। एक बार शाल उठाकर उसके मुख को देखा, फिर ढक दिया।